श्रीराजलक्ष्मी।

उपन्यास।

प्रथम खण्ड।

(बङ्गभाषासे अनुवादित।)
मडेल भगिनी, काजलचोर, चन्द्रभूषण परिसाम्बस,
गङ्गागोपाल प्रभृति उपन्यास लेखक
द्वारा विरचित।

कलकत्ता,
१८।२ भवानीचरण दत्त ष्ट्रीट, हिन्दी बङ्गवासी
इलेक्ट्रो मेशीन प्रेसमें
श्रीनटवर चक्रवर्त्ती द्वारा मुद्रित
और प्रकाशित।

सम्वत् १९५२।

मूल्य २) दो रुपया।

अट्टालिकाके निकट पहुंची। राजभवन सरीखा प्रासाद है। उसके सामने फुलवारी, सरोवर, देवालय, अतिथिशाला, नौबत खाना और बड़ा भारी आंगन——है नहीं क्या? मल्लोंके लड़नेका अखाड़ा अलग,—नाचने और गाने बजानेका स्थान स्वतन्त्र,—एक साथ दो हजार आदमियोंके भोजन करनेकी जगह जुदा, ब्राह्मण पण्डितोंके बैठकर विचार करनेका स्थान स्वतन्त्र,—पूजा पाठकी जगह अलग,—है नहीं क्या? इसके बाद अन्दरमहल। वह भी बड़ा भारी और कई खण्डोंमें विभक्त है।

देखते हैं,—वृद्धा इसी राजभवनमें जाना चाहती है। इतनी देरमें समझा, बुड्ढी इसी घरकी लौंडी है। मालूम होता है, राजकन्या सबेरे ही गङ्गाजलसे स्नान करती है। इसीसे दासी पवित्रतापूर्वक जल लाती है।

वृद्धा मकानके अन्दर गई। फुलवारीमें कोई नहीं दीखता,—माली कहां गये? जाड़ेका सबेरा है न?—अत्यन्त जाड़ेके मारे माली लोग अभी काममें नहीं लगे।

सदरमहलके दूसरे दरवाजे,—सिंहद्वारमें,—वृद्धाने प्रवेश किया। यहां एक नवदूर्वादलश्याम, दीर्घकाय, विशालवक्ष, भीमाकृति, लोहितलोचन पुरुष खड़ा है। उमर चालीससे अधिक है। देह सुडौल, सुदृढ़—कटि केशरीसदृश,—तेज और फुर्तीकी मूर्त्ति। जवानीके आरम्भमें यह आदमी कैसा सलवान रहा होगा, इस समय यही विचारनेकी इच्छा होती है। मालूम होता है, यह राजभवनका पुराना दरबान है।

वृद्धाको नेरे देखकर इसने साष्टाङ्ग दण्डवत् किया। राह

दोनो पाव और अङ्गुलियोंको देखनेसे मालूम होता है, कि वृद्धा गौराङ्गी है। उमर पचाससे अधिक होनेपर भी मालूम होता है, कि वृद्धाको देहमें बल है।

मा। राहमें तो इस वक्त कोई आदमी नहीं है। फिर तुम भींगे कपडेसे सारा शरीर ढांके क्यों जा रही हो, मा। तुम्हारी उमर इतनी अधिक हो गई है, तो भी तुम घूंघट क्यों काढे हो, मा। तुम खुद क्यों पानी ढोती हो? इतना बडा घडा उठा ले जाना क्या तुम्हारा काम है? क्या तुम्हारे घरमे लौंडी नहीं है, मा।

मा। बडा जाडा है। एक सूखा कपडा क्यों न लेती आई। उसे पहनकर जानेमें तो इतना कष्ट न होता, मा। क्या तुम्हारे पास और दूसरा कपडा नहीं है?

इतना सबेरे स्नान क्यों मा? अभी रात ही है। चिडिया भी अभी नहीं बोलती। क्या यह स्नान करनेका समय है? कुछ धूप निकलनेपर स्नान करनेसे तो इतना कष्ट न होता?

किन्तु वृद्धा अच्छी तरह जा रही है। चाहे जाडेसे थर थर कांपती हो, चाहे घडेके बोझसे ही डग मारती हो, पर जा रही है वह अच्छी तरह। नहीं, नहीं, मानो वृद्धाको बडा कष्ट मालूम हो रहा है। कांपना और हिलना—क्या कष्टके चिन्ह नहीं हैं?

पौष मासमें बड़े तडके ही वृद्धा इस भांति पाव मील चली आई। धीरे धीरे आकाश साफ हुआ। चिडिया चहचहाने लगी। राहमें दो एक आदमी देख पडने लगे। वृद्धाने और

अट्टालिकाके निकट पहुंची। राजभवन सरीखा प्रासाद है। उसके सामने फुलवारी, सरोवर, देवालय, अतिथिशाला, नौबत-खाना और बड़ा भारी आंगन——है नहीं क्या? मल्लोंके लड़नेका अखाड़ा अलग,—नाचने और गाने बजानेका स्थान स्वतन्त्र,—एक साथ दो हजार आदमियोंके भोजन करनेकी जगह जुदा, ब्राह्मण पण्डितोंके बैठकर विचार करनेका स्थान स्वतन्त्र,—पूजा पाठकी जगह अलग,—है नहीं क्या? इसके बाद अन्दरमहल। वह भी बड़ा भारी और कई खण्डोंमें विभक्त है।

देखते हैं,—वृद्धा इसी राजभवनमें जाना चाहती है। इतनी देरमें समझा, बुड्ढी इसी घरकी लौंडी है। मालूम होता है, राजकन्या सबेरे ही गङ्गाजलसे स्नान करती है। इसीसे दासी पवित्रतापूर्वक जल लाती है।

वृद्धा मकानके अन्दर गई। फुलवारीमें कोई नहीं दीखता,—माली कहां गये? जाड़ेका सवेरा है न?—अत्यन्त जाड़ेके मारे माली लोग अभी काममें नहीं लगे।

सदरमहलके दूसरे दरवाजे,—सिंहद्वारमें,—वृद्धाने प्रवेश किया। वहां एक नवदुर्वादलश्याम, दीर्घकाय, विशालवक्ष, भीमाकृति, लोहितलोचन पुरुष खड़ा है। उमर चालीससे अधिक है। देह सुडौल, सुदृढ़—कटि केशरीसदृश,—तेज और स्फूर्तिकी मूर्ति। जवानीके आरम्भमें यह आदमी कैसा बलवान रहा होगा, इस समय यही विचारनेकी इच्छा होती है। मालूम होता है, यह राजभवनका पुराना दरवान है।

वृद्धाको नेरे देखकर इसने साष्टाङ्ग दण्डवत् दिया। राह

छोड़कर अलग खड़ा हो गया। कुछ बोला भी नहीं। केवल टक लगाये बड़े घड़ेकी ओर ताकता रहा।

यह क्या? दरवानने लौंडीको प्रणाम क्यों किया?

अधिकतर आश्चर्य्यकी बाततो यह है, कि सदरखण्डमें जीव मात्रका समागम नहीं है। घूंघट उठाकर वृद्धा शिर झुकाये सदरखण्डसे चली जाती है। अन्दर जानेकी राहमें वृद्धाने देखा, कि पांच वर्षकी एक लड़की दौड़ी चली आती है। उसने हंस और क्रोधसे आकर वृद्धाको घूसा मारनेके लिये हाथ उठाया।

वृद्धा। हमे मत छूना। अभी पूजा समाप्त नहीं हुई।

बालिका। मा! तू बता, इतनी देर करके क्यों आई?

वृद्धा। गङ्गा क्या नेरे हैं, बेटी।

बालिका। मा! तुम्हें देरी हुई, यह देखकर बहू कितना रोई है। बोल, अबतो देर न करेगी? नहीं तो अभी घूसे लगाती हूं।

वृद्धा। नहीं, बेटी। अब देर न होगी।

इस तरह बातचीत करते करते वृद्धा आगे बढ़ी जाती है। इसी बीचमें एक अर्द्ध अवगुण्ठनवती स्त्री शुद्ध वस्त्र धारण किये आई और घड़ेको लेकर वृद्धाके पीछे पीछे जाने लगी। जिस कोठरीमें पूजाकी तय्यारी हुई है, उसीमें घड़ेको रख-दिया। बहूने धूप धूना—गूगुलमें आग छोड़ दी। एक सत्तरह वर्षके लड़केने आकर वृद्धाके निकट बिल्वपत्र आदि पूजाकी सामग्री रख दी। वृद्धा देवीओके सामने पूजा करनेके लिये बैठ गई।

दूसरा परिच्छेद।

वृद्धा गृहस्वामिनी है। बधू,—वृद्धाके प्रथम पुत्रकी सहधर्मिणी है, बालिका,—बधूकी कन्या है, बालक—वृद्धाका छोटा लडका है। बधू—सधवा है, पर स्वामी नहीं है—आज सालभरसे अधिक हुआ वह न मालूम कहां चले गये हैं। किसीको कुछ भी मालूम नहीं है। बालिका अभ्यासदोषसे अपनी पितामहीको मा कहकर पुकारती है,—अपनी माको बहू कहती है।

वृद्धाका नाम कात्यायनी है और पौत्रीका लक्ष्मी। पतोहूका नाम यशोदादेवी है। निरुद्दिष्ट ज्येष्ठ पुत्रका नाम है भवानीप्रसाद मिश्र और छोटे लडकेका रमाप्रसाद। और वह भीमाकृति पुरुष जिसने सिंहद्वारके निकट वृद्धाको प्रणाम किया था, मकानका दरवान है। जातिका गोआला,—नाम रघुदयाल है। उसकी मा उसे "निरहू" कहकर पुकारा करती थी।

वृद्धाका मकान,—फुलवारी, तालाब मिलाकर प्रायः आधा गांव घेरे हुए था। मकानकी चारो ओर दीवार खिंची हुई थी। ऐसे भारी घरमें केवल तीन स्त्रियां—रमाप्रसाद और रघुदयाल दो पुरुष,—इन पांच आदमियोंके सिवाय और कोई नहीं रहता। केवल रघुदयालके यत्न और गुणसे मकान अभी वैसा श्रीहीन नहीं हुआ,—भग्नदशा नहीं बना। रोज कुछ कुछ बालू चूना गिरता है सही, पर रघुदयाल उसे उठाकर

फेंक देता है। रघुनाथने चमगीदड़ोंको घोंसला बनाने नहीं देता। उन्हें गुलेल मारकर खदेड़ बाहर करता है, पर कबूतरोंको कुछ नहीं कहता। गृहस्वामिनीकी भी आज्ञा है, कि कबूतरोंके साथ छेड़छाड़ मत करो। रघुदयालने एक किनारे उनके रहनेके लिये स्थान बना दिया है। वहीं बयाने व थोड़ा बहुत उन्हें दाना भी देता है। मदरखण्ड और अन्दरमहलमें अगर कबूतर जाते, तो रघुदयाल हाथ नचाकर उन्हें उड़ा देता था। बड़े भारी उद्यानमें अनेक प्रकारके फलके पेड़ थे। अब एक भी नहीं है। बत्तीस माली थे। अब केवल रघुदयाल है। फिर उद्यानकी सुरक्षा कैसे हो? जब कभी कोई फूलका पेड़ सूख जाता, तब रघुदयाल उसे काट कर फेंक देता था, कभी कभी गृहस्वामिनीके ईंधनके काम आता था।

इसी तरह एक वर्षमें सब पेड़ साफ हो गये। सिर्फ देवीपूजाके निमित्त कुछ पेड़ बचा रखे गये। वह उन्हें खुद सींचता था। सिवाय पुष्पवृक्षोंके और किसी किस्मका पेड़ उद्यानमें नहीं था। यदि था, तो केवल एक आमका पेड़। गृहस्वामीने उसे अपने हाथसे लगाया था। लोग कहते हैं कि ऐसा मीठा आम उस देशमें और नहीं था। वह खुद जालमें उसे तोड़ते, पाल रखकर पकाते, फिर देवताको अर्पण करते और ब्राह्मणोंको बाँट देते। अन्तमें गृहस्वामिनी कात्यायनीसे कहते,—"सब कोई आम पा चुका, अब तुम भी एक आम खा लो, तो हम भी चीखें।" कात्यायनी हँसकर कहती,—"आम खट्टा है, बिना प्रसाद बने मीठा नहीं होता। इससे आम मैं क्यों खाती?" आम जब पकनेपर होंगे, तब उनके ऊपर रेशमका जाल

द्वारा दिया जाता था। दो दरबान पहरा दिया करते थे। मालिक मौनेके पहले एक बार उस पेड़के पास जाते और रघुदयालसे कह जाते,—"देखना, एकरेयाँ वाही सो न जाय।" अब फल ढकनेके लिये वह रेशमी जाल नहीं है। रघुदयाल तीर कमान लेकर बन्दर और चिड़ियोंको दिनमें खदेड़ता है और रातमें दो तीन बार बादुरोंको उड़ा देता है।

अब भी आम उसी तरह पकता है। अब भी गृहस्वामिनी गावके सब देवतायों और ब्राह्मणों के यहां उसी तरह आम भेज दिया करती हैं। सब उसी तरह होता है, पर वह खुद अब आम नहीं चीखती। जब कभी पुत्रवधू यशोदा उन्हें आम खाने कहतीं, तब वह चमककर कहतीं,—"बहू आम मैं नहीं खाती।" क्योंकि इसका मतलब नहीं समझती थी। सास की बात काटना अनुचित समझकर वह चुप रह जाती। और आम पड़ा रहता था,—बड़ी दरबान रघुदयाल। गृहस्वामिनीके अनुरोध करनेपर वह हाथ जोड़ता था। बहुत जिद करनेपर आम लेकर सिर चढ़ाता और कहता—"मा! जिस आमको मालिक बहुत प्यार करते थे, उसे हम कैसे खाय?" इतना कहते कहते रघुदयालके आंखोंसे आंसूकी झड़ी लग जाती थी। मालकिन फिर वहां न ठहरतीं, लौटकर घर चली जातीं।

रघुदयालकी बेटाके महेश्वर नाम रहता है। पहले मन सौसे भरा था,—अब नहीं है। अब महजी छोटीसा आदमी भी नहीं है, महजी बड़े ही कहांसे? पहले शायद आधीरातक कुटम्बी कुछ आदमी आते थे,—अब ...

नहीं दीखता। सन्नाटेका महाराज्य है। मालूम होता है, उस राह आदमी चलते हो नहीं। चलनेपर भी कोई उस मकानकी तरफ शिर उठाकर देखता नहीं, देखनेपर भी लक्ष्य नहीं करता। शायद उस भवनके ऊपर होकर चिड़िया भी नहीं, उड़ती। सब कुछ था,—सभी चला गया। अथवा है सब कुछ पर है कोई नहीं। उस समय मित्र थे, स्वजन थे, गुरु थे; पुरोहित थे, साले थे, बहनोई थे,—और भी कितने ही थे,—अभी हैं सभी,—पर है कोई भी नहीं। अब यदि रघुदयाल भी अलग हो जाय, तो सोलहो कला पूरी हो जाय।

तीसरा परिच्छेद।

हाय! क्यों और किस तरह ऐसा हुआ? किसके दोष, किसके पाप, किसके अभिशाप, किस बुरे कर्मफलसे यह सोनेका संसार,—यह स्वर्णप्रतिमा मट्टीमें मिल गई। हाय! कौन इसका कारण बता देगा।

जमीन्दारी थी, तिजारत थी, कम्पनी कागज था, नौकरी थी, किसानी थी, घाकी सैकड़ों मोरिया बधी रखी थीं, अब कुछ भी नहीं है। आज दो वर्ष हुए, मालिककी मौत हो गई,—मानो जादूके मन्त्रसे सब उड़ गया। अगणित दास दासियां थीं, सोलह दरवान थे, कलमधारी कर्मचारी तीसवें

काम न थे, हाथी थे, घोड़े थे, गावें थीं। अतिथिशालामें नित्य ही पचीस अतिथियोंकी सेवा होती थी, देवसेवाके लिये बारह ब्राह्मण नियत थे, सौ भिखरियोंको रोज डेढ़ मान चावल दिया जाता था। गृहकी अधिष्ठात्री देवी शङ्करीकी सेवामें प्रतिदिन हादश बलिदान होते थे, अब वह सब कुछ भी नहीं है। कभी रहा, कि नहीं, उसका चिन्ह भी शायद नहीं है।

मालिकका नाम था,—शङ्करीप्रसाद। वह शान्त और सुप्रसन्न पुरुष थे। उनका ललाट उन्नत, नेत्र उज्ज्वल और वर्ण तप्तकाञ्चन सरीखा था। वह ब्राह्ममुहूर्त्तमें उठते और पूजा तथा होम समाप्तकर सबेरे आठ बजे जब सदरमहलमें पहुंचते, तब उनका तेज पुञ्ज कलेवर देखकर ऐसा मालूम होता था मानो कोई राजर्षि पृथ्वीपर पैदा हुए हैं। उनके गांव तथा आसपासके गांवके आदमी,—अदालतमें मुकद्दमा करने न जाते थ,—शङ्करीप्रसाद ही उनके विचारपति धम्मावतार थे।

इस परम भाग्यवान पुरुष शङ्करीप्रसादकी मृत्यु हुई। दो वर्ष बीतते बीतते सब स्वाहा हो गया। हे मनुष्यो! वृथा अभिमान मत करो। ऐश्वर्य्यशाली होकर कभी ऐश्वर्य्यका घमण्ड मत करो। विचारो, यह केवल छायामात्र है, कविकी कल्पना है, आकाश कुसुम है। यह विकारग्रस्त रोगीका दुःस्वप्न अथवा माया है,—"ब्रह्मादि स्तम्बपर्य्यन्त मायया कल्पित जगत्।"

शङ्करीप्रसादने सबका उपकार किया। जिस जिलेमें वह

रहते थे, यदि उसमें असुवध उपस्थित होता, तो अस्पताल खुलवा देते थे। जहां पानीका अभाव होता, वहां तालाब खोदवा देते थे। यदि कोई कन्यादान करनेके लिये धन मांगने आता, तो वह अवस्था देखकर व्यवस्था करते थे। अगर वह किसी रईसको ऋणके कारण जेल जाते देखते, तो खुद रुपया चुका देते थे। बहुतोंको उन्होंने माता पिताके ऋणसे मुक्त किया था। गुरुको भूमिदान देकर धनी बना दिया था। पुरोहितको कई मञ्जिलका मकान बनवा दिया था। पण्डित ब्राह्मणोंको बराबर दान देकर परितुष्ट करते थे।

सुसाहब होनेपर भी शङ्करीप्रसाद बड़े हिसाबसे चलते थे। उनकी बुद्धिकी धार छुरेकी तीक्ष्ण धार जैसी थी। अनेक विषयोंमें बहुदर्शिता भी थी। वह अकेले धन उपार्जन करके इतने ऐश्वर्यके अधिपति हुए थे। तेरह वर्षकी अवस्थामें आबकारी विभागके किसी दारोगाके तम्बाकू भरनेवाले मुहर्रिर थे। यहीं उन्होंने पढ़ना लिखना अच्छी तरह सीखा। वह बङ्गला और फारसी जानते थे। अन्त अवस्थामें कुछ अङ्गरेजी भी सीख ली थी। सतरह वर्षकी उमरमें उन्हें पुलिस विभागमें हेडकानिष्टबलकी नौकरी मिली। बीस वर्षकी अवस्थामें दारोगा हो गये। एक वर्षके बाद मेदनीपुरके पास किसी हासान कम्पनीकी नीलकोठीके दीवान मुकर्रर हुए। पांच वर्षके उपरान्त उन्होंने नौकरी छोड़कर व्यापार करना आरम्भ किया। व्यापार होसे उनकी विशेष वृद्धि हुई। नमकका रोजगार करके एक वर्षमें चार लाख रुपया कमाया। तब वकालतकी परीक्षा देकर वकील बन गये। दो सालके अन्दर,

जिलेमें वह सर्वप्रधान और प्रथम वकील हो उठे। आमदनी भी खूब होने लगी। आमदनीके साथ साथ खर्च भी ज्यादा था। आजकल अनेक वकील कमाते हैं सिर्फ स्त्रीके गहने अथवा कम्पनी कागजके लिये। जिस समय शङ्करीप्रसाद सील कौड़ीके दीवाना हुए थे, उसी वक्त सहस्रो रुपये खर्च हो उन्होंने गृहकी अधिष्ठात्री देवी शङ्करीके लिये एक बड़ा भारी मन्दिर बनवाया था। अब रुपया कमानेपर देवमन्दिरकी बात तो दूर रहे कोई तालाब भी नहीं खुदवाते। इस समय धन उपार्ज्जन करनेपर मकान, घड़ी गाड़ी, जोड़ी,—बाकी रह जाता है सिर्फ एक रस्सा।

आजकल अतिथिशालामें अतिथिसेवाके बदले चन्देकी चहीमें सही की जाती है। मुठी भर भीख देनेकी जगह गर-दनिया दी जाती है। इस समय अनेक हाकिम वकील, व्यवसायी, जमीन्दार रोजगार करते हैं,—रोजगारके लिये। सभी लोग रोजगार करते थ,—क्रियाकलापके लिये, पूजा पर्वोत्सवके हेतु। इस समय भी उत्सव होता है सही, किन्तु पैत्रिक देवीको घरमें न लानेसे स्त्रियां क्रोध करती हैं,—इसीसे मालिक धर्म-कर्मका भार औरतोंपर छोड़कर सबेरेसे दश बजे राततक केवल रोजगार होकी चिन्तामें चूर रहते हैं। नखसे शिखतक केवल चिन्ता,—केवल पैसा, केवल ताम्रखण्ड, केवल रजतखण्ड, केवल छपा हुआ कागजखण्ड। किन्तु क्यों पैसा, क्यों रुपया और क्यों कागज,—इसके लिये एकबार भी चिन्ता नहीं करते। दोनो आखें मुंदनेपर ही अन्धकार छा जायगा, यह उन्हें कभी ख्याल ही नहीं होता। सिर्फ कम्पनीके घरमें रुपया डाल देनेसे क्या होगा, भाई? शङ्करीप्रसादके तो सब कुछ था, पर

इस समय वह कहां चला गया, भाई ? नक़द रुपये थे, चांदी सोनेके बरतन थे, मोहर थे, ज़मीन्दारी थी, व्यापार था, सभी था,—फिर बताओ तो सही, उनकी मृत्युके बाद देखते ही देखते सब स्वाहा क्यों हो गया ? भला बताओ तो उनकी स्त्री राजराजेश्वरी होकर आज भिखारिणी क्यों हो रही है ? राजराजेश्वरी,—आज बगलमें घड़ा दबाकर गङ्गाजल क्यों लाती है ? राजराजेश्वरी,—आज माड़ भात क्यों खाती है ? राजराजेश्वरी,—आज गङ्गास्नान करके भींगा वस्त्र पहने ही घर क्यों आती है ? राजराजेश्वरीके आज और दूसरा वस्त्र क्यों नहीं है ? राजराजेश्वरी,—चूल्हेपर हांडी चढ़ाकर तीसरे पहरतक जल क्यों गर्म्म करती है ? रघुदयाल तीसरे पहरतक चावल क्यों नहीं जुटा सकता ? सब कर्म्मफल है,—

सुख दुख सकल कर्म्मफल भारी ।
कोउ राजा कोउ रङ्क भिखारी ॥

इसीसे, कहते हैं धन बटोरनेमें सुख नहीं है,—सुख है सद्व्ययमें। कर्म्म कर जाओ, शास्त्रानुमोदित कर्म्म कर जाओ, देवसेवा, अतिथिसेवामें तत्पर होओ, सुमार्गमें रक्षामें मन लगाओ, तुम्हारा धन सार्थक होगा।

शङ्करीप्रसादकी सारी सम्पत्ति किस तरह उड़ गई, इसके कहनेकी आवश्यकता इस समय नहीं है। समय आने पर सब मालूम हो जायगा। इस वक्त इतना ही समझ रखिये, कि कात्यायनी आज दाने दानेके लिये तरस रही है। भाद्र मासकी भरी पूरी गङ्गा आज बारि हीना,—अन्नपूर्णा हठात् आज अन्नहीना हैं।

चौथा परिच्छेद।



सचमुच ही भीगा कपड़ा पहने कात्यायनी शङ्करीके समीप हाथ जोड़े ध्यानमें निमग्न है। उसे पूजा, जप, होम, आराधना, ध्यान आदिमें प्रायः साढ़े तीन घण्टे लगते थे। भीगा वस्त्र देह हीमें सूखता था। उसके दूसरा कपड़ा एकदम था ही नहीं, ऐसा नहीं था, एक था, पर वह छोटा और पैवन्ददार था। वधू यशोदा सिलाईके काममें बड़ी निपुण थी। उसने फटे कपड़ेको स्थान स्थानपर सी डाला था और जहां जहां जरूरत थी, पैवन्द भी लगा दिया था। रफू और सिलाई करनेपर भी वस्त्रका छः आना अंश नहीं था। जितना बहुत फट गया था, उतना फाड़कर गमछा बना लिया गया है। बाकी बचा हुआ अंश पांच हाथसे अधिक न होगा, फिर उससे लज्जा किस तरह निवारण हो सकती है? लाचार कात्यायनी गङ्गातटसे भीगा कपड़ा पहने आती और उसी तरह ध्यानमें निरत हो जाती।

सास पूजापर बैठ गई। अब दस बजेतक वह निश्चिन्त है। इधर मानो "अमचिन्ता चमत्कारा!"—घरमें चावल नहीं, नमक नहीं, तरकारी नहीं, तेल नहीं, है सिर्फ थोड़ीसी खेसारीकी दाल। यशोदा रसोई बनाती और यह देखती, कि घरमें कौन चीज है, कौन नहीं है,—कात्यायनीका इस विभागमें कोई सम्पर्क न था। कुछ रात रहते ही कात्यायनी गङ्गा

स्नान करने गई है और इधर यशोदा, घरमें कुछ भी नहीं है, यह देखकर बैठी रो रही है। "मा गङ्गास्नान करके जब आवेंगी, तो कैसे कहूंगी, कि आज खानेके लिये घरमें कुछ भी नहीं है। लक्ष्मीका दूध भी गोआलिनने कलसे बन्द कर दिया है। यह किस तरह पूछूंगी, कि पहर दिन चढते चढते लक्ष्मी क्या खायगी। मा जब पूजा समाप्त करके उठेंगी और यह सुनेंगी, कि आज देवसेवा और भोजनके लिये चावल नहीं है, मोदी सीधा देता नहीं, पड़ोसी उधार देते नहीं, तब उन्हें कितना कष्ट होगा। वह कष्ट हमसे कैसे देखा जायगा।"—इसी तरहकी अनेक बातें विचार विचारकर यशोदा पिछली रातसे बैठी केवल रो रही है।

सबेरे लक्ष्मीने उठकर यशोदासे पूछा "बहू! तू रो क्यों रही है?" यशोदाने असली बातको छिपाकर कहा,—"मा गङ्गास्नान करने गई हैं, बड़ी देर हुई अभीतक आईं नहीं, इसीसे रो रही हूं।" यही कारण है, कि लक्ष्मी अपनी दादीको अन्दर आनेकी राहमें घूमा मारने गई थी।

धीरे धीरे धूप निकल आई, आठ बज गये—लक्ष्मी माताका अञ्चल पकड़ कर खड़ी हुई और बोली,—"मा! भूख लगी है। कुछ खानेको दे न।" यशोदाने लड़कीके हाथसे अञ्चल छुड़ा लिया। कुछ दूर जाकर उसने कहा,—"देती हूं, बेटी।" मुंहसे और बोली न निकल सकी, आंखोंमें, आंसू आते देखकर वह रसोईघरकी ओर भाग गई।

कन्यालक्ष्मी, "बहू! कहां भागी जाती है?" कहकर माताके पीछे पीछे दौड़ी। माता—लड़कीको आते देखकर

बहुत घबराई और आँचलके कोनेसे आँख पोंछने लगी, पर वह जल क्या पोंछा जा सकता है। जितना पोंछती है, उससे दुगुना जल बहता है, मानो जलकी झड़ी लग गई है,—संसारमें किसे ताकत है जो उसे रोक सके? देखते देखते कन्याने आकर फिर माका आँचल पकड़ा और कहा,—"अरी! यह क्या? तू रोती है क्यों?"

मा। (रोती हुई) नहीं बेटी! रोती नहीं हूं।

कन्या। यह जो रो रही है। अगर फिर रोई, तो जाकर मासे कह आऊंगी।

इतना कहते कहते बालिकाकी आंखें डबडबा आईं। माको रोती देखकर कौन लड़की नहीं रोती? लक्ष्मीकी आंखोंसे आंसूकी धारा बहने लगी। इसके बाद रोनेका सुर बंधा। माने उसे गोदमें उठा लिया, मुख चूमा और कहा,—बेटी! रो मत! रोती क्यों है?

कन्या। तू ही क्यों रोती है?

माताने इस बातका कोई जवाब न देकर लड़कीको गोदमें उठा लिया और रसोईघरमें चली गई। रसोईघर ऐसा वैसा नहीं, बहुत भारी है। इसमें पांच हजार आदमियोंकी रसोई एक साथ बन सकती है। अनेक बड़े बड़े चूल्हे हैं। कहीं माड़ पसानेका स्थान है, कहीं भात रखनेके लिये मक्र मरमरके बड़े बड़े चहबचे हैं और कहीं तरकारी और लकड़ी रखनेकी जगह है। पाकगृह वैसाही विस्तृत और सुसज्जित बना है, पर उपकरण नहीं हैं।

इस अपूर्व रसोईघरके एक बड़े चूल्हेके पास माता बेटीको

गोदमें लिये बैठ गई। लड़की गोदसे उतरकर इधर उधर खेलने लगी। बालिका दौड़कर कभी चबूतरेपर चढ़ जाती है, कभी पत्थरोंमें कूदती है और कभी चूल्हेमें छिपकर माको उ—उ—करके पुकारती है।

जननी यशोदा भी कुछ प्रसन्नास्य हुई। अब वह निर्मे मग्न लोचनोंसे उस अपूर्व भावराज्यकी शोभा निरखने लगी। जहां एक एक दिन पांच सात मन चावलका भात प्रस्तुत होता था, आज वहां पांच वर्षकी लड़कीके लिये पकानेको एक मुठी अन्न नहीं है। सर्वग्रासक कालने सब कुछ हर लिया है।

खाली पेट खेलना अच्छा नहीं लगता। थोड़ी ही देर खेलकर लड़कीने कहा,—"मा! गोआलिन अबतक दूध क्यों नहीं दे गई? अच्छा, तबतक तू चूल्हा जला रख, दूध आते ही गर्म कर देना।"

अच्छा कहकर माता बालिकाको अकेली छोड़ वहांसे चली गई। जाकर उसने यह देखा, कि सासजीकी पूजा अभी समाप्त हुई है, कि नहीं। पूजा तबतक खतम नहीं हुई थी। रघुदयालने जलानेके लिये लकड़ी तय्यार कर दी थीं, उसमेंसे अबतक कुछ बच रही है। चूल्हा जलानेके इरादेसे यशोदा लकड़ी चुनने लगी। चुनती थी और सोचती थी,—सिर्फ लकड़ी चुनकर क्या होगा? चूल्हा जलाने हीसे क्या फायदा है? कुछ फल नहीं, लाभ नहीं,—यह जानकर भी यशोदा लकड़ी चुनने लगी। अच्छी अच्छी लकड़ी लेकर रसोईघरकी ओर चली। खुद यशोदा लक्ष्मीके लिये रसोई बनाने जाती है, पर सिवाय लकड़ीके और कुछ नहीं है। हा

"मा! तू कहां जाती है, बोल? अभीतक दूध नहीं आया—मैं क्या खाऊं? बड़ी भूख लगी है।"

दादीके समीप आकर लच्मीने देखा,—तीन सन्यासी बैठे हैं। वृद्धाके इशारा करनेपर लच्मीने बारापारी सबको प्रणाम किया। सुन्दरी—सुलक्षणसम्पन्न बालिका देखकर सन्यासियोंने लच्मीके सिरपर हाथ रखा—शायद आशीर्वाद दिया,—हंसे,—वृद्धाको कहा,—माई। तुमने इस कन्याको पौत्री रूपमें पाया है, तुम धन्य हो। यह कन्या तो राजलच्मी है।" लच्मी,—यह निश्चय करके आई थी, कि चलकर दादीको खूब पीटूंगी, पर सन्यासियोंको देखकर भूल गई और दादीका दाहिना हाथ पकड़ कर सन्यासियोंको देखती खड़ी रह गई।

गोआलिन अबतक दूध नहीं दे गई, यह सुनकर वृद्धा मग्न हो गई। उसे क्रोध हुआ,—"क्या पैसा, नहीं मिला इसीसे गोआलिनने दूध बन्द कर दिया? दूधकी पोथी लच्मी बिना दूध कैसे बचेगी? अच्छा, यह बात अभी जाने दो,—यह जो अतिथि विमुख होते हैं, इसका क्या किया जाय?'

दादीने फिर लच्मीसे पूछा,—"सचमुच ही गोआलिन दूध नहीं दे गई।"

लच्मी। तो क्या मैं झूठ कहती हूं? दूधके वास्ते मैं बहूके पास कितना रोती रही, तो भी बहूने दूध न दिया। अच्छा मा! तू मेरे पेटपर हाथ रख कर देख न—मुझे कितनी भूख लगी है।

सचमुच ही लच्मीने वृद्धाका हाथ लेकर अपने पेटपर रखा। [illegible] रुक गया। आखें डबडबा आईं। उसने

कर कुछ सोचती सोचती धीरे धीरे सदर फाटककी ओर आ रही है। वहां पहुंच कर फाटक खुला पाया। मन ही मन कहा,—"रघुदयाल बाहर जाता है, पर फाटक बन्द करके नहीं जाता, किसके मनमें क्या है, सो कैसे कहूं? इस लिये फाटक बन्द कर रखना ही उचित है।"

वृद्धा फाटकके पास पहुंची थी, कि उधरसे तीन सन्यासी फाटक अतिक्रम करके भीतर चले आये। उनके शिरमें जटा, हाथमें कमण्डल, पीठपर बघछाला और कमरमें कोपीन थी। उन लोगोंने वृद्धाके समीप आकर कातर कण्ठसे कहा,—माई! बड़े भूखे हैं। आज दो दिनसे कुछ खाया पिया नहीं है।"

सन्यासीको देखकर वृद्धाने साष्टाङ्ग प्रणाम किया। फिर कहा,—"महाराज! आप लोग तालावपर इसी पेड़के तले बैठकर विश्राम कीजिये।"

पहला सन्यासी। माई! आज तीन दिन हुए देवताकी सेवा नहीं हुई। दूध और केला यदि घरमें हो, तो दे आ। देवताकी सेवा हो।

इतना कहकर प्रथम संन्यासीने एक शिवमूर्त्ति सामने रख दी।

वृद्धाने एकबार पीछे फिरकर देखा,—अपनी प्रकाण्ड अट्टालिकाकी ओर ताका, सोचा,—"क्या दूध होगा? क्या घरमें केले मिलेंगे? गोवालिन जो दूध सवेरे दे गई होगी उसे लक्ष्मी खा गई होगी।"

यह सोचते सोचते दूर हीसे देखा, कि लक्ष्मी मेरी ही ओर दौड़ी चली आती है,। दूर हीसे वह कहने लगी,—

"मा! तू कहां जाती है, बोल? अभीतक दूध नहीं आया—मैं क्या खाऊं? बड़ी भूख लगी है।"

दादीने समीप आकर लक्ष्मीने देखा,—तीन सन्यासी बैठे हैं। वृद्धाके इशारा करनेपर लक्ष्मीने पारापारी सबको प्रणाम किया। सुन्दरी—सुलक्षणसम्पन्न बालिका देखकर सन्यासियोंने लक्ष्मीके शिरपर हाथ रखा—शायद आशीर्वाद दिया,—हंसे,—वृद्धासे कहा,—माई! तुमने इस कन्याको पौत्री रूपमें पाया है, तुम धन्य हो! यह कन्या तो राजलक्ष्मी है।" लक्ष्मी,—यह निश्चय करके आई थी, कि चलकर दादीको खूब पीटूंगी, पर सन्यासियोंको देखकर भूल गई और दादीका दाहिना हाथ पकड़ कर सन्यासियोंको देखती खड़ी रह गई।

गोआलिन अबतक दूध नहीं दे गई, यह सुनकर वृद्धा मग्न हो गई। उसे क्षोभ हुआ,—"क्या पैसा नहीं मिला, इसीसे गोआलिनने दूध बन्द कर दिया? दूधकी पोषी लक्ष्मी बिना दूध कैसे बचेगी? अच्छा, यह बात अभी जाने दो,—यह जो अतिथि विमुख होते हैं, इसका क्या किया जाय?"

दादीने फिर लक्ष्मीसे पूछा,—"सचमुच ही गोआलिन दूध नहीं दे गई।"

लक्ष्मी। तो क्या मैं झूठ कहती हूं? दूधके वास्ते मैं बहूके पास कितना रोती रही, तो भी बहूने दूध न दिया। अच्छा मा! तू मेरे पेटपर हाथ रख कर देख न—मुझे कितनी भूख लगी है।

सचमुच ही लक्ष्मीने वृद्धाका हाथ लेकर अपने पेटपर रखा। वृद्धाका मुंह सूख गया। आंखें डबडबा आई। उसने

हाथ जोड़कर संन्यासियोंसे कहा,—"महाराज! शायद दूध घरमें नहीं है। रुष्ट न होइयेगा। मैं जाकर देखती हूं, यदि घरमें दूध होगा, तो पहले देवसेवाके निमित्त आपके पास भेज दूंगी।"

प्रथम संन्यासीने उत्तर दिया,—"माई! दूधके लिये चिन्ता मत करना। यदि दूध न हो, तो एक मुठी अरवा चावल ही यथेष्ट होगा।"

वृद्धा! महाराज! मेरे घरमें जो कुछ होगा, उसे देवता तथा आप लोगोंकी सेवाके लिये अभी लिये आती हूं।

छठा परिच्छेद।

वृद्धा अन्दरको चली। लक्ष्मी उसके बायें हाथकी दो अङ्गुली पकड़कर साथ चली। लक्ष्मीने कहा,—"मा! अगर तू घर जाकर मुझे खानेको न देगी, तो खूब पीटूंगी।"

वृद्धा। बेटी! तेरे चाचा कहां हैं?

पाठकोंको याद होगा, कि वृद्धाके छोटे लड़केका नाम रमाप्रसाद है। उमर सोलह वर्ष है। वृद्धाके बड़े लड़के भवानीप्रसादकी कन्याका नाम लक्ष्मी है, सो रमाप्रसाद हुए लक्ष्मीके चाचा।

लक्ष्मी। चाचाको सवेरेसे नहीं देखा।

वृद्धा। बेटी! तेरे सरदार—चाचा कहां हैं?

रघुदयालको लक्ष्मी सरदार—चाचा कहती थी।

लक्ष्मी। सरदार—चाचा न जाने कहां भाग गये, मा!—बहूने अभी उन्हें खोजा था,—मुझे भी खोजने कहा था,—बहुत ढूंढनेपर भी न मिले।

इस तरह बातचीत करते करते वृद्धा लक्ष्मीके साथ भीतर घुसी। अन्दर जाकर देखा, कि यशोदा बैठी रो रही है। उन्होंने पूछा,—"बहू! रोती क्यों हो?" बहूकी आंखोंसे और भी आंसू चलने लगे। वृद्धाने पूछा,—"तो क्या दूध नहीं आया? अबतक लक्ष्मीने कुछ खाया नहीं है?"

यशोदाके मुंहसे बोली न निकली। सिर्फ सिर हिलाकर बता दिया, कि अबतक लक्ष्मीने कुछ भी नहीं खाया।

वृद्धा। तो रोती क्यों हो—इस किस बातका है?—तुम्हारे यहां अन्नपूर्णा शुभचण्डी बैठी हुई हैं,—उनके रहते हम लोगोंको चिन्ता किस बातकी है?

यशोदा आंख पोंछने लगी। वृद्धा कहने लगी,—"आज तीन सन्यासियोंने अपने पदरजसे हमारे घरको पवित्र किया है। आज तीसरा दिन है कि उन लोगोंने कुछ भोजन नहीं किया। उनके इष्ट देवता उपवास किये हैं। यदि कुछ चावल हो, तो दो। मैं उन्हें दे आऊं। और लक्ष्मीके वास्ते झटपट भात बना दो। जल्दी चूल्हा जलाओ। जब जैसी अवस्था होती है, उसी भांति चलना भी पड़ता है। मा शुभचण्डीकी जैसी इच्छा होगी, वैसा ही होगा। इसके लिये दुःख कैसा? बहू। तुम रोओ मत। यह लक्ष्मी एक दिन राजराजेश्वरी होगी। लक्ष्मीको गोदमें ले लो,—"

यशोदाने लच्छीको गोदमें ले लिया, मुख चूमा,—धीरे धीरे, उसके कानमें कहा,—लच्छो! आज एकबार तू मेरा दूध पियेगी? बहुत दूध भरा है।"

लच्छोने चौथा वर्ष समाप्त कर पांचवेंमें पांव धरा है। आज आठ महीनेसे स्तनपान करना छोड़ दिया है, सुतरां स्तनपानका नाम सुनकर वह बड़ी विरक्त हुई—कहा, न! न! अब मैं तेरा दूध नहीं पीती। जा—जा तेरी गोदमें न बैठूंगी,—"

इतना कहकर लच्छी माताकी गोदसे उतर पड़ी।

वृद्धाने यशोदासे कहा,—"बहू! घरमें जो कुछ चावल हों, दो—दरवाजे भूखे अतिथि बैठे हैं। बहू! बोलती क्यों नहीं?"

यशोदाके मुंहसे और बोली न निकल सकी। मानो उसका कण्ठ रुद्ध हो गया। कलेजा धड़कने लगा। वह थर थर कांपने लगी। सिर घूम उठा। आखोंके सामने अंधियाली छा गई। क्षुधाव्यथाप्रपीड़िता लच्छीकी माता—अचेत हो कर सासके चरणोंपर गिर पड़ी।

अतिथिसेवाके लिये घरमें एक कनी भी चावल नहीं है, यह बात यशोदा माससे एकदम कह नहीं सकती, पर प्रश्नका उत्तर अवश्य ही देना होगा,—इन दोनोंके विषम आघातसे जर्जरित होकर चौथा रोना यशोदा घूमकर जमीनपर गिर पड़ी और अचेत हो गई।

सातवां परिच्छेद।



पुत्रवधूके मूर्च्छित होनेसे कात्यायनी और भी घबराई। भीत और चकित होकर कुछ देरतक वह किंकर्तव्य विमूढ़वत् खड़ी रही, फिर दौड़कर जल लाने गई।

हा लक्ष्मीकी जननी! हा यशोदा देवी! कुछ देरतक मूर्च्छित अवस्थाहीमें पड़ी रहो। इसीमें शान्ति है। तुम्हारे पतिका पता नहीं;—है, कि एकदम है ही नहीं,—इसकी मीमांसा कौन कर देगा? तुम आशापर हिम्मत बांधे बैठी हो—जितने दिन बीतते हैं उतनी ही तुम्हारी देह गली जाती है। सबेरे चिड़िया बोलती है,—तुम शिर उठाकर ऊपर ताकती हो—चिड़िया शायद तुम्हारे पतिका सन्देशा लाकर तुम्हें पुकार रही है। आकाशमें राकाशशि उदय होता है;—भावविह्वला पगली यशोदा सोचती है,—मालूम होता है, हमारे स्वामी इसमें झांक कर देख रहे हैं।

चिन्ता, अर्द्धाहार तथा अनाहारसे यशोदाकी देह बिलकुल सूख गई थी। आजका आघात और सहा नहीं गया,—इसीसे यशोदाको हठात् मूर्च्छा आ गई।

उधर कात्यायनी जल लाने गई और इधर उसका छोटा लड़का रमाप्रसाद आ पहुंचा। उसके हाथमें मट्टीका एक छोटा बर्तन है। उसमें क्या है, सो नहीं मालूम।

रमाप्रसाद जोरसे पुकार कर कह रहा है,—"मा!

मा! क्या हुआ? यह क्या हुआ?—वह इस तरह क्यों पड़ी है?'

कात्यायनी जल लेकर आईं और बोली,—"बहूको मूर्च्छा आ गई है। हठात् गिरकर अचेत हो गई है।"

रमाप्रसाद मातासे जल लेकर यशोदाके मुख और आंखपर छिड़काने लगा, पर मूर्च्छा न टूटी।

और कुछ देरतक मूर्च्छा बनी रही,—बहूकी मूर्च्छित अवस्था ही अच्छी है। इस मूर्च्छा—इस सुखनिद्राको कोई तोड़ो मत।

यशोदा—क्षीणा, दीना, मलिना, है—पाठकसे मालूम करते नहीं कह सकते,—आज तीन दिनसे यशोदाने एक तरह कुछ भी नहीं खाया है। चावल ज्यों ज्यों घटने लगा, चावल खरीदनेका पैसा ज्यों ज्यों कम होने लगा, त्यों ही त्यों वधू यशोदा अपना आहार घटाने लगी। "दो मुट्ठी चावल रखनेसे कल हमारी लक्ष्मी खायगी, तो हम दो मुट्ठी कम ही क्यों न खाय?"—इसी तरह पहले दिन दो मुट्ठी, दूसरे दिन तीन मुट्ठी और तीसरे दिन चार मुट्ठी चावल यशोदा घटाने लगी,—कन्याके लिये आधापेट खाकर यशोदा दिन काटने लगी,—उसकी देह दुःखी होने लगी।

दुर्बल देहमें आज भारी चोट पहुंची। यशोदाको मूर्च्छा आ गई। कमजोरीके कारण ही मूर्च्छा भङ्ग होनेमें इतनी देर हुई।

कात्यायनीकी चेष्टासे यशोदाको धीरे धीरे होश हुआ पर उसकी देह बहुत शिथिल और नाड़ी अत्यन्त ... योगोंमें जितना कष्ट होता है। सुपथ्य...

कात्यायनीने रमाप्रसादसे कहा,—"बेटा! क्या थोड़ासा भी दूध न मिलेगा? इस समय यदि थोड़ा गर्म्म दूध बहूको दिया जाय, तो देहमें कुछ ताकत आवे।"—

रमाप्रसाद। मा! दूध कहांसे आवे? आज सुबह हम लक्ष्मीके दूधके लिये बाहर निकले। कारण, थोड़ी देर होनेहीसे लक्ष्मी भूखसे कातर हो उठेगी—और दूध दूध हल्ला मचावेगी। कई घर घूमनेके बाद बहुतसे एक ग्वालेके यहाँ इतना दूध मिला है। पावभरसे ज्यादा न होगा।

रमाप्रसादने दूधका बरतन माताको दे दिया। उन्होंने बड़ी सावधानीसे उस बर्तनको पकड़ा,—क्योंकि उसका दाम इस समय लाख रुपया है।

बधू यशोदाने धीरे धीरे कहा,—"मुझे दूध न चाहिये,—मैं अच्छी हूं,—बल भी आया है;—आधे दूधसे अतिथि सेवा करो और आधा लक्ष्मीको दो,—"

कात्यायनी। यह! थोड़ासा दूध तुम भी पी लो,—बहू! तुम बचोगी कैसे? यदि देहमें बल न होगा तो बोल कैसे सकोगी?—कैसे उठने बैठने पाओगी?।

कात्यायनीके पाओंकी ओर देखती हुई यशोदाने हाथ जोड़कर कहा,—"मा! शरीरमें बल बहुत,—मेरी प्राणप्यारी लक्ष्मीके दूध पानेसे मेरे शरीरमें बल आवेगा। मेरे सामने लक्ष्मीको दूध पिलाओ,—मैं अभी उठ बैठती हूं।"

कात्यायनी। बहू! तुम, ,,कमजोर बहुत हो गई हो।

मा। क्या हुआ? यह क्या हुआ?—बहू इस तरह क्यों पड़ी है?

कात्यायनी जल लेकर आई और बोली,—बहूको मूर्छा आ गई है। एकाएक गिरकर अचेत हो गई है।

रमाप्रसाद माताके जल लेकर यशोदाके मुख और आँखपर छिड़कने लगा, पर मूर्छा न टूटी।

और कुछ देरतक मूर्छा बनी रही,—बहूकी मूर्च्छित अवस्था ही अच्छी है। इस मूर्छा—इस सुखनिद्राको कोई तोड़ा मत।

यशोदा—क्षीणा, दीना, मलिना, है—पाठकसे साहस करके नहीं कह सकते,—आज तीन दिनसे यशोदाने एक तरह कुछ भी नहीं खाया है। चावल ज्यों ज्यों घटने लगा, चावल खरीदनेका पैसा ज्यों ज्यों कम होने लगा, त्यों ही त्यों बधू यशोदा अपना आहार घटाने लगी। 'दो मुठी चावल रहनेसे कल हमारी लड़की खायगी, सो हम दो मुठी कम ही क्यों न खाय?'—इसी तरह पहले दिन दो मुठी, दूसरे दिन तीन मुठी और तीसरे दिन चार मुठी चावल यशोदा घटाने लगी,—कन्याके लिये आधापेट खाकर यशोदा दिन काटने लगी,—उसकी देह दुबली होने लगी।

दुबली देहमें आज भारी चोट लगी। यशोदाको मूर्छा आ गई। कमजोरीके कारण ही मूर्छा भङ्ग होनेमें इतनी देर हुई।

कात्यायनीकी चेष्टासे यशोदाको धीरे धीरे होश होने लगा, पर उसकी देह बहुत निर्बल और नाड़ी अत्यन्त क्षीण है;—बोलनेमें कितना कष्ट होता है। सुपथ्यकी आवश्यकता है।

कात्यायनीने रमाप्रसादसे कहा,—"बेटा! क्या थोड़ासा भी दूध न मिलेगा? इस समय यदि थोड़ा गर्म दूध बहूको दिया जाय, तो देहमें कुछ ताकत आवे। —

रमाप्रसाद। मा! दूध कहांसे आवे? आज सुबह हम लक्ष्मीके दूधके लिये बाहर निकले। कारण, थोड़ी देर होनेहीसे लक्ष्मी भूखसे कातर हो उठेगी—और दूध दूध हल्ला मचावेगी। कई घर घूमनेके बाद अन्तमें एक ग्वालेके यहां इतना दूध मिला है। पावभरसे ज्यादा न होगा।

रमाप्रसादने दूधका बर्तन माताको दे दिया। उन्होंने बड़ी सावधानीसे उस बर्तनको पकड़ा,—क्योंकि उसका दाम इस समय लाख रुपया है।

वधू यशोदाने धीरे धीरे कहा,—"मुझे दूध न चाहिये,—मैं अच्छी हूं,—बल भी आया है,—आधे दूधसे अतिथि सेवा करो और आधा लक्ष्मीको दो,—"

कात्यायनी। बहू! थोड़ासा दूध तुम भी पी लो,—बहू! तुम बचोगी कैसे? यदि देहमें बल न होगा तो बोल कैसे सकोगी?—कैसे उठने बैठने पाओगी?

कात्यायनीके आंखोंकी ओर देखती हुई यशोदाने हाथ जोड़कर कहा,—"मा! दासीको क्षमा करना,—मेरी प्राणप्यारी लक्ष्मीके दूध पीने होसे मेरे शरीरमें बल आवेगा। मेरे सामने लक्ष्मीको दूध पिला दो—मैं अभी उठ बैठती हूं।"

कात्यायनी। बहू! तुम बहुत कमजोर पड़ गई हो! मुंहसे बोली नहीं निकलती।

यशोदा। (आवाज भारी करके) देखो मा! मैं तो अच्छी

तरह बोल सकती हूं,—यह देखो मा। मैं अभी उठ बैठती हूं।

इतना कहकर ज्योंही यशोदा जल्दीसे उठने लगी, कि शिरमें चक्कर आ गया और धड़ामसे फिर गिर पड़ी और मूर्च्छित हो गई। फिर कुछ देरके लिये उसने सुख शान्ति लाभ की।

इसी समय अन्दरमहलके दरवाजेपर आकर अतिथियोंने जोरसे कहा,—"माई! यदि भिक्षा देनेमें कुण्ठित होओ, तो हम लोग दूसरा द्वार देखें। बहुत देर हुई जाती है। यदि दूध न हो, तो एक मुट्ठी चावलसे भी देवसेवा हो सकती है। हम लोग अधिक सामग्री नहीं चाहते। थोड़ी ही वस्तुसे अतिथि सेवा करो। अतिथिको विमुख मत फेरो। माई! अगर हम लोग लौट जायगे, तो तुम्हें पाप होगा। पीछे तुम्हें पाप होगा, इससे हम लौट भी नहीं जा सकते। माई! यदि एक मुट्ठी चावल देनेमें कुण्ठित हो, तो आधी मुट्ठी ही दो—इतने हीसे परितुष्ट होकर हम लोग चले जायगे।

कात्यायनीके कानमें यह आवाज पड़ी। उसने रमाप्रसादसे पूछा,—'घरमें चावल नहीं है क्या?'

रमाप्रसाद। एक दाना देखनेको भी नहीं है।

कात्यायनी। क्या यह मन आधसेर दूध देनेसे न होगा?

रमाप्रसाद। मेरी बुद्धि कुछ काम नहीं करती। तुम्हीं विचारकर बताओ, कि यह दूध किसे दिया जाय। यह देखो, मारे भूखके लाक्षो मरने चाहती है, उसका कलेजा धड़क रहा है। इधर कमजोरीसे वह मूर्च्छित हो गई है और

दूध लिये रमाप्रसाद किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रहा था और कात्यायनी शङ्करीजीके ध्यानमें मग्न थी,—उसी समय वही प्रधान नायब दो दीर्घाकार पठान दरवानोंको लिये फिर आ पहुँचे। उन्होंने चिल्लाकर कहा,—"अब विलम्ब नहीं है। सात दिन रह गये हैं,—" सिर्फ सात दिन—आजसे सातवें दिन खूब तड़के ही तुम लोगोंको उठ जाना होगा। छठें दिन रातमें मोटरी गठरी बाँधकर तय्यार रहना। सातवें दिन चार दण्ड समय बीतनेपर हमारे मालिकके पठान लोग आकर मकानको दखल कर लेंगे और अपना डेरा डाल देंगे।" सावधान! — सुन लिया तो? सुनो चाहे नहीं,— सात दिनमें उठना ही पड़ेगा। धर्मरक्षाके लिये फिर पुकारकर कह देते हैं,—अब देर नहीं है,—देर नहीं है—"

प्रधान नायब इतना कहकर चले गये। दोनों पठान दरवानोंने बागके बेलदरखको तोड़ डाला, तुलसीको उखाड़ डाला और तालाबमें थूक दिया। अन्तमें नाहरवाले मकानके पास गाजका हाड़ फेंककर चले गये।

दोनों अतिथियोंने सारी कारंवाई देखी,—पर कुछ कहा नहीं।

प्रधान नायबकी आवाज भीतर पहुँचते ही रमाप्रसादने भीत चकित होकर धीरे धीरे कहा,—"मा! यह फिर आया! हम लोगोंको अभी उठ जानेको कह रहा है।"

कात्यायनीने कहा,—"बेटा! चुप रहो— बोलो मत,— [illegible] कहता है।"

[illegible] चले जानेपर कात्यायनीने रमाप्रसादसे

तरह न जान पड़ा। अन्तमें उसने कहा,—ठीक ही हुआ है।

जिन्होंने मकान नीलाम लिया है, वह शायद बड़े दयालु हैं। इसीसे उन्होंने अपने प्रधान नायबके जरिये कात्यायनीसे कहला भेजा है,—"आजसे तीन महीनेतक तुम लोगोंको मकानमें रहने दूंगा। इन तीन महीनोंके अन्दर तुम लोग अन्यत्र चली जाओ—दूसरा मकान किरायेदर ले लो। अगर तीन महीनेके बाद भी इसी मकानमें रहोगी, तो अदालतसे चपरासी ला तथा बेइज्जत करके जबरदस्ती इस मकानसे निकाल दूंगा। और एक बात है,—इन तीन महीनोंमें मकानका कोई अंश न तो नष्ट करने और न तोड़ फोड़ कर बेचने ही पाओगी। अगर ऐसा करोगी, तो उसी दिन निकाल दी जाओगी और चोरीके इलजाममें फौजदारी सपुर्द कर दूंगा। और एक बात सुनो,— मकानको गन्दा न करने पाओगी। अगर मकान और बाग दोनो साफ सुथरा न रहे, तो समय कुसमय विचार न कर जिस दिन इच्छा होगी उसी दिन मकानसे बाहर कर दूंगा और हरजानेके तौरपर लोटा थाली सब रखवा लूंगा।"

कात्यायनीने उत्तर दिया,—"मा भगवती जो करेंगी वही होगा। वही हमारी सब कुछ हैं। चिन्ता करके क्या करना है।"

तीन महीना बीतनेमें आज केवल सात दिन और बाकी हैं।

जिस समय यशोदा अचेत पड़ी थी,— बच्ची भूखसे विकल थी, भूखे अतिथिगण द्वारपर खड़े थे, जिस समय पावभर

देख लिये रमाप्रसाद किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रहा था और कात्यायनी शङ्करीजीके ध्यानमें मग्न थी,—उसी समय वही प्रधान नायब दो दीर्घाकार पठान दरवानोंको लिये फिर आ पहुँचे। उन्होंने चिल्लाकर कहा,—"अब विलम्ब नहीं है। सात दिन रह गये हैं,—" सिर्फ सात दिन—आजसे सातवें दिन खूब तड़के ही तुम लोगोंको उठ जाना होगा। छठे दिन रातमें मोटरी गठरी बांधकर तय्यार रहना। सातवें दिन चार दण्ड समय बीतनेपर हमारे मालिकके पठान लोग आकर मकानको दखल कर लेंगे और अपना डेरा डाल देंगे।" सावधान। — सुन लिया न? सुनो चाहे नहीं,— सात दिनमें उठना ही पड़ेगा। धर्मेंरचाके लिये फिर पुकारकर कह देते हैं,—अब देर नहीं है,—"देर नहीं है—"

प्रधान नायब इतना कहकर चले गये। दोनों पठान दरवानोंने बागके बेलदरख्तको तोड़ डाला, तुलसीको उखाड़ डाला और तालाबमें थूक दिया। अन्तमें बाहरवाले मकानके पास गानका झाड़ फेंककर चले गये।

तीनों अतिथियोंने सारी कारवाई देखी,—पर कुछ कहा नहीं।

प्रधान नायबकी आवाज भीतर पहुँचते ही रमाप्रसादने भीत चकित होकर धीरे धीरे कहा,—"मा। यह फिर आया। हम लोगोंको अभी उठ जानेको कह रहा है।"

कात्यायनीने कहा,—"बेटा। चुप रहो— बोलो मत,— सुनो वह क्या कहता है।

प्रधान नायबके चले जानेपर कात्यायनीने रमाप्रसादने

तरह न जान पड़ा। अन्तमें उसने कहा,—ठीक ही हुआ है।

जिन्होंने मकान नीलाम लिया है, वह शायद बड़े दयालु हैं। इसीसे उन्होंने अपने प्रधान नायबके जरिये कात्यायनीसे कहला भेजा है,—"आजसे तीन महीनेतक तुम लोगोंको मकानमें रहने दूंगा। इन तीन महीनोंके अन्दर तुम लोग अन्यत्र चली जाओ—दूसरा मकान किरायेपर ले लो। अगर तीन महीनेके बाद भी इसी मकानमें रहोगी, तो अदालतसे परवाना ला तथा बेइज्जत करके जबरदस्ती इस मकानसे निकाल दूंगा। और एक बात है;—इन तीन महीनोंमें मकानका कोई अंश न तो नष्ट करने और न तोड़ फोड़ कर बेचने ही पाओगी। अगर ऐसा करोगी, तो उसी दिन निकाल दी जाओगी और चोरीके इलजाममें फौजदारी सपुर्द कर दूंगा। और एक बात सुनो,—मकानको गन्दा न करने पाओगी। अगर मकान और बाग दोनो साफ सुथरा न रहे, तो समय कुसमय विचार न कर जिस दिन इच्छा होगी उसी दिन मकानसे बाहर कर दूंगा और हरजानेके तौरपर लोटा थाली सब रखवा लूंगा।"

कात्यायनीने उत्तर दिया,—"मा भगवती जो करेंगी वही होगा। वही हमारी सब कुछ हैं। चिन्ता करके क्या करना है।"

तीन महीना बीतनेमें आज केवल सात दिन और बाकी हैं।

जिस समय यशोदा अचेत पड़ी थी,—लक्ष्मी भूखसे विकल थी, भूखे अतिथिगण द्वारपर खड़े थे, जिस समय पावभर

कात्यायनीने सक्षेपमें करुण स्वरसे सब बातें कह सुनाई।

अतिथि। माई! कुछ चिन्ता नहीं। एक काम करो। पथलीमें सेर भर गङ्गाजल ले आओ। उसमें दस पावभर दूधको डाल दो, फिर उसे मेरे सामने रख दो।

आदेशानुसार सब काम हो गया। प्रधान अतिथिने और दोनों अतिथियोंको बुला लिया। वह लोग पास आ पहुंचे। प्रधान अतिथिने एक प्रकारका मूल निकाला। देखनेसे मालूम होता था, कि उसमें रस नहीं है, मानो भूंजनेके लिये किसीने उसे सुखा डाला है। गङ्गाजलमें उसे धोकर प्रधान अतिथि अगूंठे और तर्जनीसे उसे दबाने लगे। अब उससे रसकी धारा बहने लगी। विराम नहीं,—पथलोमें उस एक सेर जल मिश्रित पावभर दूधपर उस रसकी धारा गिरने लगी। शायद लोग शायद विश्राम न करें। उससे एक पावसे भी अधिक रस निकला। अन्तमें सन्यासी शान्त हो उठे,—सूखा मूल इतना रस देनेपर भी ज्योंका त्यों ही रहा। मानों अनन्त रसका झरना हो।

सन्यासीने कहा,—"माई! और एक सेर गङ्गाजल ले आओ।"

कात्यायनी। बाबा! पथलीतो और नहीं है। मट्टीके बरतनमें ले आऊं?

सन्यासी। अच्छा, ले आओ।

जल आया। उसी दूध मिले जलमें सन्यासीने और एक सेर जल छोड़ दिया। अब उन्होंने इसप्रकार कहा,—"माई! अब यह दूध नहीं, अमृत हो गया है। कालिकाजीका आसन

कहा,—"चिन्ता क्या है, बेटा। अभी मात दिन समय है। कहीं हम लोग मकान छोड देनेका दिन भूल जाय इसी लिये यह पहरी होसे बना देनेको आया है। अच्छा ही किया है। किसी बातकी चिन्ता नहीं। घरमें मा चण्डी विराज रही हैं,—डर किस बातका है।"

रमाप्रसाद। मा। वह शायद बचेंगी नहीं,—मुहके अन्दर जल नहीं जाता, बाहर ही गिर पडता है।

कात्यायनी। विपद्भञ्जनी दयामयी माता स्मरण करो—मा मा—

रमाप्रसादसे और न रहा गया। वह आर्तनाद कर उठा। लक्ष्मी भी रोने लगी।

कात्यायनी कहने लगी,—"हे, जगज्जननि। हे मा भगवति। चरणकी छायासे सबको शीतल करो।"

तीनों अतिथियोंमें जो प्रज्ञा एव वयोज्येष्ठ थे, वह गंभीर मर्म्मभेदी रुलाई सुनकर भीतर घुस गये। कात्यायनी उन्हें देखते ही सम्भ्रमसे उठ खडी हुई और मधुर वाक्यमें कहा,—"आओ बाबा। मेरे ऊपर बडा भारी दुःख पडा है। बाबा। सेवामें त्रुटि हुई है। क्षमा कीजियेगा। मेरे कुछ भी नहीं है—यही इतना दूध है, यह आपही को प्राप्य है, आप ही इसे लें।"

अतिथि। माई। मामरा क्या है? यह मूर्च्छिता या मृत प्राय क्यों है? यह बालिका क्यों रो रही है? और यह आदमी कौन है, जो अभी दरवाजेपर खडा होकर कह गया, कि सात दिनमें तुम लोगोंको मकानसे उठ जाना होगा? हमने कुछ समझा है, पर तुम स्वय बताओ, कि बात क्या है?

कात्यायनीने संक्षेपमे करुण स्वरसे सब बातें कह सुनाई।

अतिथि। माई! कुछ चिन्ता नहीं। एक काम करो। पथलीमें सेर भर गङ्गाजल ले आओ। उसमे इस पावभर दूधको डाल दो, फिर उसे मेरे सामने रख दो।

आदेशानुसार सब काम हो गया। प्रधान अतिथिने और दोनों अतिथियोंको बुला लिया। वह लोग पास आ पहुंचे। प्रधान अतिथिने एक प्रकारका मूल निकाला। देखनेसे मालूम होता था, कि उसमे रस नहीं है, मानो भूंजनेके लिये किसीने उसे सुखा डाला है। गङ्गाजलमे उसे धोकर प्रधान अतिथि अंगूठे और तर्जनीसे उसे दबाने लगे। अब उससे रसकी धारा बहने लगी। विराम नहीं,—पथलीमें उस एक सेर जल मिश्रित पावभर दूधपर उस रसकी धारा गिरने लगी। गवार लोग शायद विश्वास न करेंगे उससे एक पावसे भी अधिक रस निकला। अन्तमे सन्यासी क्षान्त हो उठे,—सूखा मूल इतना रस देनेपर भी ज्योंका त्यों ही रहा। मानों अनन्त रसका भारा हो।

सन्यासीने कहा,—"माई! और एक सेर गङ्गाजल ले आओ।"

कात्यायनी। बाबा! पथलीतो और नहीं है। मट्टीके बर्तनमें ले आऊं?

सन्यासी। अच्छा, ले आओ।

जल आया। उसी दूध मिले जलमे सन्यासीने और एक सेर जल छोड़ दिया। अब उन्होंने हंसकर कहा,—"माई! अब यह दूध नहीं, अमृत हो गया है। कलिकालका अमृत

यही है। अब हम अमृतकी अधिकारिणी आप हैं। देव और अतिथिसेवाके लिये कुछ अमृत हमलोगोंको दीजिये।"

आदेशानुसार कात्यायनी संन्यासीके काठपात्रमें अमृत डालने लगी। प्राय पावभर होते ही संन्यासीने कहा,—" बस अब रहने दो, इतना ही हम लोगोंके लिये बहुत है।

इसके बाद सन्यासी यशोदाकी चिकित्साके लिये अग्रसर हुए। मुख देखा, नाडी देखी, फिर हम करके कहा,— 'माई। डर किस बातका है?" सन्यासीने एक चम्मच रस अपने हाथसे यशोदाको पिलाया। फिर एक चम्मच और दिया। यशोदाने आंखे खोल दी।

सन्यासीने कात्यायनीसे कहा,—" माई। अब तुम यशोदाको रस पिलाओ। चार चम्मच रस पीते ही वह उठ बैठेगी। छः चम्मच पीते ही उठ खडी होगी। सात चम्मचसे अधिक अमृत पाने मत देना।

इतना कहकर सन्यासी बालिका लक्ष्मीको अमृत पिलाने गये। वह धूलमें लोट रही थी। क्षुधासे आकुल पडी थी। ज्ञानशून्य न थी, पर ठीक ज्ञान भी न था। संसार कैसा भान भन् शब्द कर रहा है। लक्ष्मीके लिये संसार सादा नहीं है। सूर्यकी ज्योति भी सफेद नहीं है, सभी पीतवर्ण हो गया है।

सन्यासीने बालिकाको गोदमें उठा लिया। हाथसे सिरकी धूल झाड दी। आशीर्वाद दिया और मृदु मृदु हसे। लक्ष्मीके मुखके समीप अपना मुख ले गये, मानो लक्ष्मीका चन्द्रमुख चूमनेके लिये वृद्ध सन्यासीको लालसा उत्पन्न हुई हो, किन्तु नहीं सु हतो चूमा नहीं। सन्यासीने एक चम्मच अमृत लेकर

बालिकाके मुखमें डाल दिया। एक चम्मच अमृत पान करते ही नन्हीका परिम्लान, परिशुष्क मुखकमल मानो खिल उठा। दूसरा चम्मच पीते ही लड़कीके अधरप्रान्तमें हंसीकीसुदी दीख पड़ी। तीसरा चम्मच पीते ही लड़कीने सन्यासीकी गोदसे उतरकर माके पास जाना चाहा, चौथा चम्मच पीते ही सन्यासीकी गोदसे उतर पड़ी और दौड़कर माके गलेमें जा लिपटी। उस समय माताका मुख कन्याके मुखसे मिल गया। दोनोंके नेत्र भी परस्पर मिले—और माताके नेत्रके जलने कन्याके मुखकमलको भिगा दिया।

सन्यासीने रमाप्रसादसे कहा,—लो, अब तुम अमृत पान करो। भूख प्यास दूर होगी, शरीरमें बल आवेगा, अब नम्रता जाती रहेगी और मन प्रसन्न होगा। धीरे धीरे थोड़ा थोड़ा करके प्राय डेढ़ छटाक अमृत पान करो।"

रमाप्रसादने वैसा ही किया। पीनेपर कहा,—"ऐसा सुमिष्ट, सुस्वादु, सब समय शरबतको हमने कभी पिया ही नहीं। क्या यह स्वर्गीय सुधा है?"

यह सुनकर सन्यासी ठठाकर हंस पड़े, फिर कात्यायनीसे कहा,—"माइ! अब तुम्हारी पारी है। तुम भी अमृत पान करके तृप्त होओ।"

कात्यायनी। आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, किन्तु हमारी तृप्ति क्या इस जिन्दगीमें होगी? विधाताकी विधिमें बाधा देना क्या उचित है?

सन्यासीने हंसते हुए कहा,—"माइ! देखते हैं, स्वधर्म रक्षामें तुम्हारा आन्तरिक यत्न है, सुतरां देहको रक्षा करना

सबसे पहले और सब तरह उचित है। अत्यन्त रुग्ण देह भी इस अमृत पान, इस महाप्रसाद सेवनसे अनन्तकालके लिये शीतल हो जाती है।"

कात्यायनीने भी प्राय, डेढ़ छटाक अमृत पान किया।

सुधा पान करनेपर कुछ देरके लिये सभी मानो सुखसागरमें निमग्न हो गये। दुःखके अन्धकारमें सुखकी ज्योति मानो फिर हंस उठी। पाषाणमें मानो पद्मपुष्प खिल उठा।

९वां परिच्छेद।

यशोदा लक्ष्मीको गोदमें लेकर कोठरीमें चली गई।

सन्यासीने कात्यायनीसे कहा,—इस थैलीमें जो अमृत बच रहा है, उसे अच्छी तरह यत्नसे रखना। एक वर्षसे भी अधिक दिनतक वह खराब होनेका नहीं। मेरी एक बात गुरुवाक्यकी भांति पालन करना। इस अमृतको जब तब मत खाना और किसी किसीको देना भी मत। नितान्त कुसमय न आ पड़नेपर कभी व्यवहार भी न करना। जब ऐसे सङ्कटमें पड़ो, कि प्राणरक्षाका और कोई उपाय न रहे तब इसे पानकर तृप्त होना।"

कात्यायनीने हाथ जोड़कर कहा,—"तथास्तु। आदेश शिरोधार्य है।"

सन्यासी। अच्छा, तो हम लोग चले।

कात्यायनी। बाबा! यह तो न होगा! मैं दुखिनी हूं। आप लोगोंकी कुछ सेवा न कर सको। चाहे जिस तरह हो आज मैं अतिथिसेवा सम्पन्न करूंगी। अगर आप लोग बिना सेवा ही चले जायगे, तो यह दुःख जिन्दगी भर रहेगा। बाबा! मैं तो अनन्त दुखमें पड़ी हूं, यदि आप बिना सेवा इसी तरह चले जायगे तो मेरा एक दुख और बढ़ जायगा।

सन्यासी। सेवा तो हो गई। आपका दिया हुआ अन्नजल देवताको भोग लगा दिया है।

कात्यायनी। ठीक है, पर मेरा मन तो नहीं मानता। आप लोगोंको आटा, घी, दूध देकर परितुष्ट करूंगी, यही लालसा है।

सन्यासी। माई! तुम्हारा मन अच्छा है। अतिथिको इतना जिद करके रखना न चाहिये। हम लोग कामचर हैं;— हम लोगोंकी इच्छाकी गति रोकना अच्छा नहीं।

कात्यायनीने हाथ जोड़कर डबडबाई हुई आंखोंसे कहा;— "यदि आप लोग सेवा ग्रहण न करेंगे, तो मनमें बहुत चोट लगेगी।"

सन्यासी। सेवा ग्रहण करेंगे, पर यहां और न ठहरेंगे। इस पापस्थानमें सजीव वृक्ष जल जाता है, हम लोग किस तरह ठहरेंगे? विशेष आज तो मुसलमानोंने आकर तालाबमें थूक दिया है;—तुलसी और बेलके पेड़को उखाड़ और तोड़ डाला है। हम लोग सेवा ग्रहण करेंगे सही, पर गङ्गातट जाकर। आज सन्ध्यापर्य्यन्त गङ्गागर्भमें तुम्हारी सेवाकी अपेक्षा करते रहेंगे।

सन्यासीगण विदा हुए। कात्यायनी और रमाप्रसादने प्रणाम किया। कोठरीके अन्दरसे यशोदाने स्वयं प्रणाम किया और लक्ष्मीको प्रणाम करनेके लिये कहा। ? माताके प्रणामका अनुकरण किया।

छठवां परिच्छेद।

रमाप्रसाद। मा! तुमने क्या किया? सर्वनाशका रङ्ग दिख पड़ता है।

कात्यायनी। क्यों बेटा! क्या हुआ?

रमाप्रसाद। घरमें एक पैसा भी नहीं,—और न कहीं एक पैसा मिलनेकी आशा ही है, फिर आटा, घी और दूधसे अतिथिसेवा कैसे होगी?

कात्यायनी। बेटा! कुछ डर नहीं। इतने दिनोंतक तुम लोगोंसे नहीं कहा था,—मेरे पास लक्ष्मीपूजाका एक मोहर है। बहुत छिपाकर रखा है। वह लक्ष्मीपूजाकी हांडीमें है। डाकुओंने समझा होगा, कि लक्ष्मीपूजाकी हांडीमें सामान्य धानके सिवा और क्या है। इसीसे वह मोहर बच गई है। बेटा! तुम्हें तो याद है, जिस दिन डकैती हुई उस दिनसे सोनेके लिये बिछौना भी नहीं रहा। पहननेके लिये एक कपड़ा भी नहीं रहा। जल लानेके लिये पीतलका एक घड़ा भी न था,—रुपया पैसा तो दूरकी बात है।

रमाप्रसाद। मा! जब मोहर है तब अतिथिसेवाके लिये चिन्ता क्या है? इतने दिनोंतक मोहरकी बात क्यों न कही?

कात्यायनी। लक्ष्मीपूजाकी मोहर क्या तोड़ाई जाती है? किसी दिन तीसरे पहरतक चावल न जुट सका,—तौभी मोहरको तोड़ाया नहीं। आज एक महीनेसे बहूकी लज्जानिवारणके लिये वस्त्रका अभाव रहनेपर भी मोहरको नहीं तोड़ाया। गोश्वालिन आज सात दिनसे रोज कह जाती है, कि बिना रुपया पाये अब और दूध न दूंगा, तौभी मैंने मोहरको नहीं छुआ। किन्तु बेटा! आज अतिथि विमुख होते हैं, इसीसे मोहर तोड़ानेके लिये वाध्य हुई हूं। संसारमें अतिथिसेवा जैसा धर्म और नहीं है। इस अतिथिसेवाके अतिरिक्त और किसी तरह मोहर न तोड़ा सकती।

रमाप्रसाद। मा! अच्छा हुआ। मोहर तोड़ानेसे कितने रुपये मिलेंगे, मा?

कात्यायनी। बीस बाइस रुपये मिल सकते हैं।

इसबार रमाप्रसादके मुहपर हंसी देख पड़ी। रमाप्रसादने कहा,—"मा! बहुत अच्छा हुआ। तीन अतिथियोंकी सेवामें क्या तीन रुपयेसे अधिक लगेगा?"

कात्यायनी। इतना कैसे लगेगा? साधु लोग अधिक खानेवाले नहीं हैं। थोड़ेहीमें वे लोग परितुष्ट हो जायंगे। हमारी समझमें एक ही रुपयेमें हो जायगा।

रमाप्रसाद। तब अतिथिसेवामें जो खर्च पड़ेगा, उसके बाद प्राय बीस रुपये बच जायगें। अच्छा हुआ, मा! मैं कहता हूं, 'बीस रुपयेका चावल खरीदकर रख दिया जाय न!

नहीं, नहीं,—बीस रुपयेका चावल खरीदनेका काम नहीं। सोलह रुपयेका चावल खरीद लिया जाय और चार रुपया लच्छीके दूधके लिये रखा जाय;—मैं दो पैसे लेकर रोज जाऊंगा,—और जैसे बनेगा वैसे दो पैसेका सेरभर दूध लच्छीके लिये ले आया करूंगा। मैं ब्राह्मण हूं, इसलिये उस महल्ले-वाले गोआले मुझपर बड़ी दया रखते हैं, मा! कोई कोई दिन बिना पैसा ही दूध मिल जाया करेगा, मा! मनोहर गोपने एक दिन मुझे आसन देकर बैठाया और एक सेर गुड़ देना चाहा था। ऐसा दान लेना तुमने मना कर दिया है, इसीसे मैंने लिया नहीं।

माता कुछ न कहकर घमने लगी। रमाप्रसाद फिर कहने लगा,—"चार रुपयेके दूधसे लच्छीके पांच महीने कट जायगें। और बाकी सोलह रुपयेका चावल खरीदकर रख दिया जाय। पौषमासमें अच्छा नया चावल हुआ है। कल सबेरे मैंने चावलका भाव पूछा था,—मोटा चावल सोलह रुपयेमें अठारह मन मिलेगा। तब एक बात है, बिना अरवा चावलके तो बनेगा नहीं,—इसलिये कुछ कम ही मिलेगा। सोलह रुपयेमें अलबत्ता सोलह मन अरवा चावल मिल सकता है। तरकारी या दाल न भी होगी, तो कुछ परवाह नहीं। नया चावल,—नमकके साथ माड़ भात बड़ा मीठा लगेगा। चाहे जहांसे हो, नमक हम रोज ले आया करेंगे।"

न मालूम क्यों, जननी कात्यायनीके नेत्रसे एक बूंद आंसू टपक पड़ा। रमाप्रसाद उसे नहीं देख सका। वह इस समय सोलह रुपयेका सोलह मन चावल खरीदने और नमक डाल

फिर माड़ भात खानेके आनन्दमें है। माताके एक बूंद आंसूको कैसे देख सकता है?

साथ ही साथ कात्यायनीने मनको दृढ़ किया। उसने मुखपर मधुर हंसी दिखाकर रमाप्रसादसे कहा,—पागल कहींका। तेरे घर कहा है! पांच महीनेके लिये चावल खरीद कर रखेगा कहां? सात दिनके भीतर ही हम घरको छोड़ कर अन्यत्र जाना पड़ेगा, क्या तुमने सुना नहीं है?— शायद मोहरके आनन्दमें तुम अपनी अवस्था भूल गये हो।"

रमाप्रसादका मुंह सूख गया। वह मानो चौंक पड़ा। कहा,—"ओह! तब हम लोग कहां जायंगे, मा?"

कात्यायनी। डर क्या है बेटा। मा भगवती जहां ले जायगी वहीं जाना होगा।

रमाप्रसाद। मा! दो मुसलमान आकर जलमें थूक क्यों गये? तुम्हारे बेलके पेड़को क्यों तोड़ डाला? तुलसीको क्यों उखाड़ दिया?—

कात्यायनी। मेरे लाल! क्या तुम समझते नहीं,—वे लोग यह कह गये,—"यदि सात दिनके अन्दर तुम मकान खाली न कर दोगे, तो तुम लोगोंपर घोर अत्याचार होगा। आज सामान्य अत्याचार करके हम लोग चले जाते हैं। सात दिन बाद आकर यदि तुम्हें इसी मकानमें पायगे तो तुम्हारी देवीको मूर्त्तिको उठाकर जलमें फेंक देंगे,—सब कुछ तोड़ फोड़ डालेंगे,—अधिक क्या यदि तुम लोगोंपर कायिक अपमान करना पड़ेगा, तो वह भी करेंगे।"—

रमाप्रसाद। यह क्या कहती हो, मा! क्या सात दिनके

बाद आकर ये लोग हम लोगोंको मारेंगे? मा शङ्करीकी मूर्तिको तोड डालेंगे?

बालक रमाप्रसाद रोने लगा। कात्यायनीने उसे ढाढस देकर कहा,—"डर किस बातका है, बेटा? मा भगवती हम लोगोंकी रक्षा करेगी।"



ग्यारहवा परिच्छेद।

धीरा, स्थिरा, निश्चलनयना कात्यायनी कुछ देरतक चुपचाप रही। फिर लडकेके मुहकी ओर देखा। देखकर कुछ मुसकराते हुए कहा,—"बेटा रामा! डर क्या है? मेरे रहते तुम्हें किस बातका डर है?"

इसके बाद कात्यायनीने वधू यशोदाको बुलाया,—"बहू! इधर आओ।" यशोदा लक्ष्मीको गोद लिये हुए समीप आई। लक्ष्मी माकी गोदसे उतरकर दादीकी गोदमे जा बैठी।

कात्यायनीने कहा,—"विपदमे घबराना अच्छा नहीं। मा भगवतीका नाम स्मरण कर धैर्य धरो। रोओ मत। रोती क्यों हो? हम लोगोंकी कौन गिनती है?—राजा युधिष्ठिर बन गये थे,—राजा नल भी बन बन घूमे थे। अधिक क्या, वैकुण्ठ पति श्रीरामचन्द्रजीने भी बनवास किया था। सात दिनके अन्दर इस घरको खाली कर देनेकी बात है, लेकिन मेरी इच्छा कल सवेरे ही इस घरको छोड़कर चली जानेकी है।"

रमाप्रसाद। कहा जाना होगा, मा?

कात्यायनी। विधाताके इस वृहत् राज्यमें क्या इन लोगोंको जगह न मिलेगी? अवश्य ही हम लोगोंके लिये कोई स्थान निर्दिष्ट है। मा भगवती जहां ले जायगी वहीं जाऊंगी।

रमाप्रसाद। मा! मामाके यहां ही क्यों न चलें?

कात्यायनी। (दीर्घस्वास लेकर) नहीं बेटा! उस राहमें कण्टक है। लेकिन मा भगवतीने मेरे कपालमें वहीं जाना लिख दिया है, तो वहीं जाऊंगी। अच्छा, रघुदयाल अबतक आया क्यों नहीं? एक प्रहर समय बीत गया, तौभी अबतक वह नहीं आया? किसी विपदमें तो नहीं फंस गया? इस समय पग पगपर मेरे ऊपर विपद है।

रमाप्रसाद। सरदार दादाको खोज लाऊं, मा! हमें तो मालूम होता है, कि कहीं काम पा गये हैं, वही कर रहे हैं। और कुछ देरमें आवेंगे ही।

कात्यायनी। मोहर भुनानेकी इस वक्त जरूरत है। अतिथिसेवामें देर हो रही है,— कौन मोहर तोड़ा ला देगा? इसीलिये रघुदयालकी राह ताक रही हूं।

रमाप्रसाद। मा! तुम मुझे मोहर दो न। —मैं भुना लाऊं।

कात्यायनी। मोदीकी दूकानमें तो मोहर भुनेगी नहीं,— हो तो किसी रईसके यहां अथवा किसी बनिया महाजनकी दूकानमें मोहर भुनेगी। तुम लड़के हो, कहीं कोई तुम्हें ठग न ले, इसीलिये रघुदयालको साथ कर देना चाहती हूं।

रमाप्रसाद। मा! मैं अभीमें मोहर तोड़ा लाऊंगा,— मुझे बहुत आदमी जानते हैं,—

कात्यायनी। अच्छा, थोडा और ठहरो। जब रघुदयाल न आवेगा तब अकेले ही जाकर मोहर तोडा लाना। देख रामा! इस मोहरके अठारह रुपये तो जरूर ही मिलेंगे। २०।२१ रुपये मिल जाय, तो और भी अच्छा है। अगर अठारह रुपयेसे कोई कम दे, तो मोहर मत भुनाना। दूसरी जगह कोशिश करना। मान लो, कि मोहर तोडाने पर १८) रुपये मिले। इन अठारह रूपयोंमेंसे पहले अतिथिसेवाके लिये डेढ सेर आटा, डेढ पाव घी, डेढ सेर दूध और आध पाव नमक खरीद लेना। इसमें अन्दाज एक रुपया खर्च पडेगा। बाकी सत्तरह रूपयोंके कहीं चावल न खरीद लेना।

रमाप्रसाद। नहीं मा नहीं,—ऐसा क्यों करूंगा? तुम जो कहोगी, वही करूंगा।

कात्यायनी। बाकी सत्तरह रूपयोंमें ॥ग्) गोआलिनको देना होगा। १॥८) मोदीका बाकी है। यद्यपि वह तकादा नहीं करता, पर उसका रुपया देकर जाना होगा। नाइन तीन महीनेसे कमाने नहीं आई। उसे ८) आना महीनेके हिसाबसे छ' महीनेकी ॥।) देना होगा। मछलीवालीको सात पैसे देना है। धोबिनने छ' महीनेसे कपडा धोना छोड दिया है। ।) उसे भी देना होगा। चमारिनके छ पैसे बाकी हैं। पनिहारिनको मरे आज चार महीना हो गये। वह रोज दो घडा गङ्गाजल हमें ला देती थी। ॥) महीना करार था। उसे तीन महीनेकी तलब नहीं मिली। उसके एक भतीजा है। उसे १॥) देना होगा।

रमाप्रसाद। तब तो देखता हूं, कि कर्ज चुकाने होमें सब रुपये खर्च हो जायगे।

कात्यायनी। तो इसके लिये मैं क्या करूं। हिसाब जोड़कर देखो तो, सब कितना हुआ?

कात्यायनी फिर बोलने लगी,—पुत्र रमाप्रसाद हिसाब जोड़ने लगा। अन्तमें कहा,—"मा! ४॥।≈)। हुआ। अभी कई रुपये बचते हैं। मैंने समझ लिया था, कि कर्ज चुकाने होमें सब रुपये चुक जायगे।"

कात्यायनी। बेटा। रुपया तो बहुत ज्यादा नहीं है। अब भी खर्च करना बाकी है। सुनो;—रसिकदास बैरागी नित्य सबेरे नामकीर्तन करता है। यद्यपि उसने मेरे दरवाजे नाम गाना छोड़ दिया है, किन्तु शेष रात्रिमें जब मैं छतपर जाती हूं, तब मैं उसके मुखसे हरिनामध्वनि सुनती हूं। सो रसिकदास रोज मुझे हरिनाम सुना जाता है। उसे आठ आना देना होगा।

रमाप्रसाद। मा! इस तरह दान करनेसे तो एक पैसा भी न बचेगा।

कात्यायनी। (हसकर) बेटा! नाराज होते हो,—अच्छा, अब खर्चकी बात न कहूंगी। एक बात कहे देती हूं,—सोहर सुनाकर सब रुपये हो या दश दश रुपयेके नोट मत लेना। कुछ अठन्नी, चवन्नी, दुअन्नी और पैसा लेते आना। और घर आनेके समय अपने खास खर्चके लिये एक रुपयेका अरवा चावल और सेर भर दूध खरीद लेना। अगर कोई सस्ती तर-

कारी मिले, तो ले लेना। एक सेर,सेंधा निमक और पाव भर तेल भी लेते आना।

रमाप्रसाद। मा। दाल न लाऊंगा। उरदकी दाल लक्ष्मी नहीं खाती। मूगकी दाल ले आऊं मा ?

कात्यायनी। पाव भर ले लेना। उसको पोटलीमें बांधकर भातमें छोड़ दूगी। पकजानेपर जलमें डाल गर्म करके लक्ष्मीको दूगी। यह आनन्दसे खायगी। इस तरह पाव भर दालमें आठ दिन कट जायगे।

लक्ष्मी। (दादीको चिउंटी काट कर) न मा। वैसे दाल मैं न खाऊंगी। जिस तरह बहू दाल पकाती है, उसी तरह पकाना पड़ेगी।

कात्यायनी। अच्छा, वैसे ही पका दी जायगी। हेर रामा! एक चीज कहनेको भूल ही गई थी। लक्ष्मीके लिये आध सेर गुड़ खरीद लेना।

लक्ष्मी। मा! तू बड़ी खराब हो गई है। छि.! गुड़ क्या खाया जाता है। उस दिन हमें गुड खाते देखकर लोगोंने कितनी निन्दा की थी। नीच जाति कहकर गाली दी थी। मा! तेरे पाव पड़ती हू,—भैरव हलवाईकी दूकानसे हमारे लिये जलेबी मगा दे। मा! कल कहां जानेको कहती है! हमें साथ ले जाना होगा। हमारे लिये अच्छा अच्छा कपड़ा लानेको कह दे न मा। फटा कपड़ा पहनकर कहीं जाने लायक भी नहीं है। मा! तनिक देख तो, कितना फटा है। मा? बाबा कब आयेंगे?—बाबाके आने पीसे अच्छा कपड़ा मिलेगा। क्यों मा?

यशोदा अबतक शिर झुकाये सब बातें सुन रही थी। अब उससे न रहा गया। वह रो उठी। धीरे नहीं,—बहुत जोरसे रोने लगी। कण्ठका द्वार खुल गया है,—स्नेहमय हिमगिरिको भेदकर शोकगङ्गा अश्रुरूपमें भीमवेगसे बह चली है,—और क्या उपाय है? इस भयङ्कर गतिको रोकनेकी शक्ति किसे है?

कात्यायनीने कहा,—"बहू! यह क्या करती हो? लड़की सामने है, तुम क्या कर रही हो? लक्ष्मी रोते रोते व्याकुल हो जायगी। बहू! चुप हो जाओ।"

अब चुप हो जाओ! चुप होनेकी शक्ति यशोदामें और नहीं है। वह वाताहत कदलीकी नाईं गिर पड़ी और लोट गई।

कात्यायनी! छेड़ो मत, बहूको कुछ देरतक रोने दो। जमीनमें लोटकर कुछ देरतक रो लेने दो? न रो लेनेसे उसका कलेजा फट जायगा।

रोओ, यशोदा! रोओ! मासकी आशासे क्या तुम रोने न पाओगी? रोओ यशोदा! निडर होकर रोओ! रोओ यशोदा! रोओ! जबतक तृप्ति न हो तबतक रोओ।

बारहवां परिच्छेद ।



दयावती कात्यायनीने यशोदाको रोने दिया। लक्ष्मी दादीकी गोदसे माताकी गोदमें जानेके लिये व्यस्त हुई। यह देख दादीने कहा,—"वहां मत जाना। तेरी माको बिच्छूने काट खाया है। इसीसे वह रो रही है। तू जायगी, तो तुझे भी काट खायगा।" दादीने इस तरह डराकर लक्ष्मीको रोक रखा। लक्ष्मीका मुंह सूख गया। धीरे धीरे रोनी सूरत हुई। अन्तमें लक्ष्मी भी रोने लगी।

पांच मिनट बीत गये। लक्ष्मीका रोना जितना तेज पड़ने लगा यशोदाका उतना ही आप ही आप थमने लगा। बधूका रोना कम पड़ते देखकर कात्यायनीने कहा,—"बहू! लक्ष्मीको गोद ले लो। बेफायदा क्यों रो रही हो?"

यशोदा अब उठ खड़ी हुई। आंख पोछकर लक्ष्मीको गोद लिया। कन्याके मुंहके पास अपना मुंह ले जाकर यशोदाने कहा,—"बेटी! रोती क्यों हो? चुप होओ।"

रोती हो रोती कन्याने जवाब दिया,—"तू क्यों रोती थी? बहू! जिगा हमसे कहे तू क्यों रो रही थी?

यशोदा। बेटी! तुझे भूख लगी है क्या? दूध पियेगी?

कन्या। नहीं, दूध नहीं पिऊंगी, भात खानेका समय हुआ,—भात कहां है? आज अबतक रसोई क्यों नहीं बनी?

कात्यायनीने यशोदाको इशारेसे कहा,—"इस समय लक्ष्मीको लेकर अन्यत्र चली जाओ।" इशारा समझकर यशोदा लक्ष्मीको

भुलानेके लिये छतपर ले गई और वहा दोनो मिलकर खेलने लगी। यशोदा कभी घोडा बनती, लच्मी घोडेपर चढकर हट हट, टिक टिक करके उसे चलाती। यशोदा कभी शिव बनती,—लच्मी शिवपर चढकर जीभ निकालती और काली होकर खडी होती। यशोदा कभी असुर होती,—लच्मी सिंह बनकर माताके बाहुमूलमें काट खाती।

बहुत थोडी उमरमे लच्मीके गलेमें एक बार फोडा निकला था। डाक्टरने उसमे नश्तर दिया था। लच्मीको वह आज भी याद है। माने कहा,—"लच्मी! मेरी गर्दनमें फोडा हुआ है।" यह सुनते ही लच्मी डाक्टर बनी, एक लकडी उठा लाई और बोली—"आख मूद लो,—कोई डर नहीं है,—बोलो मत,—आज नश्तर नहीं दिया जायगा,—किसी बातका डर नहीं है,—देखें, देखेंतो कैसा जखम है! अच्छा जखम है!—यह यह रखाका—"

लच्मीने इस तरह नश्तर दिया। किन्तु यशोदा रोना भूल गई थी। यह देख लच्मीने कहा,—"अरी बहू!—नश्तर दिया गया, पर न तो तू रोई और न छटपटाती ही।" माता अब जखम चीरे जानेकी पीडासे जिस तरह लच्मी रोई थी उसी तरह रोने और छटपटाने लगी। यशोदाके चुप होनेपर लच्मीने कहा,—अभी नहीं हुआ, अभी और थोडा रोना पडेगा। यह सुनकर मा भी हसने लगी और लच्मी भी हसने लगी। मारे हसीके वह स्थान भर गया। अन्तमें हास्यमयी माताने हास्यमयी कन्याको गोदमे लेकर अपने हसते हुए मुहको कन्याके हसते हुए मुखपर स्थापन कर रखा।

तेरहवां परिच्छेद।



विपद आनेपर जली मछली भी पानीमें भाग जाती है, क्यों?

उधर यशोदा लक्ष्मीके साथ खेलमें लगी थी, इधर कात्यायनी मट्टीकी हांडीसे मोहर निकालनेके लिये उठी। वह धीरे धीरे दो एक पग आगे बढ़ती—फिर लौटकर पीछे देखती,—और थोड़ा थोड़ा हंसती। यह देख रमाप्रसादने पूछा,—"मा! हंसती क्यों हो?"

कात्यायनी। बेटा! हंसी आप ही आप आती है। इतनी आशा करके,—इतनी व्यवस्था, इतना बन्दोबस्त करके मोहर लाने जाती हूं, पर यदि हांडीके भीतर घामें मोहर न मिले,—तो क्या होगा? जिस दिन घरमें डाका पड़ा था, उसके दूसरे दिन मोहरको खोजकर देखा था, उसके बाद फिर नहीं देखा,—यदि चूहे उसे अपने बिलमें उठा ले गये हों या चोर किसी तरह वह खो गई हो, तो क्या होगा?—इतने दुःख, इतनी आशाकी मोहर यदि न मिले,—इसीसे हंसी आती है।

रमाप्रसाद। यह क्या कहती हो, मा!—मोहर क्या हांडीमें नहीं है? तुम्हारी बात सुनकर मेरा तो कलेजा धड़कने लगा। तुम्हें हंसी क्यों आती है?

कात्यायनी। बेटा! हंसी क्यों आती है, सो नहीं जानती, पर हंसी आती है सही। शायद दुःखकी शेष सीमाके बाद हंसीका राज्य उपस्थित होता है।

रमाप्रसाद। मा! क्या मोहर लाने में भी तुम्हारे साथ लक्ष्मीपूजाकी कोठरीमें चलूं?

कात्यायनी। नहीं, तुम यहीं रहो। मैं अभी मोहर लिये आती हूं। चिन्ता किस बातकी? देवीका नाम स्मरण करो। सर्वमङ्गला हम लोगोंका मङ्गल करेंगी।

पुत्रकी ओर और न देखकर कात्यायनी झपट कर चली। देवीस्थानमें पहुंचकर शङ्करीके चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत किया। गृहदेवी लक्ष्मीको वारवार प्रणाम करके कहा,—"मा! आज तुम्हारी मोहर लूगी। दासीका अपराध क्षमा करना, मा!—बडी विपदमें पडी हूं, अब चलता नहीं;—दिन और नहीं कटते, मा।"

कात्यायनी हांडीसे धान निकालने लगी। प्राय सात आठ सेर धान था। धान जितना निकालती उतना ही कांपती थी। हांडीका धान ज्यों ज्यों कम होता जाता था त्यों हीं त्यों उसका मुंह सूखता जाता था। अब हांडीमें प्राय आध सेर धान रह गया है, तौभी मोहर हाथ न आई। इतनेमें घबराकर कात्यायनी हांड़ीको हिलाने लगी, पर मोहरकी आवाज कुछ भी न मालूम हुई। अब कात्यायनीके होश ठिकाने लगे,—मानो अब वह नहीं है। किन्तु वह सभली। सोचा, हमने मूठी मूठी धान हांडीसे निकाला है,—यदि मूठीमें मोहर चली गई हो,—तो मोहर हांडीमे तो होगी नहीं,—नीचे धानके साथ अवश्य ही होगी। यह विचारकर कात्यायनीने हांडीका सब धान जमीन पर उभल दिया और पसारकर देखने लगी। मन ही मन यों कहती जाती थी,—"हे मोहर! और हमे मत ठगो। नाह-

सकी कन्या बड़ी विपदमें है,—दया करो,—देख पड़ो। और सहा नहीं जाता। देह कैसी तो हुई जाती है।"

भगवती शङ्करीकी दयासे मोहर इसवार देख पड़ा। कात्यायनीने उसे उठाकर शिरपर चढ़ाया और कहा,—"मा लक्ष्मी। तुम बहुत दिनतक हमारे यहां रही। आज दूसरेके घर चलो। हम रोगा,—निरन्न,—वस्त्रहीना हैं,—मा। तुम हमारे यहां क्यों रहोगी?"

कात्यायनी मोहर लेकर पुत्रके समीप आई और बोली,—"बेटा। यह मोहर लो। पर देखना सिवाय हिन्दूके और किसी जातिके हाथ इसे मत बेचना।"

रमाप्रसादने दाहिना हाथ बढ़ाकर खुशीसे मोहरको लिया। इधर माताकी आंखोंसे झरझर आंसू टपकते देखकर रमाप्रसादने पूछा,—"मा। रोती क्यों हो? अब मोहर मिल गई तब फिर क्यों रोती हो? आज तो आनन्दका दिन है।"

कात्यायनीने आंसू पोंछकर कहा,—"बेटा। मा लक्ष्मीको क्या जन्मभरके लिये बिदा कर दिया?"

रमाप्रसाद। मोहर न पानेकी बात सोचकर तो तुम हंसती रही,—अब मोहर पाकर खूब रो लिया। मा। तुम्हारी यह कैसी बात है।

माताने इसवार हंस दिया।

चौदहवा परिच्छेद।

मोहर हाथमें आनेसे कितनोंका मन गर्म्म हो जाता है। शायद रमाप्रसादका मन भी कुछ गर्म्म हुआ। सो उसे अच्छे कपड़े लत्तेका शौक पैदा हुआ। वह मोहर तोड़नी जायगा, इसलिये जरा ठाटबाटसे जाना क्या उचित नहीं है?

रमाप्रसाद सजधज करने लगा। किन्तु पहले ही एक अड़चल आ पड़ी,—जूता तो है ही नहीं। इधर उधर खोज ढूढकर उसने एक जोड़ा चमौंवा जूता निकाला, पर वह टूटा फटा बेकाम देख पड़ा। पहनकर देखा, तो पाचों अंगुलियां बाहर निकल पड़ीं। खिन्न होकर उसने उसे छोड़ दिया और दूसरा जूता खोजने लगा।

भवानीप्रसाद उसके बड़े भाइ थे,—आजकल उनका पता नहीं है,—वह बड़े भयङ्कर शिकारी थे। पिताके सामने हाथी या घोड़ेपर सवार हो अनेक सहचर तथा विविध अस्त्र शस्त्र लेकर साहसी और बलिष्ट भवानीप्रसाद शिकार खेलने निकलते थे। भवानीप्रसादका एक जूता विलायती हण्टिङ्ग बूट था। वह घुटनेतक आता था। रामप्रसादने उसे झाड़ पोंछ कर बड़ी खुशीसे पहना। वह महामहिमान्वित महा जूता रमाप्रसादकी जांघतक जा पहुंचा। अलङ्कारके भारसे झुक जानेपर भी सुन्दरी प्रसन्न रहती है। जूतेसे प्रपीड़ित होनेपर भी रमाप्रसाद आज परम पुलकित है।

कपड़ा एक ही था। रमाप्रसाद यह अच्छी तरह जानता था, सो उसे झाड़कर उसने पहना। काछाको लांग बनाया और लांगको काछा। इतना करनेपर भी फटे हुए भागको रमाप्रसाद अच्छी तरह छिपा न सका। वह एकबार जूतेकी ओर देखता था और फिर फटे कपड़ेकी ओर नजर फेरता था। फटे कपड़ेको जितना देखता था उतना ही उसका मन विह्वल होता था। लाचार धोतीको खोलकर फिरसे पहनने लगा, किन्तु वह फटा हुआ हिस्सा किसी तरह मानता न था,—मानो वह सजीव होकर रमाप्रसादका उपहास करने लगा,—रमाप्रसादकी आखोंके सामने नाचने लगा। रमाप्रसादको सन्देह हुआ, कि फटा हुआ अंश बढ़ता जाता है। धीरे धीरे उस फटे हुए अंशने रमाप्रसादकी आंखोंके सामने विराट आकार धारण किया। अब रमाप्रसाद जिधर देखता है उधर ही उसे फटा कपड़ा देख पड़ता है। पृथ्वी, आकाश, घर सब जगह रमाप्रसादको फटा कपड़ा ही दीखने लगा।

रमाप्रसाद कांपने लगा—उसका सिर घूम उठा। लाचार बैठ गया। करकमलमें मोहर रहनेपर भी बालक रमाप्रसाद बड़े मुश्किलमें पड़ा। जिसे दूसरा कपड़ातक नहीं है, वह चिन्ता करके ही क्या करेगा?

काल पाकर पुत्रशोक भी दूर हो जाता है,—गभीर समुद्र भी टापू बन जाता है,—कुछ देरके बाद रमाप्रसादका हृदय भी स्थिर हुआ। रमाप्रसादने एक युक्ति निकाली,—पिताके समयकी बिछानेकी बड़ी चादर है। इसीको इस ढङ्गसे ओढ़कर चले गे, कि फटा हुआ अंश किसी तरह देख न पड़ेगा। ऐसी

चादरको उलटकर वह ओढ़ने लगा। धोती तो एक जगह फटी थी, चादर तीन जगह फटी थी। बच्चोंने खेलके मिस उंगली डालकर छेदोंको और बढ़ा दिया था। दुर्भाग्यवश वही तीनो छेद रमाप्रसादकी पीठपर आ पड़े। चादरने धोतीके फटे हुए अंशको तो छिपा दिया, पर पीठपर तीन नये छेद निकल पड़े। रमाप्रसादकी गोरी पीठ मानो छेदोंसे झाकने लगी। रमाप्रसादने दाहिने हाथसे टटोल टटोलकर तीनो छेदोंको देखा, फिर मन ही मन कहा,—"अरे। यह क्या? एक ढाकनेमें तीन निकल आये। कुरता नहीं है क्या? शायद न होगा। उस दिन मानो हमारे लिये बहुत खोजा ढूंढा था, पर मिला एक भी न था। अच्छा, हम एकबार क्यों न खोज देखें?

रमाप्रसादने सारा घर रत्ती रत्ती खोज डाला, पर कहीं भी अङ्गरखा, कुरता या कोट न पाया। एक कोनेमें एक रूमाल पड़ा मिला। अब रमाप्रसाद यह सोचने लगा, कि जहां चादर फटी है वहां पीठपर इस रूमालको क्यों न धर लें? रूमाल पीठपर रखकर ऊपरसे चादर ओढ़ लेंगे फिर पीठ कोई न देख सकेगा। लेकिन रूमालको रखेंगे कैसे? वह तो खसककर गिर पड़ेगा। अच्छा, गोंद लगाकर इसे पीठमें साट क्यों न लें?

रमाप्रसाद! इसबार तुमने दुनियाको हंसा दिया। सच्चा मनकी बुद्धिके अनुसार तुम मन ही मन जो कल्पना कर रहे हो, उसे अगर तुम प्रकाशरूपसे उच्चारण करते, तो लोग तुम्हें पागल कहते। अतएव अब चुप रहो, और मत बोलो। मनही मन जो कुछ कहा, वही यथेष्ट हुआ है। अब आत्म

दमन करो। स्थिर होओ। लज्जा किस बातकी? जब जैसी व्यवस्था होती है, तब तैसा ही चलना पड़ता है। यदि सचमुच ही रूमालमें फटा हुआ अंश सहज ही छिप भी जाता, तौभी तुम्हारा अधिक आदर न होता। उधर देखो, तुम्हारी माता चली आती हैं, जल्दी चादरको ओढ लो, फटे हुए अंशकी बात और मत सोचो।

जननी कात्यायनीने समीप आकर पुत्रसे कहा,—"बेटा! तुम अबतक मोहर भुनाने नहीं गये? नहीं गये, सो अच्छा ही किया। मोहरमें सिन्दूर लगा है। घरमें इमली नहीं है। तालाबके किनारे तिंतिड़िया शाक है। जाओ, थोड़ीसी पत्ती ले तो आओ।"

पुत्र पत्ती ले आया। माता उसके रसमें मोहरको घसने लगी। असली सोनेकी असली मोहर, उसका असली रङ्ग निकल आया। धूपमें मोहर चमकने लगी। माताने धोतीके कोनेमें मोहरको बांध दिया। कोनेको रमाप्रसादने आगे धोतीमें खोंस लिया। ऊपरसे कसकर कमर बांध ली।

रमाप्रसादने छबिल्ल बूट और मैली धोती पहनकर ऊपरसे बिछौनेकी मैली चादर ओढ़ ली। इस तरह चार छिन्न अंशसे सज्जित होकर रमाप्रसाद मोहर भुनाने निकला।

पन्द्रहवां परिच्छेद।



बालक अचानक मोहर तोड़ानेके आनन्दमें था। कहाँ, किसके यहां और क्या कहकर मोहरको भुनाऊं,—अब उसे यह चिन्ता हुई। विशेष, उसका वेश और जांघतक छपिटङ्ग बूट देखकर लोग उसे टकटकी बांधकर निहारने लगे। किसीने कहा,—"यह तो जूता नहीं जूतेका दादा है। कोई बोल उठा,—दरिद्रके पैरमें इतना बेशकीमती जूता क्यों? इस जूतेके दामसे पहननेके लिये एक कपड़ा खरीद लेता, सो अच्छा होता। धोती घुटने ही तक है,—देहमें कपड़ा नहीं,—अहा। जूतेकी बहारभी देखिये। लक्ष्मीके विमुख होनेपर शायद ऐसा ही होता है? अभी जूता बेच डाले।—बेचकर एक कपड़ा खरीदे।"

रमाप्रसाद राह राह चला जाता है और लोगोंकी ऐसी मधुर बोली सुन रहा है। वह कभी कभी पीछे लौटकर देखता है, कि लोग मेरे पीछे पीछे तो नहीं आते। जिस दूकानमें वह बैठने जाता है, उस दूकानको लोग घेरकर खड़े हो जाते हैं। यह देखकर रमाप्रसाद वहां नहीं बैठता,—तुरन्त ही उठकर दूसरी जगह चला जाता है।

गांवके एक किनारे किसी मोदीकी बड़ी भारी दूकान थी। लोग पीछा करना छोड़ दें, इस ख्यालसे वह दूकानकी ओर दौड़ चला। छपिटङ्ग जूतेकी बेढब आवाज होने लगी। कुछ

क्षमा करो। स्थिर होओ। लज्जा किस बातकी? जब ऐसी अवस्था होती है, तब ऐसा ही करना पड़ता है। यदि सचमुच ही स्नानमें फटा हुआ वस्त्र सहज ही छिप भी जाता, तोभी तुम्हारा अधिक आदर न होता। उधर देखो, तुम्हारी माता चली आती हैं, जल्दी चादरको ओढ़ लो, फटे हुए अंगरखेको ताक और मत सोचो।

जननी कात्यायनीने समीप आकर पुत्रसे कहा,—"बेटा! तुम अबतक मोहर भुनाने नहीं गये? नहीं गये; सो अच्छा ही किया। मोहरमें सिन्दूर लगा है। घरमें इमली नहीं है। तालाबके किनारे सिपनिया शाक है। जाओ, थोड़ीसी पत्ती ले तो आओ।"

पुत्र पत्ती ले आया। माता उसके रसमें मोहरको घसने लगी। असली सोनेकी असली मोहर, उसका असली रङ्ग निकल आया। धूपमें मोहर चमकने लगी। माताने धोतीके कोनेमें मोहरको बांध दिया। कोनेको रमाप्रसादने आगे धोतीमें खोंस लिया। ऊपरसे कसकर कमर बाँध ली।

रमाप्रसाद छब्बिङ्ग बूट और मैली धोती पहनकर ऊपरसे बिछौनेकी मैली चादर ओढ़ ली। इस तरह चार छिन्न वस्त्रसे सज्जित होकर रमाप्रसाद मोहर भुनाने निकला।

पन्द्रहवां परिच्छेद ।



बालक अबतक मोहर तोडानेके आनन्दमें था। कहां, किसने यहां और क्या कहकर मोहरको भुनाऊं,—अब उसे यह चिन्ता हुई। विशेष, उसका वेश और जाघतक छाफिङ्ग बूट देखकर लोग उसे टकटकी बांधकर निहारने लगे। किसीने कहा,—"यह तो जूता नहीं जूतेका दादा है। कोई बोल उठा,—दरिद्रके पैरमें इतना बेशकीमती जूता क्यों ? इस जूतेके दाममें पहननेके लिये एक कपडा खरीद लेता, तो अच्छा होता। धोती घुटने ही तक है,—देहमें कपडा नहीं,—अहा। जूतेकी बहारतो देखिये। लक्ष्मीसे विमुख होनेपर प्रायः ऐसा ही होता है? अभी जूता बेंच डाले।—बेंचकर एक कपडा खरीदे।"

रमाप्रसाद राह राह चला जाता है और लोगोंकी ऐसी मधुर बोली सुन रहा है। वह कभी कभी पीछे लौटकर देखता है, कि लोग मेरे पीछे पीछे तो नहीं आते। जिस दूकानमें वह बैठने जाता है, उस दूकानको लोग घेरकर खडे हो जाते हैं। यह देखकर रमाप्रसाद वहां नहीं बैठता,—तुरन्त ही उठकर दूसरी जगह चला जाता है।

गांवके एक किनारे किसी मोदीकी बडी भारी दूकान थी। लोग पीछा करना छोड दें, इस ख्यालसे वह दूकानकी ओर दौड पड़ा। छाफिङ्ग जूतेकी बेढब आवाज होने लगी। कुछ

लड़के रमाप्रसादको दौड़ते देखकर आनन्दसे उसके पीछे पीछे दौड़ने लगे। रमाप्रसादने देखा, कि यह तो और भी बुराई हुई।—दौड़नेसे भी छुटकारा नहीं है;—यह सबतो पीछा किये ही चले आते हैं। यह देखकर वह फिर धीरे धीरे चलने लगा। उसे धीरे धीरे चलते देखकर लड़के भी धीरे धीरे चलने लगे।

रमाप्रसादने सोचा यह दूकान बड़ी है। मोदी बहुत और धनी है। सुतरां वह मोहर लेकर रुपये देगा। यही सोच कर वह दूकानमें गया। बूढ़े मोदीने अपने स्वाभाविक कर्कश स्वरसे रमाप्रसादसे पूछा,—"क्या है? तुम्हें शीघ्र ही गड़बड़ा करने आना है—कहो, क्या चाहते हो?"

बालक रमाप्रसादने कहा,—"मैं चाहता कुछ भी नहीं,—लेकिन—" रमाप्रसादको और कुछ कहना नहीं पड़ा।

मोदी रुखाईके साथ बोल उठा—'अगर कुछ नहीं चाहिये तो क्या यहां तमाशा देखने आये हो?

रमाप्रसाद। आपसे कुछ काम है।

मोदी। हमसे तुम्हारा क्या काम है? चावल लो, दाल लो, घी लो,—पैसा निकालो, अभी देते हैं। काम वाम यहां कुछ न होगा।

इसके बाद जब बुड्ढे मोदीकी नजर रमाप्रसादके जूतेकी ओर पड़ी, तब उसने डरकर कहा,—"अरे! यह क्या है! तुम अभी हमारी दूकानसे चले जाओ। ऐसा घोड़सवार कैसे पेड जैसा लम्बा जूता पहनकर आये। अभी हमारी दूकानसे भाग जाओ। जाओ, जाओ, भाग जाओ। चाहे तुम जो हो,

हमारी दूकानसे अभी चले जाओ। तुम्हें देखकर हमारा कलेजा कांप रहा है। जो लड़का ऐसा जूता पहन सकता है, वह सब कुछ कर सकता है।

रमाप्रसाद। महाशय! नाराज क्यों होते हो? हम चुप चाप आपके कानमें एक बात कहना चाहते हैं।

मोची। अरे बापरे बाप!—यह तो होनेका नहीं। तुम हमारा कान काटकर हमें कनकट्टा बना दोगे। तुम यहांसे जल्द चले जाओ;—हम अभी दूकान बन्दकर देंगे।

देखते देखते उन पीछे दौड़नेवाले लड़कोंकी भीड़ दूकानमें आ गई। "त्राहि मधुसूदन" कहते हुए वह बूढ़ा दूकानदार बोल उठा,—"इनके साथ साथ अब ये सब कौन आये?"

बात बिगड़ती देखकर रमाप्रसाद वहांसे चल खड़ा हुआ। सोचा,—क्यों ऐसा होता है? क्या करें? सब कोई हंसी दिल्लगी करते हैं, कोइ क्रोध भी करता और कोई कोई घरसे भी निकाल देता है। किसीसे मोचरकी बाततक नहीं कहने पाते,—यह होता है क्या?" अन्तमें उसने स्थिर किया,—"सब आफतकी जड़ यही जूते हैं। अब इन्हें नहीं पहनेंगे। उतार डालेंगे। नङ्गे पैर ही जायगे।"

दूकानसे बाहर निकलकर एक पेड़के नीचे बैठकर रमाप्रसाद जूता उतारने लगा, पर यह विलायती भीषण जूता क्या सहज ही उतरता है? पहननेके वक्त बड़ी खुशी, बड़े आनन्दसे पहना था,—अब निराश होकर क्षुब्ध मनसे जूता उतार रहा है। जूतेके आगे और बटन लगे हैं, बकलस लगा है, फीता पाश बंधा है—हठात् खोल डालनेका साहस किसे है?—

फिर उसे अभ्यास न था। इधर जूता खोलते देखकर चारों ओर दर्शक इकट्ठे हो गये। दर्शक व्यगणित और अभिनेता एक ही है। किसी वृद्ध आदमीने कहा,—"बेटा! तुमने ऐसा जूता क्यों पहन लिया था? पैरसे खून चलने लगा। छुरी हो, तो जूतेको काटकर पैर निकाल लो। किसीने कहा,—"यह छोकड़ा पागल है,—अगर पागल न होता, तो जूता क्यों खोलता? क्या कोई भला आदमी जूता उतारकर नङ्गे पाँव राह चलता है?" एक आदमीने इस बातका अनुमोदन करके कहा,—"आपका कहना बहुत दुरुस्त है!—ग्यारह बजनेका वक्त भी है, धूप तेज पड़ रही है,—सो इस पागलका शिर गर्म हो उठा है,—एक घड़ा जल इसके शिरपर ढाल देना क्या अच्छा नहीं है?"

परोपकार व्रतमें,—मनुष्य अन्य समय चाहे जितना अल्प व्रती क्यों न हो,—किन्तु इस समयकी दर्शकमण्डलीने उसे पूर्णमात्रामें पालन किया। एक घड़ा जलका नाम लेते ही न जानें किसने आकर रमाप्रसादके शिरपर घड़ा भर शीतल जल उझल ही तो दिया! रमाप्रसाद भीत, चकित, कम्पित और विभीषिकाग्रस्त होकर एकदम चिल्ला उठा। लोगोंने समझा, पागल अब उत्कट पागल हो गया। दर्शकगण काटे जानेके भयसे इधर उधर भाग खड़े हुए। रमाप्रसाद लोगोंसे फ़ुरसत पाकर एक गृहस्थके घरमें घुसा।

सोलहवां परिच्छेद।



रमाप्रसाद प्राण बचानेके लिये जिस गृहस्थके घरमें घुसा, वह एक भला आदमी था। ब्राह्मणके लड़केको विपन्न देखकर उसने लड़कोंकी भीड़ हटा दी। जिसमें कोई दिक न करे, इसलिये उसने किवाड़ बन्द कर लिये। उसे जब यह मालूम हुआ, कि बालक शङ्करीप्रसादका लड़का है, तो उसने लड़केकी खूब खातिर की।

उस भले आदमीने रमाप्रसादका कपड़ा सुखा दिया और कुछ जलपान करनेको कहा। रमाप्रसादने कहा,—"जबतक हम माताकी आज्ञा पालन करके घर न जायगे, तबतक कुछ भी न खायगे।"

भला आदमी। क्या आज्ञा है,—हमसे कहनेमें कोई हानि है?

"हानि कुछ भी नहीं है,"—यह कह कर रमाप्रसादने मोहर भुनाने और अपनी आकांक्षाकी बात आदिसे अन्ततक उसे कह सुनाई।

आदमी। यह गांव बड़ा है,—ऊधम मचाने और मुक़दमा लड़नेमें इस गांवके अनेक आदमी जबरदस्त हैं सही,—पर रुपया किसीके पास नहीं है। विशेष, मोहर लेकर रुपया कोई भी न देगा।

रमाप्रसाद। तब उपाय क्या है? बिना मोहर भुनाये और रुपया लिये घर लौट जानेसे तो कोई काम ही न चलेगा।

आदमी। उपाय एक है। आप एक काम कीजिये! इस गांवसे प्रायः पौन मीलकी दूरीपर गङ्गाजीके किनारे एक नीलकोठी है। इस समय वहां बहुत रुपया मौजूद रहनेकी बात हमने सुनी है। नीलकोठीके दीवान दयाल बाबू आपके पिताको अच्छी तरह जानते हैं। दोनो आदमियोंसे खूब मेल था। गोमास्ता गोपाल बाबू भी आपके पिताके अनेक प्रकारसे ऋणी हैं। इसलिये हमें विश्वास है, कि वहां जानेसे मोहर तुरन्त भुन जायगी।

रमाप्रसाद यह बात सुनकर प्रसन्न हुआ। जूतेको वहीं रख कर कोठीकी ओर चला। वह भला आदमी रमाप्रसादको मैदानतक पहुंचा आया।

नीलकोठीका काम इस समय खूब धूमधामसे चल रहा है। सालमें प्राय दो सौ मन नील पैदा होती है। जिस साल ईश्वरकी कृपासे फसल अच्छी होती है, उस साल अढ़ाई सौ मन नील भी हो जाती है। कोठीकी अट्टालिका इस समय चार कोससे देख पड़ती है।

समय दोपहरका है। रमाप्रसाद बड़ी आशा लगाये, कोठीका शिखर, देखते झपटा चला जाता है। वह मन ही मन अनेक तर्क वितर्क करने लगा,—"इसबार जरूर ही मोहरके रुपये मिल जायगे।" "मिल जायगे",—यह ख्याल होते ही उसका चेहरा खिल जाता है। "अगर न मिले,"—यह बात जब मनमें आती है, तब उसका मुंह सूख जाता है और

चेहरेपर उदासी छा जाती है। कभी आल्हाद और कभी विषाद,—कभी ज्योत्स्ना और कभी काले मेघ,—इस तरहका उलट पलट रमाप्रसादके मनमें होने लगा।

कोठीके दरवाजे दरवान बैठा है। एक कङ्गाल लड़केको अन्दर जानेके लिये तय्यार देखकर उसने कहा,—"भीतर जानेका अभी हुक्म नहीं है बाहर ही खड़े रहो।"

रमाप्रसादने कहा,—"दयाल बाबू हमे अच्छी तरह जानते हैं,—उनसे मुलाकात करना है।"

दरवान। बड़े बाबू यहां नहीं हैं,—आज सात दिन हुए वह बीमार होकर घर चले गये हैं। नायबदीवानजी यहां हैं।

रमाप्रसाद। दयाल बाबू नहीं हैं, तो कुछ चिन्ता नहीं,—गोपाल बाबूसे भेट होनेसे ही काम निकल जायगा। तुम अन्दर जाने दो,—तुम्हारे ऊपर किसी तरहकी आफत न आवेगी।

दरवानने देखा, कि यह दरिद्र लड़का बड़े बाबू और गुमाश्ताजीका नाम ले रहा है। अवश्य ही इनसे लड़केका घना सम्बन्ध होगा। और कुछ न कहकर उसने राह छोड़ दी।

नायबदीवान जातिके क्षत्रिय हैं। बदन लम्बा और दोनो आंखे गोल हैं। शरीरमें विलक्षण सामर्थ्य है। प्रजा शासन करनेमें अद्वितीय पुरुष हैं। नाम वीरभद्र सिंह है।

वीरभद्र निर्दय निठुर और कर्त्तव्यपरायणके नामसे देशमें प्रसिद्ध हैं। उनके क्रोधसे दिशा कांपती है। उनकी लट्ठबाजीके डरसे अङ्गरेज कोठीवाल भी घबराया करते हैं।

दो एक दिग्विजयी वकील हाथमें न रहनेसे किसी किसी

है, उसकी आंखोंसे आंसू भी बहता है। बालक रमाप्रसाद प्रकाश्यत "मा" नाम उचारण न कर सका,—पर मन ही मन मा, मा कहकर पुकारने लगा और जलपूर्ण नयनको इस तरह कहने लगा,—"हे नयन! क्षमा करो। हे अश्रु। दीन बालकपर दया करो। एकबार शान्त होओ। विगलित होकर हमारे गालोंको तर मत करो। मेरी आंखोंमें आंसू देखकर अभी मुझे चोर कहकर पकड़ ले गे।" किन्तु निठुर नैनोंने उस कातर वचनपर कुछ भी ध्यान न दिया,—दुर्जय अश्रुने उस करुण बालकी याद नहीं किया,—दोनो आंखोंसे आंसू की झड़ी लग गई।

बालक रमाप्रसादने सोचा, कि इसबारतो मृत्यु निश्चय आई। मरनेके पहले आदमी बचनेकी चेष्टा करता है। उसनें एकबार ऊपरकी ओर ताककर, आंखमें कुछ पड़ जानेका बहाना करता हुआ आंखोंको पोंछ डाला।

रमाप्रसादका हृदय अनेक प्रकारके भावोंके तरङ्गसे पूर्ण हुआ। वह मनहीमन कहने लगा—"मा! तुमने मुझे मोदर भुनाने क्यों भेजा था? मैंतो अब मरा, मा! क्या उपाय होगा, मा!

"मा! तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है। मेरा भाग्य ही मन्द है—इसीसे ऐसा हो रहा है। तुमने तो मुझे अकेले जानेके लिये मना किया था। तुम तो रघुन्यालको साथकर देनेको चाहती थी। मैंने उस समय तुम्हारी बात सुनी नहीं। माकी बात न सुननेका फल साथ ही भोगना पड़ा।

और हे रघुदयाल! तुम्हीं उस वक्त कहा छिप रहे?

कबसे यहाँ इतनेतक तुम देख नहीं पड़े,—इसका कारण क्या है? तुम जानते हो कि घरमें चावल नहीं है, बच्चोंके लिये दूध नहीं है,—यह जानकर भी तुम निश्चिन्त भावसे दूसरी जगह कैसे बैठ रहे? हम लोगोंका कष्ट देखकर अन्तमें शायद तुम भी भाग खड़े हुए? छि! रघुदयाल क्या यही तुम्हारा काम है? रघुदयाल! मा तुम्हें बड़ा बेटा कहती थीं। हम लोग तुम्हें दादा कहते थे। सरदार दादा! तुम्हारा छोटा भाई रमाप्रसाद घोर विपदमें पड़ा है, क्या तुम आकर बचाओगे नहीं?"

बालक रमाप्रसादको अब अपने बड़े भाई भवानीप्रसादकी याद आई। बालक मानो भावसागरमें निमग्न हुआ। मन ही मन कहा,—"बड़े भय्या! और क्या आपसे भेंट न होगी? छोटे भाईको चाहे दिखाई मत दो, पर माको तुम्हारे लिये एकान्तमें चुपचाप रो रोकर अन्धी हो चलीं भय्या! तुम्हारी बात कहते ही मा मुझे ढाढ़स देकर कहती है,—"चिन्ता क्या है?—तुम्हारे बड़े भय्या आवेंगे,—पर इसके बाद ही माके नेत्रोंमें आंसू देख पड़ते हैं। बड़े भय्या! मा इस तरह और कितने दिनोंतक रोवेंगी? मेरे समझानेपर न रहने होसे मा रोने लगती हैं।

"भय्या! माकी बलाइसे चाहे आपका हृदय कातर न होता हो, पर भाभीजीकी दशा तो आंखसे देखी नहीं जाती। उनका वह गौरवर्ण, सोने जैसी उज्ज्वल कान्ति,—भय्या! कहनेसे क्या विश्वास कीजियेगा, एकदम पानी पड़ गई है। अब उनके वेष नव जलधर जैसे नहीं रहे। उन्होंने

कैंचीसे सब काट डाला है। उन्हीं बालोंका शिर-बंधना बनाकर बेच लेती है,—जो पैसा मिलता है उससे लक्ष्मीके वास्ते दूध लिया जाता है। कभी कभी उसीसे लक्ष्मीके लिये जलेबी खरीदी जाती है। बड़े भय्या! भाभीजी इस समय दो चार मुट्ठी अन्नसे अधिक नहीं खाती,—कहती हैं, इतने हीमें पेट भर गया। भय्या! उनका मुंह सूख गया है। देह सूख गई है। पहले जैसा शरीर था, अब उसकी चौथाई भी न रही। उनकी आंखोंसे आंसू टपकते हैं, कि खून गिरता है, सो समझ नहीं सकते। भय्या! उनके सिवाय एक वस्त्रके और दूसरा कपड़ा नहीं है, वह भी कई जगह फटा है। भय्या! उनके कुछ भी नहीं है,—केवल मांगका सिन्दूर अब भी दप् दप् चमक रहा है। भय्या! चाहे मुझसे रुष्ट मिलिये, पर एकबार उन्हें दर्शन दे आइये। मैं तो मरनेको बैठा हूं,—यदि इस समय एकबार भाभीजीको आप दर्शन दें, तो मैं आनन्दसे प्राणत्याग करूंगा।

"भाभीजीको दर्शन देनेकी आवश्यकता नहीं है,—एकबार लक्ष्मीको दिखाई दीजिये,—एकबार उसे गोद लीजिये। जिस लक्ष्मीके आंख ओट हो जानेसे आपको चारो ओर अन्धकार देख पड़ता था,—जिस लक्ष्मीके साथ बैठकर बिना भोजन किये आपका पेट न भरता था,—जिस लक्ष्मीको रत्न भूषण,—हजारों रुपयेके हीरे मोतीसे अलङ्कृत करके भी आपको तृप्ति न होती थी,—भय्या! आज वही लक्ष्मी दूधके लिये तरसती है,—एक अच्छे कपड़ेके लिये रोती है। महल्लेकी किसी लड़कीको अच्छा कपड़ा पहने देखकर लक्ष्मी घर दौड़ी आती

है और माका गला पकड़कर कहती है,—'मा। बाबा कब आवेंगे।—बाबाके आनेपर हमें अच्छा कपड़ा मिलेगा,—क्यों मा?' भय्या! अपनी प्यारी लक्ष्मीको एकबार देख जाइये,—उसे गोद लेकर एक अच्छा वस्त्र दे जाइये,—लक्ष्मी उसे पहनकर बाहर निकले। इसके बाद यदि आपकी इच्छा हो, तो चले जाइयेगा। भय्या! लक्ष्मी अब कुछ बड़ी हुई है। आप उसे साढ़े तीन वर्षको छोड़ गये थे,—अब लक्ष्मी प्रायः पांच वर्षकी हुई है,—आगेवाले दोनो दांत गिर पड़े थे, अब फिर निकले आते हैं। भय्या! लक्ष्मी जब अपने छोटे छोटे दांतोंसे आपको काटती थी, तो आप उसे बहुत प्यार करते थे। भय्या! अब लक्ष्मीके कई दांत निकल आये हैं। आप शीघ्र ही एक बार आइये। लक्ष्मीके केश पीठपर लटकते हुए और भी नीचे चले जाते हैं,—आप आकर एकबार देख जाइये। लक्ष्मी भिखारियोंसे सुनकर गाती है,—

"दीनबन्धु दूसरो कह पावौं। को तुम बिन परपीर माइ है केहि दीनता सुनावौं॥"

भय्या! आप आकर लक्ष्मीके मधुर कण्ठका गाना सुन जाइये। भय्या! अगर देर कीजियेगा, तो फिर लक्ष्मीको ऐसी न देख पाइयेगा। जल्दी आइये, भय्या!"

उस वक्त रमाप्रसादके मनमें इस भावकी अनेक बातें नाना रूपसे उदित होने लगीं। मृत्युके पहले मनुष्यके मनमें अनेक बार पूर्वस्मृति जाग उठती है। रमाप्रसाद फिर सोचने लगा,—"क्यों ऐसा होता है? क्यों हम लोगोंको इतना कष्ट हो रहा है? बाबाके इतना धन छोड़ जानेपर भी हम लोग क्यों

पथके भिखारी हो गये ? माता दिनरात शङ्करीको पुकारा करती हैं—क्या शङ्करीको दया न आई ?

"हे मा शङ्करी। हे विपदभञ्जनी। क्या मेरे उद्धारका कोई उपाय नहीं है ? मैं आज ही मर जाउ" तौभी कुछ दुःख नहीं। है,—किन्तु लक्ष्मीको भोजन न मिलेगा।—बिना इस मोहरके भुने लक्ष्मी दूध न पावेगी,—अन्न न पावेगी,—लक्ष्मी मर जायगी। और उधर अतिथिगण गङ्गागर्भमें वास कर रहे हैं। बिना इस मोहरके भुने उनकी सेवा किस तरह होगी। उनकी सेवा न होनेसे मा उपवास करेगी। माके उपवास करनेपर भाभीजी भी नहीं खायगी। मा शङ्करी। सच सच कह दो, तब क्या आज मैं सवंश निधन होऊंगा ?

"आइये भय्या। आइये—आज हम लोगोंका सवंश निधन देख जाइये। भय्या। एकबार आप शिकार खेलने गये थे और एक हाथीका बच्चा पकड़ लाये थे। उसपर लक्ष्मीको चढ़ा कर कहा था,—हमारी लक्ष्मी गजलक्ष्मी है। वही गजलक्ष्मी, रूपिणी स्वयं लक्ष्मी आज अन्न बिना मर रही है—भय्या। आप एकबार आकर देख जाइये।

"भय्या। मन ही मन आपको इतना पुकारा, पर तौ भी आप न आये ? भय्या। आपकी वह प्रीति कहां गई ? भय्या। हम लोगोंके किस अपराधके कारण आप नहीं आते ? कोई कसूर तो किया नहीं।

"भय्या। तब क्या आप इस संसारमें नहीं हैं ? कहां गये, भय्या ! क्या सचमुच ही आप परलोकमें हैं ? अब क्या आपको इस संसारमें न देख सकूंगा ?"

भाई भवानीप्रसाद इतनी देर बुलाये जानेपर भी न आये,—बालक रमाप्रसादकी रक्षा उन्होंने न की।

उनीसवां परिच्छेद।

सोचते सोचते रमाप्रसादको ज्ञान हुआ। मैं क्यों मरूं? मैं सच बात ही क्यों न कहूं? मैं एक रईसका लड़का हूं,—क्या नायबदीवान मेरी बातका विश्वास नहीं करेंगे? इस समय सच बात कहकर एकबार प्रायश्चितकी चेष्टा करना उचित है। मैं हाथ जोड़कर कहूंगा,—"मेरे पिताका नाम शङ्करीप्रसाद है। बहुत दिन हुए मेरे बड़े भाई कहीं चले गये हैं। उनका कुछ पता नहीं मिलता। माताके पास कुछ भी नहीं है,—हमलोगोंको खानेके लिये कुछ भी नहीं है। माके पास लक्ष्मीपूजाकी एक मोहर थी। उसीको माने मुझे धान ख रीदने और अतिथिसेवाके लिये भुनानेको दिया है। उसीको मैंने धोतीके एक कोनेमें बांधकर आगे खोंस लिया है। मैंने आपकी मोहर नहीं चुराई। मा शङ्करीकी कसम खाता हूं, मैंने मोहर नहीं चुराई। यह देखिये,—यह वही मोहर है।

इतना कहकर क्या मोहरको खोलकर दिखानेसे काम नहीं चलेगा? मेरी बातका विश्वास नायबदीवान करेंगे तो? यदि विश्वास न करें, तो क्या होगा? मारपीट तथा बन्धन आदि सब सहना पड़ेगा।

तब क्या सच नहीं कहूंगा? नङ्गाझोरी लेनेके वक्त तो मोहर जरूर ही निकल आयगी। फिर मारपीट और बन्धन

रमाप्रसादका मुंह सूख गया, देह कांपने लगी, कुछ पसीना भी निकला, तब उनका सन्देह और भी दृढ़ हो गया। रमाप्रसादका भावान्तर देखकर नायबदीवानने स्थिर किया, कि निश्चय ही यही लड़का चोर है।

जिस समय रमाप्रसाद धोतीका कोना निकालनेके लिये चेष्टा कर रहा था, उस समय वह मानो बाह्यज्ञानशून्य था,—मूर्च्छित होकर जमीनपर गिरनेके सब लक्षण मानो उसमें वर्त्तमान थे। वह इस समय पागल सदृश है,—पहले कह आये हैं, रमाप्रसाद सोच रहा है, इस जगह कोई नहीं है,—न आदमी हैं और न कोई जीव ही है। रमाप्रसादने इसी प्रकार अवस्थामें धोतीके कोनेको बाहर निकाला,—उसमें कोई गोल चीज बंधी हुई है,—नायबदीवानने इसबार उसे स्थिर चक्षुसे देखा। अब वह निमेषशून्य लोचनसे रमाप्रसादकी कार्रवाई देखने लगे।

रमाप्रसादने उसी प्रकार अवस्था चीमें गांठ खोलकर मोहरको निकाला। उस समय नायबदीवानकी ही नहीं वरन और भी कई आदमियोंकी नजर मोहरपर पड़ी। ज्यों ही मोहर बाहर निकाली गई त्यों ही नायबदीवान बाघकी भांति गर्जकर रमाप्रसादकी ओर लपके। सब आदमियोंने देखा, कि रमाप्रसादके हाथमें मोहर है। "चोर पकड़ा गया," "चोर पकड़ा गया,"—इस हल्लेसे सारा मकान गूंज उठा।

चाहे नायबदीवान बाघकी नाईं गर्जें और चाहे लोग चोर, चोरका हल्ला ही मचावें,—पर रमाप्रसाद अपनी जान अपने काममें लगा है। अभी नायबदीवान निकट नहीं

आये थे,—पर रमाप्रसादने पूर्वसङ्कल्पके अनुसार मोहरको हाथमें लेकर नायबदीवानके जूतेकी ओर छुटका दिया। रमाप्रसादकी इस कार्रवाईको सब आदमियोंने अच्छी तरह देखा। फिर हल्ला हुआ,—"चोर, चोर, चोर!"

मोहरको छुटकाकर रमाप्रसाद बैठ न सका। वह लेट गया।

रमाप्रसाद मूर्च्छित हो गया।

रमाप्रसादने कुछ बाह्यज्ञानशून्य होकर मोहरको निकाला था,—यह कोई न जान सका,—एवं रमाप्रसादने बाह्यज्ञानशून्य होकर नायबदीवानके जूतेके पास मोहरको छुटका दिया था,—यह भी कोई समझ न सका। रमाप्रसाद जमीनपर लेटकर एकदम चेतनाविहीन हो गया,—यह भी कोई जान न सका। लोगोंने केवल समझा,— रमाप्रसाद चोर है। चोरीका माल धोतीके कोनेमें बांधकर छिपा रखा था। अभी खानातलाशी होने जा रही है — यह देख रमाप्रसाद मोहर निकालकर नायबदीवानके जूतेके नीचे उसे रखनेकी चेष्टा कर रहा था। अतएव रमाप्रसाद— चोर,—पक्का चोर है।

अतएव रमाप्रसादको मारो पीटो, धरो पकड़ो,—यह बात मुंह खोलकर और किसीको न कहना पड़ी। नायबदीवानने अपने जूतेके नीचेसे मोहरको उठा लिया और साथ ही अपने दहिने जूतेको हाथमें लिया।

अब उस मूर्च्छित ब्राह्मण बालककी पीठपर चरित्रशोधक नायबदीवान श्रीयुक्त वीरभद्रसिंह महाशय पटापट जूता लगाने।

लगे। बालककी कोमल पीठ फट गई, खूनकी धारा बह निकली। पार्षदवर्ग नायबदीवानको उत्साह देने लगे,—"अभी नहीं हुआ,—और लगे,—चोरको अभी पूरी सजा नहीं मिली। हां,—लगे,—जूता लगे,—घूसा लगे,—लाठी लगे।"

यह क्या? लड़का तो बोलता भी नहीं। चोटकी पीड़ासे "आ' ऊ," भी नहीं करता। ऐसी भारी मार पड़नेपर भी "मरा," "गया" कुछ भी नहीं बोलता।

नायबदीवानने कहा,—"यह लड़का बड़ा बदमाश है। मूर्च्छा या मृत्युका बहाना करता है। उसने यह विचार लिया है, कि मुर्देकी तरह पड़े रहनेसे कोई उसे ज्यादा नहीं पीटेगा, पर मैं वीरभद्रसिंह हूं,—मुझे कोई धोखा नहीं दे सकता,—"

इतना कहकर वीरभद्रने बड़े जोरसे कहा,—"अरे! कोई है? जल्दी हमारा नुकीला भाला ले आ।—हम इस बदमाश छोकड़ेको घाव छेदकर उसमें नमक भरेंगे।—देखें, बोलता है, कि नहीं।"

गोपाल बाबूने वीरभद्रसे कहा,—मेरा मन कैसा कैसा तो करता है। यह लड़का चाहे मर गया हो, चाहे मूर्च्छामें पड़ा हो। देखें, नाकसे सांस निकलती है, कि नहीं?

वीरभद्र। (उत्साहसे) आप क्या पागल हो गये हैं? दुष्ट लड़का बहाना कर रहा है। इस तरहका मरना हमने बहुत देखा है। घावमें भाला घुसेड़कर नमक भर देनेसे मरा आदमी अभी जी उठेगा। हम किसीकी बात सुनना नहीं चाहते, हमें कोई कुछ न कहे,—हम इस बदमाश लड़केको

जांघमें भाला घुसेड़ेंगे,—नमक भरेंगे,—और लोहेकी चिलम गर्म्म करके इसका चूतड़ दाग देंगे। कोई है रे। लोहेकी चिलम खूब लाल करके जल्द ले आ।

देखते देखते एक बड़ा भारी नुकीला भाला आ पहुंचा। वीरभद्रने उसे अपने हाथमें लिया। उस समय वह कालान्तक यम जैसे दीखते थे।

गोपाल बाबूने हाथ जोड़कर फिर कहा,—"महाशय! आप मालिक हैं। क्रोध मत कीजिये,—मेरा अपराध क्षमा कीजिये।—यह देखिये,—सचमुच ही यह लड़का बेहोश है। मर गया है, कि नहीं,—ठीक ठीक नहीं कह सकता। लेकिन यह देखिये, इसके पलक नहीं गिरते,—नेत्र स्थिर हैं। जीभ और दांत भी कुछ बाहर निकल आये हैं।"

वीरभद्र। तुम अभी निरे लड़के हो। संसारका हाल अभी अच्छी तरह नहीं जानते हो। मालूम होता है, इस चोर लड़केसे तुम भी मिले हो। नहीं, तो इसका पक्ष लेकर तुम इतनी बातें क्यों कहते?

गोपाल। आप चाहे मुझे जितनी कड़ी बात कहें,—किन्तु मेरी निश्चय धारणा यही है,—या तो यह लड़का मर गया है या मौत निकट ही है। आप एकबार लड़केको उठाकर बैठा देखिये तो;—

वीरभद्र रमाप्रसादको उठाकर बैठाने गये। जबतक वीरभद्र हाथका इशारा दिये रहे तबतक तो रमाप्रसाद कुछ बैठा रहा,—पर फिर लटक गया। ज्यों ही वीरभद्रने हाथ अलग कर लिया त्यों ही रमाप्रसाद धड़ामसे जमीनपर गिर पड़ा।

बीरभद्र ह ह ह-ह करके हंस पड़े। उस विकट हंसीने भयानक भावसे स्थान भर गया।

शीतकालमें सहसा ऐसी दारुण गर्मी क्यों मालूम होती है?—कहीं उल्कापात हो रहा है क्या? कहीं दावानल तो नहीं जल रहा? प्राण व्याकुल क्यों हो रहे हैं? इतनी उत्कट प्यास ही क्यों लग रही है? नरकके काले काले कीड़े क्यों याद आते हैं? हृदयमें भयानक भावके साथ बीभत्सरसकी मिलावट क्यों होती है? यही यही विषैली उत्ताल अंधेरी तरङ्ग!—शायद डूबे!—गये॥

बीरभद्र फिर हो हो हो हो हंस उठे। सब आदमी चुप हैं—मानो निर्जीव चित्र हैं।

इसी बीचमें एक नौकरने लोहेकी चिलमको आगमें लाल करके लोहेकी थालीमें लाकर बीरभद्रके सामने रख दिया। पहलेतो बीरभद्रने उसे खूब उलटी पलटी सुनाई, फिर साथ भाषामें उसे "साला" कहकर गाली दी और गालमें एक थप्पड़ लगाकर कहा,—"साला! इस लाल चिलमको हम पकड़ेंगे कैसे? एक चिमटा लाते न बना? जा, जल्दी चिमटा ले आ! यदि देरी हुई, तो इसी चिलमसे तेरी पीठ दाग देंगे। साला उसे यहां ला और दौड़ जा!"

चिलम रखकर नौकर दौड़ा और चिमटा लेकर लौट आया। बीरभद्रने चिमटा उठा लिया। चिमटेको झटसे पीठपर बड़े जोरसे मारकर कहा,—"साला! पहले ही इसे क्यों न ले आया था?"

इक्कीसवां परिच्छेद ।

अब बीरभद्रने बांये हाथमें भाला और दाहिने हाथमें चिमटा ले लिया। उस भीषण मूर्त्तिको देखकर किसनोंके तो प्राण उड़ गये। बीरभद्रने भैरवस्वरमें कहा,—मेरी आंखोंमें धूल डाल दे, ऐसा लड़कातो हम इस देशमें नहीं देखते। इस छोकड़ेने हमे ठगनेकी बात विचार ली थी, पर हमे ठगनेकी ताकत किसे है? यह छोकड़ा अभी जीता है,—नकाल किये पड़ा है। ही ही ही।—यह देखो, इस लड़केने सामनेके दांत निकाल रखे हैं,—यह सब बहाना है। ही ही-ही! मजा देखो। मजा देखो।—देखते नहीं, यह धीरे धीरे सांस फेंक रहा है। इसबार पकड़ा गया। हमने पकड़ लिया—पकड़ लिया। ही ही ही।—अभी भी कहते हैं,—उठ—उठ—उठके बैठ।—क्यों—अभीतक नहीं उठा, अभीतक दांत निकाले ही है। अभी तुरत दांतको छिपा ले।—अभीतक छिपाया नहीं।—अच्छा, अभी इन दातोंमें एक घूसा लगाते हैं।—इन दातोंको तोड़कर अभी खूनाखूनी किये देते हैं। ही ही ही ही॥"

इतना कहकर बीरभद्र भाला और चिमटा फेंककर बैठ गये और घूसा उठाया। इस बज्रमुष्टिका आकार प्रकार और तेज देखकर ऐसा मालूम होने लगा, कि इस लड़केकी कोमल दन्तपंक्ति क्या चीज है, इससे तो लोहेका मुद्गर भी चूरचूर हो सकता है। आज किसे ऐसी महाशक्ति है, जो इस घूंसेकी गति रोक सके?

उस जगहके और सब आदमी चुप थे। मुंह किसीका भी नहीं खुला,—पर मन ही मन सब कोई हाय, हाय करने लगे। शायद भीतरका हा हा रव भी बीरभद्रके कानमें पड़ जाय, इसलिये सबोंने आखें मूंद लीं।

एक अस्सी वर्षका बूढ़ा, पलितकेश, गलितदन्त, लोल चर्म,—तुरत उठा और जल्दीसे दौड़ जाकर बीरभद्रको दोनों हाथोंसे वेष्टनकर घूंसेके सामने अपनी छाती करके कहा,—"सिंहजी! ब्रह्महत्या मत कीजिये। यह ब्राह्मणका लड़का यद्यपि जीता है,—पर आपके एक घूंसेसे उसके प्राण निकल जायगे। और यदि मर गया है, तो मरेको मारनेसे क्या लाभ,—इस नीलकोठीमें ब्रह्महत्या मत कीजिये।"

ब्रह्महत्याकी बात काम कर गई। बीरभद्रने मुठ्ठी खोल डाली और हाथको हटा लिया। वह वृद्ध मनुष्य भी उनके पास बैठ गया। बीरभद्रने कहा,—"कामके वक्त हम ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं समझते। हम मालिकका नमक खाते हैं,—सोलह आना मालिकका स्वार्थ बनाये रखेंगे। काम काजमें हम मालिकके लिये प्राणतक दे सकते हैं। ब्राह्मण हमारे शिरपर रहें, पर चोरको हम अवश्य दण्ड देंगे। चोर,—ब्राह्मण हो चाहे देवता;—वह कभी दयाका पात्र नहीं है।"

वृद्ध। चोरपर दया करनेकी बात हम नहीं कहते,—चोर ब्राह्मण बालकको भी पीटनेसे नहीं रोकते। हमें यही डर लगता है, कि कहीं नीलकोठीमें ब्रह्महत्या न हो जाय। और देखिये, यदि सचमुच ही यह ब्राह्मण बालक मूर्च्छित या मृत हो गया है, तो इसे पीटनेसे क्या लाभ है। आपका उद्देश्य

गर्म दूध उसके कण्ठसे उतरेगा, कि नहीं देखिये,—नाड़ी देखिये।"

आज्ञा पाकर वृद्ध जल ले आये। जल मुखमें डालते ही बाहर गिर पड़ा। उन्होंने नाड़ी देखी। वह अति क्षीण मालूम हुई। अभी मरा नहीं है। वृद्धने बालकके आंख और मुंहमें जल दिया। गोपाल बाबूसे पङ्खा लाकर डोलानेको कहा। गोपाल बाबू पङ्खा ले आये और लड़केके सिरहाने बैठकर डोलाने लगे, तौ भी उसकी मूर्च्छा न टूटी।

वृद्धने धीर गंभीर स्वरमें वीरभद्रसे कहा,—"बालक मूर्च्छित ही है सही, पर मृत्युके लक्षण भी देख पड़ते हैं। मालूम होता है, बचेगा नहीं। क्या किसी चिकित्सकको बुलाना अच्छा नहीं है?"

वीरभद्र। चिकित्सक बुलाकर गोलमाल करना अच्छा नहीं। पुलिसको यह बात नहीं जताई जायगी। यह सब काम चुपचाप करना होगा। पुलिसको खबर देते ही वह नकद पांच सौ रुपया मांगेगी। दो लोगोंमें काममें वह राजी न होगी। बेफायदा मालिकका इतना माल क्यों बरबाद करेंगे हमारी यह राय है, कि जानाजानी होनेके पहले ही लाश गङ्गाजीके गर्भमें गाड़ दी जाय।

इसी वक्त एक नौकर गर्म दूध ले आया।

वीरभद्रने कहा—"गर्म दूधकी अब दरकार ही क्या है? दूधको फेंक दो। नीलकोठीके आठ बेयरोंको बुलाओ। छोटी पालकी लानेको कहो। लाशको अभी उठाकर ले जाओ। पालकीपर ओहार डालकर लाना। पालकीके साथ परि-

और यदुआ डोम,—दो विश्वासी दरवान जाय। यदि कोई पूछे,—पालकी किसकी है? तो कह देना,—सिहलीके घरकी औरतें जाती हैं। अभी लाशको उठाओ।"

वृद्ध। (हाथ जोड़कर) महाशय! आप क्या कहते हैं? लड़का अभी जीता है! जीता लड़का कैसे गाड़ा जायगा!

वीरभद्र। (धमकाने साथ) उसमें इसे ही क्या है? फिर वह बहुत देरतकतो जियेगा नहीं। जाते जाते राह हीमें मर जाय, तो ताज्जुब नहीं। हमतो ब्रह्महत्या नहीं करते,—वह लड़का आप ही आप मर जायगा। लाशको यहां रखकर क्या हम अपने स्वामीकी हानि करायेंगे। अच्छी बुद्धि है तुम्हारी। हम बेफायदेका बखेड़ा पसन्द नहीं करते। लाशको चुपचाप गाड़ और निश्चिन्त होकर नीलकी दादनी बांटना आरम्भ करे—जिससे मालिकको दो पैसा मिले, उसकी चेष्टा करें। तुम बूढ़े हुए, बाल पक गये, पर बुद्धि न हुई।—

वृद्धकी आंखोंसे आंसूकी धारा बह निकली। वाष्पगद्गद स्वरसे वृद्धने कहा,—"आपकी बातके ऊपर बात कहनेकी शक्ति मुझे नहीं है। आप राजा हैं,—पर मेरे प्राण कैसे विकल हो रहे हैं। मुझे आधे दण्डके लिये यह भिक्षा दीजिये,—मैं खुद दवा करके एकबार उसे बचानेकी कोशिश करूं। देखिये, नाड़ी अभीतक चलती है। बालककी अवस्था देख कर मेरा कलेजा फटा जाता है। प्राण कैसा कैसा तो करने लगते हैं।

इसपर वीरभद्र ही ही ही—हा हा हा करके हम उठे हँसते हुए कहा,—प्राण गया है? फिर प्रायका कैसा कैसा करना गया? ही ही हो। जैसा कागनम्पादकी सुविधा दखकर चलना होगा। यह लड़का चाहे मरे चाहे जिये हमें क्या? इसे जीता ही गाड़ देनेमें हमारी हानि क्या है? दोष ही क्या है? यह तो अभी मरेगा। हम इसे मारते नहीं डालते। बालकके लिये जैसे यहां मरना वैसे ही गढ़में जाकर मरना, दोनो बराबर हैं। जब दोनों बराबर है, तो फिर शील-ओठोंमें इसे ख़बर झञ्झट बढ़ानेसे क्या फायदा? अच्छा बराज तौरपर हम एक बात पूछते हैं,—इस लड़केको बचा रखनेमें क्या फायदा है? क्या इससे हमारा कोई काम है? ही ही ही। आप अभीतक लड़के ही बने हैं।

वृद्ध! (उपहासके) देखिये, सिद्धजी। यह देखिये लड़केके होठ हिल रहे हैं।

इसने बालकके मुखमें जल देकर फिर कहा,—"यह देखिये, अबकी जल पेटमें गया है,—बाहर नहीं गिरा।"

वीरभद्र। हमे मालूम होता है, लड़केको भूख लगा है कुदालसे अभी उसका सिर फाड डालना उचित है। कौन है? जल्द कुदाल ले आओ। हम तो ब्रह्महत्या नहीं करते। मरे हुए आदमीका सिर फाडते हैं।

इसी बक्त वज्रनकी भांति आठ बेयरा और एक पालकी आ पहुंची। पालकीपर परदा पड़ा था। बेयरे लट्ठधारी और इन्तेन तथा नीलकोठीके मांगे हुए थे। वे लोग बीच बीचमें पालकी ढोते थे,—निक पुलिसकी आंखमें धूल झोंकनेके लिये।

वीरभद्रने नौकरसे कहा,—"अरे! एक मोढ़ा ले आ।"

नायब मोढ़ेपर बैठ गये। वीरभद्रने कहा,—आपके मालिकने सौगात भेजी है, हम भी उसे कबूल करनेपर राजी हैं, किन्तु बात यह है, कि एक सौ बीघे बिगादी जमीनोंमें हमने नील बोना आरम्भ किया है, इससे हम किसी तरह बाज नहीं आ सकते, आपके मालिक चाहे नजर पांच सौ रुपये दें चाहे पांच हजार दें, नील बोना किसी तरह बन्द नहीं होगा।

नायब। यह क्या, महाशय! यह जमीन बहुत दिनोंसे हमारे मालिकके दखलमें चली आती है, पक्के दस्तावेज वगैरह भी हैं, आपसे झगड़ा करनेकी इच्छा उनकी नहीं है, इसीलिये उन्होंने आज हमें भेजा है। इस जमीनमें नील बोना अब बन्द कीजिये।

वीरभद्र। अगर हम अपने बापके बेटे न होंगे, तो नील बोना बन्द होगा।

नायब। महाशय! आप क्रोध क्यों करते हैं? मन लगाकर एकबार सुनिये।

वीरभद्र। हमारे मन दम कुछ नहीं है। हम मालिककी हानि कभी नहीं कर सकते। यदि हमारे पुरखे स्वर्गसे लौट आवें और इस बारेमें मुझसे अनुरोध करें, तो भी हम नील बोना रोक नहीं सकते। आपकी इच्छा हो, तो आप फिसाद और खूनी खेत आइये।

नायब। महाशय! फिसाद और खूनी रार करानेकी इच्छा हमारे मालिककी नहीं है।

कहो न। गाय बच गया है, तो फिर उतकर बैठोमें क्यों विलम्ब कर रहा है?"

इतना कहकर वीरभद्र आगनमें दूर एक चौकीपर बैठे, अबतक दरवाजेका फाटक बन्द था,—बैठते ही उन्होंने फाटक खोलनेकी आज्ञा दी। उसी फाटकसे कुछ किसान आगनमें आये। वे लोग गलेमें कपड़ा डालकर वीरभद्रके सामने कतार बाधकर खड़े हुए। वीरभद्र एक एक आदमीको बुलाते हैं,—कुछ कहते सुनते नहीं,—सिर्फ दो तीन चूते लगाते—और किसीसे कहते हैं,—"तुम्हें दो रुपया जुर्माना हुआ।" किसीसे कहते हैं,—तुम्हें तीन रुपया जुर्माना हुआ।" इस तरह वह दल विदा हुआ।

दूसरा दल आ पहुंचा। अबकी बहार कुछ ज्यादा है। एक आदमी, नागौड़ी जूता और वनियाइन पहने एवं कमरमें दुपट्टा लपेटे आगे आगे चला आता है। उसके पीछे राम वरा दरबान—लाल पगड़ी बांधे और कन्धेपर लाठी रखे—आ रहा है। उसके बाद एक पहलीवाला दो टोकरी मिठाई लिये हिलता डोलता आ रहा है। इसके पीछे एक आदमी एक खसी लिये चला आता है।

इस दलके आते ही वीरभद्रने वनियाइनवाले आदमीसे कहा,—"नायब साहब! खबर क्या है? इतनी मिठाई क्यों? खसी भी क्यों लाये हो।"

नायबने कुछ हंसकर कहा,—"मालिकको आपके वास्ते भेंट भेजी है। आप इसे कबूल कर लेंगे, तो वह बहुत खुश होंगे।"

इसे मार डालेंगे,—बोले जी हम कभी जमीन छोड़नेवाले नहीं।

नायब किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर कुछ देरतक चुप रहे, अन्तमें वीरभद्रसे कहा,—"सिंहजी! तो हम जाते हैं। एक बात कहते हैं, अन्तत: सौ दिनतक जमीनमें हल चलाना बन्द रखिये। यही हमारा शेष अनुरोध है।

वीरभद्र। क्षणभर भी बन्द नहीं कर सकते।

नायब साहब विफलमनोरथ होकर उदास उठ खड़े हुए। वीरभद्रने उन्हें प्रणाम किया और उनके साथ आये हुए प्रत्येक आदमीको एक एक रुपया बखशीश देनेको कहा। शायद नायब साहब यह सोचते सोचते गये,—"हमने कितने ही क्रूर, रुक्ष, कर्कश, हठी, बदमाश, आदमी देखे हैं, पर ऐसा कभी नहीं देखा।"

नायबके आंख ओट हो जानेपर वीरभद्र फिर तम्बाकू पीने लगे। इधर बालक रमाप्रसाद धीरे धीरे सुस्थ और सबल होने लगा। जब उसे अच्छी तरह होश हुआ, तब उसने कहा,—"मैं कहां हूं? सामने जो मोहर मुझे सतानेके लिये ही थी, वह भी नष्ट हो गई। मैं इस तरह गिरफ्तार या कैदी हूं?" उन अजानों वयसे बड़ेने कहा,—"अधिक मत बोलिये। हम जो कुछ पूछते हैं, उनका जवाब धीरे धीरे कहते रहो।"

बालक। अच्छा, पूछिये।

वृद्ध। तुम्हें भूख लगी है? खानेकी इच्छा होती है?

बालक। हां, दिनभर कुछ खाया नहीं है, बड़ी भू—

वीरभद्र। तब रहने दीजिये। कौन है रे! निहाई चादर ले जा।

एक नौकरने नायब साहबको हुक्का दिया। वीरभद्रके लिये एक बड़ा भारी गटक आया। दोनों कुछ देरतक तम्बाकू पीते रहे। वीरभद्रको कुछ ठण्ढा पड़ते देखकर नायबने फिर कहा,—"महाशय! एक काम क्यों नहीं करते? क्या मध्यस्थतामे इस झगड़ेको ते देना अच्छा नहीं है? आपके पास जो दस्तावेज वगैरह हैं, उन्हें निकालिये, हम भी अपने मालिकके दस्तावेज वगैरह ले आवें। फिर पञ्चायतके विचारसे जिसकी जमीन होगी, उसे मिल जायगी। झगड़े, झञ्झटकी जरूरत ही क्या है?

वीरभद्र। हम भी तो यही कहते हैं, कि झगड़ेकी क्या आवश्यकता है? जब हमने उस जमीनको ले लिया है, तो फिर उसे किसी तरह छोड़ेंगे नहीं, यह आप अच्छी तरह जानते हैं। सुतरां झगड़े करनेमें कोई फायदा नहीं है। नितीजेमें और क्या है,—खून, जखम और रक्तपात।

नायब। तब आप जमीन छोड़नेपर किसी तरह राजी नहीं हैं?

वीरभद्र। नहीं।

नायब। राजी होते, तो बहुत ही अच्छा होता।

वीरभद्र। जो नौकर मालिकका नुकसान करता है, उसकी भलाई किसी तरह नहीं होती। यदि इस जमीनके बारेमें लड़ाई होगी, तो हम खुद लाठी उठायेंगे और अकेले पचास आदमीको मार गिरायेंगे। अगर आप जबरदस्त होंगे, तो

इसका परिणाम चिन्ता है। एक साथ ही आठ बच्चोंका खानपान आरम्भ करनेसे आदमी कबतक स्थिर रह सकता है? जो हो, बालक इस समय दूध, भात आदि खाकर सजीव हो उठा है, देहमें ताकत भी आई है। आकाश फाट पडनेके पहले ही मनुष्योंको डर लगता है,—फाट पडनेपर फिर क्या! मार खाने या कलङ्कित होनेके पहले ही जो कुछ डर है,—मार खा लेने और कलङ्क फैल जानेपर फिर डर कैसा! चोरी का कलङ्क लगानेसे पहले रमाप्रसादका अरोसा घटोंका उपवास मार रखा था। रमाप्रसादकी चोरीका कलङ्क लगा, मजदमन्द रहना पडा,—रमाप्रसादको यह दारुण यन्त्रणा सचमुच ही अद्भुत काम कर गई। इस समय रमाप्रसाद मानो आदमी ही। एकदमें बल आया, मनका कष्ट कम पडा,—फिर रमाप्रसादकी देहमें फुर्ती क्यों न आयेगी?

रमाप्रसादको बलवान देखकर वीरभद्रके आनन्दकी सीमा न रही। यत्नसे देनेसे पहले बकरेको ह्रष्टपुष्ट देखकर, अनेक आदमी प्रसन्न होते हैं। रमाप्रसाद अबतक मैला कपडा पहने था। वीरभद्रको यह अच्छा न लगा। अपने वस्त्र और शालसे रमाप्रसादको सज्जित किया। एक कुर्सीपर आसन बिछाकर रमाप्रसादको बैठाया। यह सब काम करते करते सन्ध्या हो गई।

साम हो जानेपर वीरभद्र एक दूसरी कोठरीमें एकान्तमें आकर बैठे और खत लिखने लगे। इधर, वह वृद्ध सोचने लगे,—"बालकको बचानेका क्या उपाय है? दुधमुंहे बच्चे ने बिना समझे बूझे भूलसे चोरी कर डाली है,—चोरीका दण्ड भी

लगी है, पर लच्छीतो अभी भूखी है, मैं किस तरह खाऊंगा। अभीतक अतिथिसेवा नहीं हुई, मैं कैसे खाऊंगा।

बालककी ऐसी बातें सुनकर इन्होंने सोचा,—शायद इस लडकेका शिर खराब हो गया है, इसीसे अनाप शनाप बक रहा है। बिना इन बातोंका उत्तर दिये ही इन्होंने कहा,—"जो हो, जब तुम्हें भूख लगी है, तो कुछ खाना उचित है। तुम मूर्च्छित हो गये थे, इससे कमजोर भी पड गये हो। अतिथिसेवा हो चाहे न हो, जान बचानेके लिये तुम कुछ खा सकते हो।"

अब वीरभद्रके पास खबर गई, कि बालक कुछ खाना चाहता है। दिनभर उसके पेटमें अन्न नहीं पड़ा, कुछ अन्न पडनेसे उसे ताकत होगी। यह सुनकर वीरभद्रने खुशीसे कहा,—"बहुत अच्छी बात है। किसी तरह उसे कुछ खिलाओ, जिसमें वह उठे बैठे, खड़ा हो और चले फिरे। फिर दारोगाको बुलाकर उसके हाथमें हथकड़ी दिलाकर गिरफ्तार करा देंगे। चोरको दण्ड न देनेसे पाप होता है।"

चोरको सजीव और बलशाली करनेके लिये नाना उपाय उद्भासित होने लगे। वीरभद्रका हृदय उत्फुल्ल हो उठा।

तेईसवां परिच्छेद।

बालक रमाप्रसाद अनेक कारणोंसे मूर्च्छित हुआ था। दिनभर कुछ खाया नहीं,—शरीर सन्न सन्न करता था। उसपर शारीर चिन्ता, और ऊपरसे चोरीका कलङ्क। अतमें

व्याख्याकी बात भी उदय हुई।—"अच्छा, सोचो तो सही, ऐसा क्यों हुआ? वीरभद्रने बालकपर इतनी कृपा क्यों की है? जो वीरभद्र बालककी मूर्च्छितावस्थामें थोड़ा गर्म दूध नहीं देना चाहता था, उसी वीरभद्रने यत्न छोड़कर बालकके भोजनके लिये क्यों प्रबन्ध किया? भोजनके बाद देहमें बल आनेपर जब लड़का उठ खड़ा हुआ, कुछ इधर उधर घूमा भी, तब यह देखकर वीरभद्र इतना प्रसन्न क्यों हुआ? प्रसन्न होकर वीरभद्रने अपने नौकरसे कहा,—"हमारा कपड़ा लाकर उसे पहना दे। जाड़ा देखकर कहा,— शाल भी ला दे।" यह सब तो दयाके काम हैं या और कुछ? जाड़ेसे लड़का कष्ट पायेगा, यही अनुभव करके तो उसने शाल लानेका हुक्म दिया था। यदि बालकके कष्टसे वीरभद्रको कष्ट न होता तो वह शाल लानेकी आज्ञा क्यों देता? कुछ दया अवश्य ही हुई होगी, इसमें सन्देह नहीं। केवल दया ही क्यों—मालूम होता है, कुछ प्रेम भी उदय हुआ है। नहीं तो शालकी जगह कम्बल देनेकी अनुमति भी तो दे सकता था,

"किन्तु दया और प्रेम कैसे हुआ? चोरपर दया करना या उसे प्यार करना तो वीरभद्रकी जन्मपत्रीमें लिखा नहीं है। मालूम होता है, बालकको निर्दयताके साथ पीटने होसे वह लज्जित हुआ है। शायद उसने यह भी सोचा हो, कि प्रहार ही मृत्युका कारण था। शायद उसने ख्याल किया हो, कि चोरीकी तो उपयुक्त दण्ड मिल चुका,—अब उसे खिला पिलाकर छोड़ दें। बालककी कैसी सुन्दर है,—आकर्णविश्रान्त समुज्ज्वल नेत्र हैं,—बालकके वदनमण्डलपर

प्रायः सोलह आना पा चुका है, पर यदि अब वह दारोगाके सुपुर्द किया जायगा, तो हाजत होमें मर जायगा,—सोलह खींचना तो दूरकी बात है। वीरभद्र जैसी प्रकृतिका आदमी है, उससे तो यह विश्वास नहीं होता, कि वह हमारी बात मानेगा। यदि उसने लड़केको पुलिसके हवाले करनेकी बात ठीक कर ली है, तो मेरी कौन चलावे,—यदि उसकी गुरु पुरोहित भी आकर कहेंगे, तो वह कभी सुननेका नहीं।—ऐसे स्थलमें उपाय क्या है? बालकका भाग्य बहुत खोटा देख पड़ता है। यदि आज दीवानजी होते, तो यह घटना कभी उपस्थित न होती। बालकके भाग्यमें दुःख भोगना और पुलिसके पाले पड़ना लिखा है, इसीसे दीवानजी बीमार होकर घर चले गये हैं। नीलकोठीके भाग्यमें बालकवध लिखा है, इसीसे वीरभद्र आज उसके मालिक हैं। सब भगवानकी लीला है।

"क्या कोई उपाय नहीं है? हाय। क्या सचमुच ही आज इस नीलकोठीमें ब्रह्महत्या देखना पड़ी? किससे कहें —किसके साथ सलाह करें? सलाहके लिये तो आदमी खोजनेपर भी नहीं मिलते। डरके मारे सभी चुप हैं, सबकी बुद्धि ठिकाने लग गई है। किसीके मुंहसे बोली नहीं निकलती। कुछ बोलनेपर वीरभद्र आकर कहीं उसे पकड़कर यह न कहे,—मोहर चुरानेमें तुम भी शामिल हो। ताहि मधुसूदन। त्राहि मधुसूदन।—चुपचाप सा ही मन-मारे सब कोई यहां बात बोल रहे हैं।"

इस तरह निराशाकी बात सोचते सोचते ग्रहके मारे

कारण चलनेकी उनकी शक्ति भी न रही। सुतरां दारोगाके आनेसे पहले ही हम कैसे खबर दे सकेंगे?

"बहुत कुछ सोचनेपर भी कुछ ठीक नहीं हुआ। अच्छा एक काम करना क्या बुरा है? यदि सचमुच ही वीरभद्र दारोगाको बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं, तो उनसे यह बात कहनेमें हर्ज क्या है?

"बालक अभीतक अत्यन्त कातर है, बाहर सबल देख पड़नेपर भी भीतर दुर्बल है। ऐसी अवस्थामें यदि दारोगा उसे हथकड़ी पहनाकर थानेमें ले जायगे, तो राह हीमें वह मूर्च्छित हो जायगा। अतएव आजकी रात दारोगाको बुलानेकी जरूरत नहीं है,—कल सबेरे दारोगाको बुलाकर इस बदमाश लड़केको गिरफ्तार करा दीजिये। जैसा काम किया है, वैसा ही फल भी भोगे। और यदि यह देखेंगे, कि वीरभद्र व सरपर दयालु हैं, तब तो कुछ बात ही नहीं है।

"जो हो बालकके बचानेकी चेष्टा हम प्राणपणसे करेंगे। वीरभद्र इसे चोरपर चोरका नाती भले ही कहें, पर सब कुछ सहकर हम बालकके बचानेकी चेष्टा करेंगे। यदि हमारे कहनेके मुताबिक वीरभद्र आजकी रात दारोगाके पास खत न लिखें, तो हम चुपचाप रूप बदलकर आज ही रातमें अपने मालिकके पास दौड़कर जायगे और नीलकोठीकी इस भयङ्कर कहानीको उन्हें सुनावेंगे।"

इस तरह सोच विचारकर जिस कोठरीमें बैठे वीरभद्र खत लिख रहे थे, रह उसकी ओर चले।

मानो देवभाव अङ्कित है। ऐसे गौरवर्ण बालकको देखकर उसे प्यार किये बिना कौन रह सकता है।"

"यदि बालकपर वीरभद्रको दया और प्रेम उत्पन्न हुआ हो, तो चारो ओर मङ्गल ही है यदि ऐसा न हो, तो उपाय क्या है? नीलकोठीमें कानाफुसी सुन पड़ती है, [कारण खुलकर बोलनेकी शक्ति किसीको नहीं है]—"वीरभद्र दारोगाको बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं। दारोगाके आते ही चोरको गिरफ्तार करा देंगे।, यह तो बड़ी खराब बात है।

"जो हमारे मालिक हैं, इस नीलकोठीके एकमात्र अधिकारी हैं, वह परमहिन्दु एवं दयादाक्षिण्यगुणयुक्त हैं। अगर किसी तरह इस बातको उनके कानतक पहुंचा सकें, तो बालक छुटकारा पा सकता है। यदि दीवानजीके कानमें भी, इस बातकी भनक पड़ जाय, तो बालकके बचनेकी किञ्चित आशा हो सकती है। इन दोनोंमें यदि किसीके पास यह खबर पहुंच जाय, तो लड़केको रिहाई मिल सकती है। पर खबर कैसे दे? और खबर भी पुलिस आनेसे पहले ही देना चाहिये। अगर बालक पुलिसके हाथमें पड़ जायगा, तो फिर पुलिस उसे छोड़ेगी नहीं। और पुलिसके हवाले कर दिये जानेपर खबर देनेका फल भी कुछ न होगा। थाना यहांसे दो कोस है और उन लोगोंका मकान यहांसे छ सात कोस है, फिर वीरभद्रके अनेक अनुचर यहां हैं। खत ले आओ,—इतना कहते ही दस आदमी तीरकी तरह थानेकी ओर दौड़ेंगे, पर हम यहां अकेले ही हैं। फिर बुढ़ापेसे

कारय चलनेकी उतनी शक्ति भी न रही। सुतरां दारोगाके थानेमें पहुंचे तो हम कैसे खबर दे सकेंगे?

"बहुत कुछ सोचनेपर भी कुछ ठीक नहीं हुआ। अच्छा एक काम करना क्या बुरा है? यदि सचमुच ही वीरभद्र दारोगाको बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं, तो उनसे यह बात कहनेमें हर्ज क्या है?

"बालक अभीतक अत्यन्त कातर है, बाहर सबल देख पड़नेपर भी भीतर दुर्बल है। ऐसी अवस्थामें यदि दारोगा उसे हथकड़ी पहनाकर थानेमें ले जायेंगे, तो राह हीमें वह मूर्च्छित हो जायगा। अतएव आपको रात दारोगाको बुलानेकी जरूरत नहीं है,—कल सबेरे दारोगाको बुलाकर इस बदमाश लड़केको गिरफ्तार करा दीजिये। जैसा काम किया है, वैसा ही फल भी भोगे। और यदि यह देखेंगे, कि वीरभद्र व लड़केपर दयालु हैं, तब तो कुछ बात ही नहीं है।

"जो हो, बालकके बचानेकी चेष्टा हम प्राणपणसे करेंगे। वीरभद्र हमें सौ चोर-चारका साथी भले ही कहें, पर सब कुछ सहकर हम बालकके बचानेकी चेष्टा करेंगे। यदि हमारे कहनेके मुताबिक वीरभद्र आजकी रात दारोगाके पास खत न लिखें, तो हम चुपचाप रूप बदलकर आज ही रातमें अपने मालिकके पास दौड़कर जायगे और नीलकोठीकी इस भीषण कहानीको उन्हें सुनावेंगे।"

इस तरह सोच विचारकर जिस कोठरीमें बैठे वीरभद्र खत लिख रहे थे, हठ उसीकी ओर चले।

चौबीसवां परिच्छेद।



रुद्रने वहां पहुंचकर देखा, कि दरवाजा बन्द है। रुद्रका मन उस समय उत्तेजित था। उन्होंने दरवाजेको ठेलकर कुछ जोरसे कहा,—"आयनदीवानजी। एकबार दरवाजा खोलिये। एक जरूरी बात है।" उन्होंने भीतरसे जवाब दिया,—"जरा ठहर जाइये। चिट्ठी लिखकर खोलते हैं।"

रुद्र। जरूर दरवाजा खोलनेकी जरूरत है। बात बहुत ही जरूरी है।

वीरभद्र। इस समय हमें ज्यादे दिक मत कीजिये। आपके साथ बातचीत करने और दरवाजा खोलनेसे मालिककी हानि होगी। अतएव आप आधा दण्ड या इससे भी कम देरतक चुपचाप बाहर खड़े रहिये। खत खतम होते ही दरवाजा खोल देंगे।

लाचार रुद्र चुपचाप बाहर खड़े रहे। चिट्ठी खतम होनेमें आधा दण्ड भी न लगा। वीरभद्रने दरवाजा खोल दिया। रुद्र अन्दर जाकर कहने लगे,—"हे धर्मावतार। हे दयामय। क्रोध मत कीजियेगा।"

वीरभद्र। हम क्रोध क्यों करेंगे? भला कहियेतो हम कभी क्रोध करते हैं।

रुद्र। ना, ना, आप क्रोध क्यों करेंगे? आप उच्च, धन्य, महासम्माननीय व्यक्ति हैं,—आपकी नाव होंसे हम लोग

डर जाते हैं,—हम लोगोंको ऐसा मालूम होता है, कि आपने क्रोध किया"

वीरभद्र। वाह! वाह! रहस्य तो खराब नहीं है। इतना कहकर वीरभद्र हो हो—हो करके विकट हंसी हंसे, कहा, "कहिये—स्थिर होकर कहिये—आपको जरूरी बात क्या है? (अरे कौन है रे! दो दरवान अभी आय।)

रुद्र। उस चोर बालकको आप ही पुलिसके हाथमें दीजियेगा?

वीरभद्र। हां आज ही—अभी। इसीलिये दारोगा बाबूको बुलानेके लिये खत लिखा है।

रुद्र। कल सवेरे इस चोरको पुलिसके हाथमें देनेसे कोई हानि है?

वीरभद्र। बहुत हानि है।—घरमें चोरको कौन रखे? मालिक सुनेंगे, तो क्या कहेंगे? जो चोर दिनमें सोधर चुरा सकता है, वह रातमें क्या कुछ नहीं कर सकता? विशेष इस नीलकोठीका रक्षाका भार हमारे ऊपर है। यह हमारा अपना घर नहीं है। यदि अपना घर होता, तो आपकी बात मान लेते—यह तो दूसरेका घर है। आप हम दोनों दूसरेके घरके रक्षक हैं। जब चोरको पुलिसके हवाले करना ही होगा, तो फिर दिन और रातके विचारकी क्या आवश्यकता है?

रुद्र। ठीक बात यह है, कि यह बदमाश लड़का अभी कमजोर है। आपकी सेवा शुश्रूषा तथा भोजनसे स्वस्थ होकर कुछ बलवान हुआ है सही, पर अभीतक बहुत कमजोर है।

दारोगाके हाथमें पड़नेके बाद यदि राहमें वह मूर्च्छित हो जाय और गिर पड़े, तो अनेक विभ्राट उपस्थित हो सकते हैं।

वीरभद्र। हमारे हाथसे चोरके पुलिसके हाथमें पड़ जानेपर हम निश्चिन्त हो जायगे। हमारा काम वहीं खतम हो जायगा। हमारे हाथसे पुलिसके हाथमें पड़े, चाहे वह मूर्च्छित हो जाय, गिर पड़े, मुंहसे खून उगले या एकदम मर ही जाय, हमें क्या?

इतने सब ही एक साथ कहा,—"बाप रे बाप! वीरभद्र क्या कह रहा है?" फिर इसके अनन्तर कहा,—"क्या लड़केको पुलिसके हाथमें दे देने हीसे आपका काम समाप्त हो जायगा? क्या ब्राह्मण बालककी प्राणरक्षा करना कर्तव्य नहीं है?

वीरभद्र। हां! पुलिसके हाथमें दे देने हीसे काम खतम नहीं होगा। जबतक उपयुक्त प्रमाणकी सहायतासे चोर लड़नेकी अगत्त्या जहांनेके लिये जेलकी हवा न खिलाने तबतक कर्तव्य कर्मका शेष न होगा। और ब्राह्मण बालककी प्राणरक्षाकी बात जो आप कहते हैं, उसमें हमारा अख्तियार ही क्या है? जो दुर्बल होगा, वही पहले मरेगा। ब्राह्मणका लड़का चोर निकलनेपर दण्ड न पावे अथवा मरे नहीं,—ऐसी बात तो शास्त्रमें कहीं लिखी नहीं है। चोरी करनेपर शूद्र भी चोर है और ब्राह्मण भी चोरी करनेपर चोर ही है। जनेऊ, तिलक और चुटिया चोरीका दोष नहीं दूर कर सकते।

वृद्ध। रमाप्रसाद ब्राह्मण है, यह बात छोड़ दीजिये।

नहीं। दया किसे कहते हैं? वह हम किसी तरह ठीक नहीं कर सकते। मान लीजिये, एक आदमी आपकी नाक काटे लिये जाता है, आपने उसे आदर करा,—"मित्र! ठहरो, ठहरो,—आओ, बैठो,—एक चिलम तम्बाकू पियो। अगर चाहोगे भी, तो कुछ जलपान कर लो। इतना कहकर आप उस नाक काटनेवालेकी पीठपर हाथ फेरने लगे। क्या इसका नाम दया है? अथवा इसे पागलपन या नासमझपन कहते हैं? अच्छा, यदि आप इसे ठीक समझा करें, कि चोर लडकेको रानीके वास नीलकोठीमें रखनेसे कर्त्तव्य कामोंका कोई त्रुटि न होगी, तो आजकी रात हम उस चोरको नीलकोठीमें रख सकते हैं।

वृद्ध। (हाथ जोड़कर) आप उच्चपदस्थ और हम रे मालिक हैं।—हम अति क्षुद्र और आपके अधीनस्थ कर्मचारी हैं। सुतरां वादानुवाद करके आपको समझानेमें हम असमर्थ हैं। दया दाक्षिण्यकी बात जाने दीजिये, केवल यदि हमारी बात मान गये,—वृद्धका अनुरोध ग्रहण करेंगे,"—यह सोचकर बालकको नीलकोठीमें रहने दें—तो और कोई बात हम नहीं कहेंगे।

वीरभद्र। यह कैसी उल्टी बात हुई, हमारे समझमें कुछ भी न आई। आप वृद्ध हैं,—अतएव आपकी बात मानना पड़ेगी,—इसका अर्थ हम समझ नहीं सके। इस गांवमें अन्ततः सौ घटे होंगे,—हम कोई काम करनेको उद्यत हुए,—उसी समय गांवके एक वृद्धने आकर कहा,—हमारी बात मानना होगी,—आप इस संकल्पित कामको न करने पावेंगे,"—इसी

तरह क्यों ही कोई काम करने लगेंगे, कि गांवका कोई एक आकर कहेगा,—"आप यह काम नहीं करने पावेंगे," इसको बात माननेमें हमें नौकरी, कपड़ा और देश छोड़कर भागना पड़ेगा।

शेख। हम चुप हुए।—आपकी बातका जवाब देनेकी ताकत हमें नहीं है। जो आपकी इच्छा हो, कीजिये। क्षुद्र—बलवानसे सदैव पराजित है।

वीरभद्र। आपकी अन्तवाली बात ठीक है, किन्तु यहां क्षुद्र बलवानका उदाहरण नहीं लगता। मालिकोंके झगड़ेके लिये आपके साथ इस सामान्य विषयके बारेमें वार्तालाप करके हमने आधा दण्ड बिताया है। क्या बात युक्तियुक्त एवं न्याय है, इस बारेमें दोनो आदमियोंसे खूब बातचीत हुआ है और इस विषयकी सूक्ष्मभावसे पर्यालोचना भी खूब हो चुकी है। अन्तमें आपने हार मानी और कहा, कि हमें उत्तर देनेकी शक्ति नहीं है, सुतरां क्षुद्र बलवानकी उपमाका आभरण कहां रहा?

शेख कुछ बोल नहीं सके,—वीरभद्रके चेहरेकी ओर देख भी नहीं सके। उदास होकर धीरे धीरे वहांसे चले आये।

हुक्मके मुताबिक दो दरवान हाथ जोड़े दरवाजेके पास खड़े थे। वीरभद्रने उन लोगोंसे कहा,—"थानेमे जाओ। दारोगाजीको यह खत देना और उन्हें अपने साथ लेते आना।

पच्चीसवां परिच्छेद।

अभी रातके आठ भी नहीं बजे थे, कि दारोगाजी दलबल सहित नीलकोठीमें आ पहुंचे। दारोगाके आते ही उस नीलकोठी-प्रदेशमें मानो महामहानाटकका महामहाभिनय होने लगा। व्यापार कुरुक्षेत्र या लङ्काकाण्ड है,—यह समझनेकी ताकत किसे है? शुम्भ निशुम्भका अभिनय है, कि दक्ष यज्ञका अथवा मधुकैटभवधका—सो किस तरह कहें? प्रलय तो नहीं है। अथवा आकाशके टूट पडनेका उपक्रम है? हजारों ऐरावत तो पागल होकर इधर उधर दौड नहीं रहे?

क्या हो रहा है, सो हम नहीं जानते। कुछ आदमी उन्मत्तकी तरह चिल्ला रहे हैं। एक दल कमर कसकर कन्धे पर लाठी धरे दौड रहा है। पांच सात आदमी बात करते करते झगडने लगे हैं। कोई कूदकर गिर पडता है। कोई बड़े जोरसे 'बाप रे बाप!' कहकर आकाशको गूंज देता है। कोई 'भाई! जय मा दुर्गे। कहो,' कहकर कलाबाजी कर रहा है। कोई विकट हंसी हंसकर दीवारमें मुंह रगड रहा है। डरपोक लोग माला लेकर ईश्वरका नाम जप रहे हैं। कौन किसको पकडकर बांधे लिये जाता है, सो कुछ ठीक नहीं। कोई किसीकी छातीमें लात मार रहा है। चोट खाकर कोई उसी पर गिर रहा है। अरे! देख, देख! बाबूआका घर जला जाता है। बहुतसे आदमी वहां पहुंचकर

गी डाल डालकर आग बुझा रहे हैं। कुछ आदमी गोआ-
ोंके छप्परपर चढकर छप्पर काट रहे हैं। मोदीकी दूकानमें
ट क्यों मची है? घी, चावल, आटा,—जो जो पाता है
लये भागा जाता है। मोमरा चमारके गालमें थप्पड मारकर
ोइ उसका खसी छीने लिये जाता है। हलवाईकी बडी
गोहने दौडकर किवाड क्यों लगा लिया? हो हो हल्ला
ाते हुए पांच सात आदमी हलवाइका दरवाजा क्यों ठोक
हे हैं? गोवर्द्धन महाइका जाल छीनकर उसका दोनो कान
काडे कौन लिये जाता है? मम् किसान धान कूटकर दि
ाटता है,—उसकी ढेकी उखाडकर एक विकटाकार पुरुष
से अपने कन्धेपर धरे लिये क्यों जाता है? रामलालका
क बोरा महीन चावल एक आदमी शिरपर उठाये चला
ाता है। रामलाल रोते रोते उसके पीछे क्यों आ रहा है।
ोटे छोटे लडके लडकियोंके रो उठनेपर, "बेटा! रोओ मत!
ारोगाजी आते हैं। पकड ले जायगे"—यह कह कहकर
ाता बचेको क्यों चुमकार रही है? रोते हुए बचेको (स्तनपान
ेना कराये) सुलानेका सुविधा सुख क्यों हुआ? क्यों और
ैसे ऐसा हुआ, सो ठीक ठीक कैसे कहें? सब दारोगाजी
ीलकोटीमें आविर्भूत हुए हैं,—आजकी नई घटना यही है।
ौर एक नई बात यह है, कि इस धूम मचानेके पहले ही देखते
ेखते नभोमण्डल नवमेघमालासे पूर्ण हो गया। घोर अन्धेरी
ा गई। हवा जोरसे चलने लगी। टिप टिप पानी बरसने
गा।

दारोगा साहब आते ही और दो चार गाल मन्द पूछकर

बोले,—"ओ। कैसा भयङ्कर बात है। आपकी नीलकोठीमें मोहरकी चोरी।—देखता हूं, यह तो अराजक ही उठा! कहते हैं क्या?—मोहरकी चोरी? सचमुच ही नीलकोठीमें मोहरकी चोरी? ओं!"

वीरभद्र। सचमुच ही चोरी हुई है। मालिक सुनेंगे, तो, क्या कहेंगे, केवल यही विचार रहे हैं। जो स्वप्नमें भी सम्भव न था आज वही नीलकोठीमें हुआ।

दारोगा। वह चोर कहां है?—सूरत कैसी है?

वीरभद्र। मकानकी कोठरीमें है।

दारोगा। हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेड़ी डाली गई है?

वीरभद्र। नहीं।

दारोगा। ओहो। सर्वनाश कर डाला। उस चोरको आप अभीतक नहीं पहचान सके हैं। मौका पाते ही दीवार फाड़कर वह निकल जायगा। (जमादारसे) सुनो जमादार! गावमें जितने चौकीदार और पुहारू हैं,—वह सब कन्धेपर लाठी रखकर आजकी रात इस नीलकोठीको घेर रखें और तुम उनपर निगाहवानी रखो।

जमादार "तथास्तु" कहकर चला गया।

वीरभद्र। आपने नीलकोठीको घेर रखनेका बन्दोबस्त किया सो अच्छा ही हुआ है। हम भी निश्चिन्त नहीं हैं। चोरको नजरबन्द कर रखा है। चार मजबूत आदमियोंको उसकी चौकसीके लिये मुकर्रर कर रखा है। वीरभद्रकी मर्जीसे चोर किसी तरह निकल नहीं सकता। आप निश्चिन्त रहिये।

पश्चिममें सूर्यका उदय होना सम्भव हो सकता है, पर नील कोठीसे चोरका भाग जाना किसी तरह सम्भव नहीं हो सकता। चोर हमारी मुट्ठीमें है। किसकी ताकत है, कि हमारी इस वज्रमुष्टिको खोले?

दारोगाजी हंसने लगे। उन्होंने कहा,—"सिंहजी! आप धन्य हैं, मैं नहीं जानता था, कि आपने चोरको इस तरह जकड़ रखा है। चोर बड़े ही धूर्त होते हैं, यही समझकर हमने घरको घेर रखनेका बन्दोवस्त किया है, पर आपकी तीक्ष्णबुद्धिके सामने चोरकी धूर्तता कहां चल सकती है? बुद्धि, विवेचना, बल एवं कौशलमें आपकी बराबरी इस देशमें कौन कर सकता है?"

दोनो आदमियोंका प्रेम इस तरह गाढ़तर होने लगा। जब प्रेम गाढ़तर हो उठा, तब वीरभद्रने दारोगाजीसे कहा,—"जब अनुग्रह करके आप नीलकोठीमें आये हैं,—रात भी बहुत जा चुकी है,—तब क्या आप सबका यहां भोजन करना अच्छा नहीं है? सब कुछ तय्यार है। एक घण्टेमें रसोई तय्यार हो जायगी।"

दारोगा। जब आप कहते हैं, तब कोई आपत्ति नहीं, पर शुद्रके यहां खाना कोई कोई मना करते हैं। आप भले आदमी हैं। आपकी बात टाल देना धर्मविरुद्ध होगा।

वीरभद्र। शुद्रई हम नहीं न्ने गे, और यदि हमी होते, तो भी दोष न था। आज हम सिर्फ गवाह हैं। विशेष करके नीलरके मालिक हम तो नहीं हैं,—नीलरके मालिक हमारे

स्वामी हैं। सिखाते हैं हम,—गवाहके घर खानेमें कोई दोष है क्या?

दारोगा। कुछ भी नहीं। दोष रहना तो दूर रहे बल्कि खाना ही उचित है। कारण, साक्षीके साथ भोजन करते करते अनेक गुप्ततत्वके मालूम होनेकी सम्भावना रहती है। एकबार क्यों, आपके साथ मैं भी चार खा सकता हूं। आप हुए—इस देशके प्रधान व्यक्ति। रोज जो खाता हूं वह आप होता तो खाता हूं,—यह कहनेमें कोई दोष नहीं है। अच्छा, जाने दीजिये यह बात, मुद्दई कौन होता है?

वीरभद्र। खजाञ्चीसाहब,—जिनके जिम्मे मोहर रहती है।

दारोगा। वह खूब चतुर हैं तो? यदि खजाञ्चीजी इज हारमें गोलमाल करेंगे, तो सब मट्टी हो जायगा। उन्हें अच्छी तरह सिखा पढ़ा रखा है तो?

वीरभद्र। नहीं, पर उन्होंने सारी घटना अपनी आंखों देखी है। और जो कुछ सिखाना होगा, आपकी सलाहसे सिख देंगे।

दारोगा। अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा किया है। मैं सबसे पहले उन्हें सिखा पढ़ाकर तय्यार कर लूंगा। उसके बाद, वह हमारे सामने इजहार देंगे। और और गवाहोंको भी सिखाना चाहिये। भोजनके बाद सबको बुलाकर सबको सिखा पढ़ाकर तय्यार कर दूंगा, फिर मारापारी सब इजहार लिख लूंगा। घटना सच होनेपर भी अदालतमें गवाही देना

बड़ा कठिन काम है। झूठी गवाही देना बल्कि सहज है, किन्तु सची गवाही देना बहुत कठिन है।

दारोगाजीके लिये मसनद आ पहुंचा। कुरसीपर बैठे बैठे दारोगाजी तम्बाकू पीने लगे। तम्बाकूके नशेमें कहा, चोरको मैं देखना चाहता हूं—उसे ले आइये। अच्छा मिश्रजी! चोरको अबतक जीता क्यों रखा है? काटकर टुकड़े टुकड़े क्यों न कर डाला? नीलकोठीमें मोहरकी चोरी। किसके दो सिर हैं, जिसने इस कामके करनेमें साहस दिखाया है?

वीरभद्र। मारपीट ज्यादा नहीं हुई है। पहली ही चोटमें वह मूर्च्छित हो गया था। बड़े कष्टसे उसे होशमें लाये हैं, फिर उसे खिलापिलाकर उसकी देहमें बलका सञ्चार किया है।

दारोगा। मुझे चोरको देखनेकी बड़ी इच्छा है। उसे जल्द मंगाइये।

वीरभद्रने पहले नौकरको एक कुरसी लानेको कहा।

दारोगा। चोरको कुरसी क्यों? मालूम होता है, वह बहुरूपी है। आप लोगोंको उसने भुलावेमें डाल रखा है।

वीरभद्र। वैसा चोर नहीं है, यह चोर भलमनसी है।

दारोगाजीने हंसकर कहा,—यह चोर बहुत माया जानता है।"

देखते देखते नया कपड़ा पहने और सफेद शाल ओढ़े चोर कुरसीपर आ बैठा। दारोगाजी कितना ही पूछते हैं, पर चोर कुछ जवाब नहीं देता। कभी भय दिखाकर, कभी

दुलार करके और कभी काकुति मिनती करके दारोगाजीने चोरके बोलानेकी चेष्टा की, पर दुरन्त चोरने उत्तर नहीं दिया। सिर्फ चोरकी दोनो आंखोंसे आसकी झाड़ी लग गई, अन्तमें दारोगाजीने कहा,—"यह चोर है सही, पर मायावी चोर है। किस बहाने ठगने आया है, सो नहीं जानते। ऐसा दुर्ज्ञेय अभेद्य चोर मैंने कभी नहीं देखा।"

वीरभद्र विकटस्वरसे अट्टहास कर उठा दारोगाजीका कि रिच झनझन निनाद कर उठा। चौकीदारोंके चीत्कारसे आकाश फट गया। कृष्णपक्षकी अंधेरी रात घोर अंधेरी होगई। बिजली चमक उठी। गड़ गड़ गड़ गड़ मेघ गर्जने लगे। बालक रमाप्रसाद कुछ सुन न सका और कुछ देख भी न सका। उसका गला बन्द है, अन्तर नीरव, अवनी नीरव,—उसका यह विश्वसंसार—यह चतुर्दश भुवन आज नीरवतासे परिपूर्ण है।

छब्बीसवां परिच्छेद ।

रात्रि प्राय एक पहर जा चुकी है। कृष्णपक्षकी चतुर्दशी है। आकाशमें मेघ देख पड़ने लगे हैं। बीच बीचमें टप् टप् पानी भी पड़ता है। मेघमहाराजकी गोदमें बैठकर सौदामिनी महारानी कभी कभी कुछ हंस देती हैं।

पृथ्वीके मेघरूपी मोटे काले कपडेके थानसे छिपनेपर भी जाड़ा खूब है। पूस महीनेकी कनकनी, घरसे बाहर निकलनेकी हिम्मत किसे है। जगत वर्फकी भांति ठण्ढा हो रहा है। आज गर्मागर्म सुनी खिचड़ी खानेके बाद आचवनेके समय ही विपद है। आचवनेके डरसे कितने आदमी आज शायद भोजन ही न करेंगे। आजका मामला ऐसा ही है।

एक पहर रात और भी बीत चली। देहातमें ऐसे जाड़ेमें कौन जागता है? तकियापर शिर रखे, रजाईसे मुंह छिपाये,—और कोई रजाईपर रजाई और कम्बलपर कम्बल ओढ़े सो रहे हैं। कविलोग कहते हैं, प्रेमी और प्रेमिका तथा चोर डकैतके जागनेका यही अच्छा समय है। ऐसे जाड़ेमें यहलोग जागते हैं, कि नहीं, सो हम नहीं जानते एवं जागनेपर भी इनकी व्यवसायवृत्ति अच्छी तरह चलती है, कि नहीं, सो भी नहीं समझ पड़ता। सुनी हुई बात लिख दी।

देहातोंमें अभी सन्नाटा छाया हुआ है। सियार बोले थे, कि नहीं, ठीक ठीक कैसे कहें? ऐसा सुना है, कि सियार बोले थे कम। इसीलिये मनुष्य तथा अन्यान्य पशुओंके सो जानेपर अर्थात् देहातमें सन्नाटा छा जानेपर, यहां चिरप्रथा अनुयायी लिखना होगा, कि सियार बोल रहे हैं। इसी से और लिखते हैं, कि शुगाल बोल रहा है। हवा चल रही है। हवाघात झुक झुककर एक प्रकारका शब्द कर रहे हैं। भिल्ली झनकार रही है। पत्तोंपर पड़नेकी आवाज सुनाई देती है। चौकीदार चिल्ला-

पृथ्वीके मेघरूपी मोटे काले कपडेके थासे छिपनेपर भी शाला खुब है। पूस महीनेकी कमकनी, घरसे बाहर निकल-नेकी हिम्मत किसे है। आगत वर्षकी भांति ठढा हो रहा है। आज गर्मागर्म भुनी खिचड़ी खानेके बाद ग पचनेके समय ही विपद है। न पचनेके डरसे कितने आदमी आज शायद भोजन ही न करेंगे। आजका मामला ऐसा ही है।

एक पहर रात और भी बीत चली। देहातमें ऐसे जाडेमें कौन जागता है? तकियापर शिर रखे, रजाईसे मुह छिपाये,—और कोई रजाईपर रजाई और कम्बलपर कम्बल ओढ़े सो रहे हैं। कविलोग कहते हैं, प्रेमी और प्रेमिका तथा चोर डकैतके जागनेका यही अच्छा समय है। ऐसे जाड़ेमें यहलोग जागते हैं, कि नहीं, सो हम नहीं जानते एवं जागनेपर भी इनको व्यवसायवृत्ति अच्छी तरह चलती है, कि नहीं, सो भी नहीं समझ पड़ता। सुनी हुई बात लिख दी।

देहातोंमें अभी सन्नाटा छाया हुआ है। सियार बोले थे, कि नहीं, ठीक ठीक कैसे कहें? ऐसा सुना है, कि सियार बोले हैं कम। इसीलिये मनुष्य तथा अन्यान्य पशुओंके सो जानेपर अर्थात देहातमें सन्नाटा छा जानेपर, यही चिरप्रथा बनायी लिखना होगा, कि सियार बोल रहे हैं। इसी कारण से और लिखते हैं, कि घुग्घू बोल रहा है। हवा सन् सन् चल रही है। सन्नाय झुक झुककर एक प्रकारका शब्द कर रहे हैं। झिल्ली झनकार रही है। पत्तोंपर पानी पड़नेकी आवाज सुनाई देती है। चौकीदार चिल्ला रहा है।

एक वृद्ध अफीमची तकियापर शिर धरे आग सुलगाता और तमाकू भरकर गड गड हुक्का पी रहा है। एक बच्चा सो कर हुई माका स्तनपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर सन्नाटा छाया है। ज्ञायोंसे कुशलवार्तापर भी अवनीको रक्षा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम महा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीको चारों ओर रोशनी हो रही है। दप् दप् मशाल जल रही है। प्रायः बी चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे पड़े हैं। यहां भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिल्लाते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड़ झगड़कर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी बनानेकी तय्यारी हो रही है। रसोई बनानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त 'गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—"हम कल ही ऐसी नौकरी छोड़कर चले जायंगे।"

जहां दारोगाजी किरिच लगाये कमरमें बैठे थे एवं प्रकाण्डकाय कृष्णवर्ण वीरभद्र दारोगाकी दाहिनी ओर चौकीपर काले मसनदपर उठंगे हुए हैं, वहां भी कुछ शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रकी आवाज चार कोसतक सुन पड़ती है, पर आज वह चाठ कोसकी खबर लेती है। 'उन हा—हा—हा विकट हंसीसे पहाड़ गिरते हैं,

कभी औपाति त्वकत्वरवसे भूकम्प होता है, कभी घण्टाकी झंकार, लाठीके ठक् ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें डर पैदा करती है। होता है सब, घटना है सब,—पर अपनी गौरव है।

अथनीकी गौरवता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते। किन्तु सत्तरह वर्षका एक गोरा बालक या युवक निश्चय ही चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभ्रवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा और उसके ऊपर शाल है। पैरमें नया जूता है।

यह दूलहा है क्या? क्या बरातकी तय्यारी हो रही है? पुलिस क्या ग्रामिरत्नाके लिये साथ जायगी?

वर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक वर है, कि चोर? वह न तो वर है और न चोर ही है,—अथच युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी आंखोंसे आंसू क्यों बह रहे हैं। आंसू क्यों, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड़ जाता है? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या?

युवकतो हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है? चेहराभी वैसा ही है, पर ऐसे अच्छे कपड़े उसे कहां मिले? शाल कहां पाया? मोहर चोरको नया वस्त्र देकर किसने उसकी पूजा की? ऐसी अच्छी कुरसी देकर किसने उसकी अभ्यर्थना की? युवक यदि बोलता, तो उसको अवाब पदपातकर कहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं!

एक वृद्ध अफीमची तकियापर शिर धरे आग सुलगाता, और तम्बाकू भरकर गड गड हुक्का पी रहा है। एक बच्चा सोई हुई माका स्तनपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमे मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर सन्नाटा छाया है। वाटोंसे कुचलवानेपर भी अबगोंको कष्ट होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम मचा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारो ओर रोशनी हो रही है। दम् दम् मशाल जल रही है। प्राय' सौ चौकीदार कमर कसे नीलकोठोको घेरे पड़े हैं। यहां भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकडा" यह कहकर चिल्लाते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड़ झगडकर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी बनानेकी तय्यारी हो रही है। रसोइ बनानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—"हम कल ही ऐसी नौकरी छोड़कर चले जायेंगे।"

जहां दारोगाजी किरिच लगाये सजधजसे बैठे थे एवं प्रकाण्डकाय कृष्णवर्ण वीरभद्र दारोगाजीके दाहिनी ओर चौकीपर काले मसनदपर उठंगे हुए हैं, वहां भी कुछ शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रकी आवाज चार कोसतक सुन पड़ती है, पर आज वह आठ कोसकी खबर देती है। उन हा—हा—हा विकट शब्दोंसे पहाड़ गिरते हैं,

कभी क्रोधान्वित न्यक्कारवसे भूकम्प होता है, कभी अश्वकी झङ्कार, लाठीके ठक् ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें डर पैदा करती है। होता है सब, घटना है सब,—पर सदा नीरव है।

अभीकी गौरवता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते। किन्तु सत्तरह वर्षका एक गोरा बालक या युवक निश्चय ही चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभ्रवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा और उसके ऊपर शाल है। पैरमें नया जूता है।

यह दुलहा है क्या? क्या बरातकी तय्यारी हो रही है? पुलिस क्या शादीवालेके लिये साथ जायगी?

वर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक वर है, कि चोर? यह न तो वर है और न चोर ही है,—अथच युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी आंखोंसे आंसू क्यों बह रहे हैं। आंसू पोंछे, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड़ जाता है? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या?

युवकतो हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है? चेहरातो वैसा ही है, पर ऐसे अच्छे कपड़े उसे कहां मिले? शाल कहां पाया? मोहर चोरको नया वस्त्र देकर किसने उसकी पूजा की? ऐसी अच्छी कुरसी देकर किसने उसकी अभ्यर्थना की? युवक यदि बोलता, तो उसकी आवाज पहचानकर कहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं।

एक वृद्ध वाफीसवो तकियापर सिर धरे आग सुलगाता और तम्बाकू भरकर गड़ गड़ हुक्का पी रहा है। एक बचा कोई हुई माता स्तनपान करनेके लिये रो रहा है। इनके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर सन्नाटा छाया है। द्वारीसे कुचरावानेपर भी अवनीको रक्षा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम महा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारों ओर रोशनी हो रही है। दप् दप् मशाल जल रही है। प्रायः सौ चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे खड़े हैं। वहां भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिल्लाते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड़ झगड़कर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये माल बन रहा है, पूरी बनानेकी तय्यारी हो रही है। रसोई बनानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—"हम काम हो ऐसी नौकरी छोड़कर चले जायेंगे।"

जहां दारोगाजी किरिच लगाये सबधबसे बैठे थे एव प्रकाण्डकाय छायावर्ण वीरभद्र दारोगाजी दाहिने ओर चौकीपर काले ममनदपर लुढ़के हुए हैं, वहां भी कुछ शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रको आवाज चार कोसतक सुन पड़ती है, पर आज वह चाट कोसको खबर लेती है। उस हा—हा—हा विकट हंसीसे पहाड़ गिरते हैं,

कभी क्रोधाग्नि व्यवहारसे भूकम्प होता है, कभी खड्गकी झङ्कार, लाठीके ठक्‌ठक्‌ शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें डर पैदा करती है। होता है सब, घटना है सब,—पर सभी नीरव है।

सभीकी नीरवता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते। किन्तु सत्तरह वर्षका एक गोरा बालक या युवक निश्चय ही चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभ्रवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा और उसके ऊपर शाल है। पैरमें नया जूता है।

यह दूल्हा है क्या? क्या बरातकी तयारी हो रही है? पुलिस क्या गिरफ्तारीके लिये साथ जायगी?

वर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक वर है, कि चोर? वह न तो वर है और न चोर ही है,—अथच युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी आंखोंसे आंसू क्यों चल रहे हैं। आंसू चलें, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड़ जाता है? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या?

युवकतो हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है? चेहरातो वैसा ही है, पर ऐसे अच्छे कपड़े उसे कहां मिले? शाल कहां पाया? मोहर-चोरको नया वस्त्र देकर किसने उसकी पूजा की? ऐसी अच्छी कुरसी देकर किसने उसकी अभ्यर्थना की? युवक यदि बोलता, तो उसकी आवाज पहचानकर कहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं।

एक वृद्ध अफीमची तकियापर सिर धरे आग सुलगाता और तम्बाकू भरकर गड़ गड़ हुक्का पी रहा है। एक बच्चा सोई हुई माका स्तनपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर सन्नाटा छाया है। हाथीसे कुचलवानेपर भी अवनीको संज्ञा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम मचा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारों ओर रोशनी हो रही है। दप् दप् मशाल जल रही है। प्राय सौ चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे पड़े हैं। वहां भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिल्लाते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड़ झगड़कर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी बनानेकी तय्यारी हो रही है। रसोई बनानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—"हम कल ही ऐसी नौकरी छोड़कर चले जायेंगे।"

जहां दारोगाजी किरिच लगाये सशस्त्र बैठे थे एवं प्रकाण्डकाय श्यामवर्ण वीरभद्र दारोगाकी दाहिनी ओर चौकीपर काले मसनदपर उठंगे हुए हैं, वहां भी शुद्ध शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रकी आवाज चार कोसतक सुन पड़ती है, पर आज वह आठ कोसकी खबर लेती है। उस हा—हा—हा विकट हंसीसे पहाड़ गिरते हैं।

कभी ओधाति न्वकछरवसे भूकम्प होता है, कभी घन्नकी भङ्कार, लाठीके ठक् ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें घर पैदा करती हैं। होता है सब, घटना है सब,—पर घर्वां गौरव है।

भवानीको गोरखता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते। किन्तु सतारह वर्षका एक गोरा बालक या युवक निश्चय ही चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा और उसके ऊपर शाल है। पैरमें नया जूता है।

यह दुलहा है क्या? क्या बरातकी तय्यारी हो रही है? पुलिस क्या शान्तिरक्षाके लिये साथ जायगी?

वर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक वर है, कि चोर? यह न तो वर है और न चोर ही है,—अथच युवक चुप है।

चुप हो, पर युवकको आखोंसे आंसू क्यों चल रहे हैं। आंसू चलें, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड़ जाता है? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या?

युवकतो हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है? चेहराभी वैसा ही है, पर ऐसे अच्छे कपड़े उसे कहां मिले? शाल कहां पाया? मोहर चोरको नया वस्त्र देकर किसने उसकी पूजा की? ऐसी अच्छी कुरती देकर किसने उसकी अभ्यर्थना की? युवक यदि बोलता, तो उसकी आवाज पहचानकर कहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं।

सत्ताईसवा परिच्छेद।

रात अंधेरी थी। दारोगा साहबका आहार उत्सव बड़े समारोह और प्रसन्नतासे समाप्त हुआ। पूनकी रात प्रायः दोपहर बीत चुकी है। आज श्रीमती नीलकोठीको निद्रा नहीं है। अशोक पुष्पसे केश बांध, अशोकमालासे वक्ष विभूषित तथा अशोकमेखलासे नितम्ब सुशोभित करके हे नीलकोठी सुन्दरी! तुम आज मधुर अधरसे इतना मृदु मृदु क्यों हंस रही हो? इतना उच्छासित, इतना उतफुल्ल हृदय क्यों? संसाररूपी रङ्गभूमिमें मानव महानाटकका महाभिनय देखकर क्या तुम्हारा प्रेम इतना बढ़ा है! सुन्दरि! उत्तम रूपसे देखो और हंसो। हास्यरसका अन्त है, कि नहीं, इसमें सन्देह है।

खजाञ्ची बाबू दारोगाजीके पास इजहार देते हैं,—"थालमें मोहर उठानेपर रमाप्रसाद थालके समीप आ बैठा बैठकर, इधर उधर देखने लगा। मेरे मनमें सन्देह हुआ।

दारोगा। सन्देह क्यों हुआ?

खजाञ्ची। रमाप्रसादकी चञ्चल चितवन और मुखका भाव देखकर।

दारोगा। मुखका भाव कैसा देखा?

खजाञ्ची। चोर जैसा।

दारोगा। अच्छा, और बयान कर जाइये।

दारोगा। होती है हो। हम भी सच्ची बातके विशेष पक्षपाती हैं। हम सबको सदैव सच बोलनेका उपदेश दिया करते हैं। सत्यधर्मका पालन ही हमारा महाव्रत है। सच बोलनेसे स्वर्ग मिलता है, यह हमारे पितामह मरनेके वक्त कह गये थे। आप बेखटके सच बात कह जाइये,—पापी दुराचारी चोर,—उससे रिहाई पावे अथवा सजा, आप उसका कुछ ख्याल न करें। और विचारक यदि विपर्यय-बुद्धि हों, तो भी आपहीके बयानपर रमाप्रसादको तुरत ही जेल भेज देंगे।

खजाञ्ची। भेजें चाहे न भेजें, मैं सच ही कहूंगा। यदि सूर्यके सूर्य पश्चिममें उदय हों, तौभी सत्यपथसे कभी पैर हटानेका नहीं। झूठ बोलनेके वक्त मानो कोई मेरा कलेजा दबाए देता है, कण्ठ बन्द हो जाता है। झूठ न मैं जानता हूं और न बोलता ही हूं।

दारोगा। अच्छा, फिर उसके बाद क्या हुआ? लड़केने भी मोहर चुराई?

[illegible]ञ्ची। नहीं, मैं सच ही कहूंगा। लड़केको झूठा [illegible]गाऊंगा। मैं कह सकता हूं, कि उसने और पांच [illegible] यह बात सच नहीं है, तब मैं किसी [illegible] मुझे मार डालिये, तौभी मैं [illegible]

[illegible] समझमें आया, कि आप [illegible]

[illegible], कि उसका एक मोहर

दारोगा। यह सब देखकर आपने क्या किया?

खजाञ्ची। कुछ नहीं। पहले पहल यह काण्ड देखकर मेरा कलेजा दहल उठा। मैं एक दम चुप हो रहा।

दारोगा। यह तो बड़े ताज्जुबकी बात सुनता हूँ। आपकी तहवीलकी मोहर चोरी गई, चोरको मोहर चुराते आपने खुद देखा, मोहरको बांधकर आगे धोतीमें खोंसते भी देखा। आपकी मोहर चोरी गई, फिर आप चुप क्यों रहे? चोर चोर कहकर हल्ला क्यों न मचाया? उसी वक्त मोहरको छीन क्यों न लिया? कलेजा दहलने और चुप रहनेके बाद भी यह काम क्यों न किया?

खजाञ्ची। हुजूर! अगर आप सच कहने दें, तो मैं कहूँ। मैं सचके सिवाय झूठ कभी नहीं बोलता। चोरीके बाद मैं चुप हो रहा था, यह सच है। मैंने समझ लिया था, कि चोर तो मेरी मुठीमें है, भागकर जायगा कहां? अभी हल्ला मचाकर क्यों गोलमाल करूं, बरन यह देखूं, कि चोर और चोरी करता है, कि नहीं? देखूं, चोरकी दौड़ कहांतक है? हुजूर! इसीसे मैं चुप हो गया था।

दारोगा। पर अदालत इस बातका विश्वास करेगी, कि नहीं, इसमें सन्देह है।

खजाञ्ची। विश्वास करे चाहे न करे, मैं सचके सिवाय झूठ जानता नहीं। मेरे पुरखे कभी झूठ नहीं बोले। लाख रुपया देनेपर भी मैं झूठ नहीं बोल सकता। मैं जो जानता था, ठीक ठीक कह दिया है, अदालत विश्वास करे चाहे न करे।

दारोगा। थीतो है ही। हम भी सच्ची बातके विशेष पक्षपाती हैं। हम सबको सदैव सच बोलनेका उपदेश दिया करते हैं। सत्यधर्म्मका पालन ही हमारा महाव्रत है। सच बोलनेसे स्वर्ग मिलता है, यह हमारे पितामह मरनेके वक्त कह गये थे। आप बेखटके सच बात कह जाइये,—पापी दुराचारी चोर,—उससे रिहाई पावे अथवा सजा, आप उसका कुछ ख्याल न करें। और विचारक यदि विचक्षण बुद्धि हों, तो वह आपहीके बयानपर रमाप्रसादको तुरत ही जेल भेज देंगे।

खजाञ्ची। भेजें चाहे न भेजें, मैं सच ही कहूंगा। यदि पूर्व्वके सूर्य्य पश्चिममें उदय हों, तौभी सत्यपथसे कभी पैर हटानेका नहीं। झूठ बोलनेके वक्त मानो कोई मेरा कलेजा पकड़ लेता है, कण्ठ बन्द हो जाता है। झूठ न मैं जानता हूं और न बोलता ही हूं।

दारोगा। अच्छा, फिर उसके बाद क्या हुआ? लड़केने और भी मोहर चुराई?

खजाञ्ची। नहीं, मैं सच ही कहूंगा। लड़केको वृथा कलङ्क न लगाऊंगा। मैं कह सकता हूं, कि उसने और पांच मोहरें चुराई हैं, पर जब वह बात सच नहीं है, तब मैं किसी तरह कहनेका नहीं। चाहे मुझे मार डालिये, तौभी मैं कभी वैसी बात न कहूंगा।

दारोगा। इतनी देरके बाद समझमें आया, कि आप प्रकृत साधु हैं। फिर क्या हुआ?

खजाञ्ची। जब मैंने यह देखा, कि लड़का एक मोहर

लेकर और चोरी नहीं करता पुण है, तो मैंने नायबदीवान जीसे कह दिया,—"इस लड़केने मोहर चुराई है।"

इसपर नायबदीवानजीने रमाप्रसादको मिलाजुला, डरा धमकाकर मोहरको निकाल लिया।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—मोहर चोरी जानेके वक्त वहां और कौन कौन था? उस समय वक्त क्या था? रमाप्रसाद किस वक्त नीलकोठीमें आया था?"

खजाञ्चीजीने उसका यथायथ उत्तर दिया। दारोगाने कहा,—"खजाञ्चीजी। अब आप अपने इजहारके नीचे दस्तखत कर दें।"

धार्म्मिक खजाञ्चीने धार्म्मिक दारोगाके कहने मुताबिक धर्मपत्रपर दस्तखत कर दिया।

अट्ठाईसवां परिच्छेद।

दारोगाने वीरभद्रसे कहा,—"आप अव्वल गवाह बनिये। वीरभद्रने उत्तर दिया,—नहीं, पहले और और गवाहोंसे गवाही दिलाइ गा। उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिककी भलाईके लिये हम खुद गवाही देंगे।"

दारोगाने चुपचाप वीरभद्रसे कहा,—"और गवाह सब खजाञ्चीकी तरह पक्के तो होंगे? मैंने चुपचाप जैसी शिक्षा दी है, वैसाही वह लोग कह सकेंगे तो?"

वीरभद्र। कहना ही सम्भव है।

इसी समय एक दीर्घाकार ब्राह्मणने खड़े होकर कहा,—"साक्षी देनेकी चिन्ता कैसी? मैंने चोरी करते देखा है और उसका सब हाल जानता हूं"।

उसे सामने लाकर दारोगाने कहा,—"जब तुम चोरीका सब हाल जानते हो, तब तुम्हें अवश्य गवाह बनना पड़ेगा। अच्छा, इजहार दो। बोलो, तुम्हारा नाम क्या है?

गवाह। मेरा नाम गोपाल है।

दारोगा। ठीक कहो,—क्या तुम्हारा नाम खाली गोपाल है?

गवाह। खाली गोपाल नहीं, तो क्या काली गोपाल?

दारोगा। अच्छी तरह समझकर बोलो। कौन गोपाल, समझ बूझकर कहो।

गवाह। इस सीधी बातको समझ बूझकर क्या कहूं? मैं जयगोपाल नहीं, रामगोपाल नहीं, कृष्णगोपाल नहीं, यदु गोपाल नहीं, शिवगोपाल नहीं,—मैं केवल गोपाल हूं।

वीरभद्र। सो हम तुमसे नहीं पूछते,—हमारा पूछना है, कि तुम तिवारी, दुबे, मिश्र, वाजपेयी क्या हो, सो खोलकर साफ साफ कहो?

गवाह। मैं तिवारी, दुबे वगैरह कुछ भी नहीं हूं—मैं गोपाल पाण्डेय हूं।

दारोगा। (चुपचाप वीरभद्रसे) इससे गवाही दिलाना अच्छा नहीं। दूसरे आदमीको बुलाइये।

इतनी बात सुनकर गोपाल पाण्डेय क्रोधी हुआ और ताककर खड़े हुए आंखें, हाथ फैलाकर कहा,—"क्या कहा, कि मैं

लेकर और चोरी नहीं करता हुए है, तो मैंने नायबदीवान जीसे कह दिया,—"इस लड़केने मोहर चुराई है।"

इसपर नायबदीवानजीने रमाप्रसादको मिलाजुला, डरा धमकाकर मोहरको निकाल लिया।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—"मोहर चोरी जानेके वक्त वहां और कौन कौन था? उस समय वक्त क्या था? रमाप्रसाद किस वक्त नीलकोठीमें आया था?"

खजाञ्चीजीने उसका यथायथ उत्तर दिया। दारोगाने कहा,—"खजाञ्चीजी। अब आप अपने इजहारके नीचे दस्त खत कर दें।"

धार्म्मिक खजाञ्चीने धार्म्मिक दारोगाके कहने मुताबिक धर्म्मपत्रपर दस्तखत कर दिया।

अट्ठाईसवां परिच्छेद।

दारोगाने वीरभद्रसे कहा,—"आप अव्वल गवाह बनिये।" वीरभद्रने उत्तर दिया,—नहीं, पहले और और गवाहोंसे गवाही दिलवाइये। उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिककी भलाईके लिये हम खुद गवाही देंगे।"

दारोगाने चुपचाप वीरभद्रसे कहा,—"और गवाह सब खजाञ्चीकी तरह पक्के तो होंगे? मैंने चुपचाप जैसी शिक्षा दी है, वैसाही वह लोग कह सकेंगे तो?"

वीरभद्र। कहना ही सम्भव है।

इसी समय एक दीर्घाकार आदमीने खड़े होकर कहा,—"गवाही देनेकी चिन्ता कैसी? मैंने चोरी करते देखा है और उसका सब हाल जानता हूं"।

उसे सामने पाकर दारोगाने कहा,—"जब तुम चोरीका सब हाल जानते हो, तब तुम्हें अवश्य गवाह बनना पड़ेगा। अच्छा, हुशियार हो। बोलो, तुम्हारा नाम क्या है?

गवाह। मेरा नाम गोपाल है।

दारोगा। ठीक कहो,—क्या तुम्हारा नाम खाली गोपाल है?

गवाह। खाली गोपाल नहीं, तो क्या भाली गोपाल?

दारोगा। अच्छी तरह समझकर बोलो। कौन गोपाल, समझ बूझकर कहो।

गवाह। इस सीधी बातको समझ बूझकर क्या कहूं? मैं नयगोपाल नहीं, रामगोपाल नहीं, कृष्णगोपाल नहीं, यदु गोपाल नहीं, प्रियगोपाल नहीं,—मैं केवल गोपाल हूं।

वीरभद्र। सो हम तुमसे नहीं पूछते,—हमारा पूछना है, कि तुम तिवारी, दुबे, मिश्र, वाजपेयी क्या हो, सो खोलकर साफ साफ कहो?

गवाह। मैं तिवारी, दुबे वगैरह कुछ भी नहीं हूं—मैं गोपाल पाण्डेय हूं।

दारोगा। (चुपचाप वीरभद्रसे) इससे गवाही दिलाना अच्छा नहीं। दूसरे आदमीको बुलाइये।

इतनी बात सुनकर गोपाल पाण्डेय छाती फुला और तनकर खड़े हुए और हाथ फैलाकर कहा,—"क्या कहा, कि मैं

देखकर और चोरी नहीं करता चुप है, तो मैंने नायबदीवान जीसे कह दिया,—"इस लड़केने मोहर चुराई है।"

इसपर नायबदीवानजीने रमाप्रसादको मिलजुला, डरा धमकाकर मोहरको निकाल लिया।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—"मोहर चोरी जानेके वक्त वहां और कौन कौन था? उस समय वकृत क्या था? रमाप्रसाद किस वक्त नीलकोठीमें आया था?"

खजाञ्चीजीने उसका यथायथ उत्तर दिया। दारोगाने कहा,—"खजाञ्चीजी! अब आप अपने इजहारके नीचे दस्तखत कर दें।"

धार्मिक खजाञ्चीने धार्मिक दारोगाके कहने मुताबिक धर्मपसमर दस्तखत कर दिया।

अट्ठाईसवां परिच्छेद।

दारोगाने वीरभद्रसे कहा,—"आप अव्वल गवाह बनिये।"
वीरभद्रने उत्तर दिया,—"नहीं, पहले और और गवाहोंसे गवाही दिलाइयेगा। उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिककी भलाईके लिये हम खुद गवाही देंगे।"

दारोगाने चुपचाप वीरभद्रसे कहा,—"और गवाह सब खजाञ्चीकी तरह पक्के तो होंगे? मैंने चुपचाप जैसी शिक्षा दी है, वैसाही वह लोग कह सकेंगे तो?"

वीरभद्र। कहना ही सम्भव है।

दारोगा। तब तुम कौन काम करते हो ?

गवाह। मैं बाबूके पास बैठा करता हूं। उनसे बातचीत करता हूं—

दारोगा। बैठे बैठे क्या करते हो ?

गवाह। करूंगा क्या ?

दारोगा। कुछ भी नहीं करते ?

गवाह। हां कुछ कुछ तो करता ही हूं। नौकर बाबूका अम्बूरी तम्बाकू भरकर ले आया। चिलम लेकर सुलगानेके बहाने खूब पीकर तब चिलमको बाबूके हुक्केपर रख देता हूं। बाबू दो-चार बार पीकर छोड़ दिया। मैं फिर चिलम उतारकर पीने लगा। बाबूके पास यही मेरा काम है। क्या मैं नाहक डरता या प्रश्नोता हूं ?

दारोगा। तुम्हारे पदका क्या नाम है ?—जैसे कोई खजाञ्ची, कोई दीवान, कोई नायब और कोई डिगरीजारीके मुहर्रिर हैं—उसी तरह तुम्हारे पदका भी तो एक न एक नाम अवश्य ही होगा ?

गवाह। (कुछ हंसकर) मेरे पदका नाम है,—बाबूके सपरिष्टन्ट

इतना सुनकर गोपाल आपही आप हंस पड़े। गवाह हंसते कहने लगा,—"दारोगाजी आप जिरहमें मुझे उलझाना चाहते हैं, सो हो नहीं सकता। देखनेमें मैं बुद्धू मालूम हूं, लेकिन जब गवाही देने जाता हूं, तो हाकिमलोग भी डर जाते हैं।"

बोलते बोलते गोपालके दोनों गालपर खूब हंसी खिलने लगी।

गवाही नहीं दे सकता? मुझसे अच्छा गवाह और कौन मिलता है, भला देखें तो। मेरे तीन पुश्तसे यही काम होता आता है,—और मैं आपको ऐसे नहीं जानता। उस बार मकईके मुकद्दमेमें हाईकोर्टके जज साहबने आकर तीन दिनतक जिरह की थी, तोभी मेरा मुंह बन्द न हुआ था। अन्तमें जज साहबने प्रसन्न होकर कहा था,—"साबाश साक्षी।" आप दोनों आदमी कानाफूसी करके क्या फुसफुस कर रहे हैं? मैं गवाही नहीं दे सकता!—यह बात सुननेसे क्रोध होता है,—मेरे नाममें कलङ्क लगता है।

वीरभद्रने दारोगासे कहा,—"पाण्डेयको गवाही देनेका अभ्यास है। आप उससे मोहरकी चोरीके बारेमें सवाल करके देखिये न,—वह क्या कहता है।"

दारोगा। तुम कौन काम करते हो?

गवाह। मैं बाबूके यहांका सभी काम करता हूं।

दारोगा। सवालका जवाब नहीं हुआ।—तुमपर किस कामका भार सौंपा गया है, बताओ?

गवाह। सो मैं नहीं जानता। भार वार मैं कुछ जानता नहीं,—जब जो काम आ पड़ता है, उसे करता हूं। बिना मेरे बाबूका कोई काम ही नहीं हो सकता। मैं जो करता हूं, वही होता है।

दारोगा। (लज्जित क्रोधसे) अच्छा, बाबूके घोड़ेकी घास भी तुम्हीं गढ़ते हो?

गवाह। मैं ब्राह्मणका लड़का हूं,—घास क्यों गढ़ूंगा? वह सब काम मेरे नौकरका नौकर करता है।

दारोगा। तब तुम कौन काम करते हो?

गवाह। मैं बाबूके पास बैठा करता हूं। उनसे बातचीत करता हू—

दारोगा। बैठे बैठे क्या करते हो?

गवाह। करूंगा क्या?

दारोगा। कुछ भी नहीं करते?

गवाह हां कुछ कुछ तो करता ही हूं। नौकर बाबूका चम्पूसे तम्बाकू भरकर ले आया। चिलम लेकर सुलगानेके बहाने खूब पीकर तब चिलमको बाबूके हुकेपर रख देता हू। बाबूने दो चार बार पीकर छोड़ दिया। मैं फिर चिलम उतारकर पीने लगा। बाबूके पास यही मेरा काम है। क्या मैं बाबूसे डरता या घबराता हू?

दारोगा। तुम्हारे पदका क्या नाम है?—यहां कोई खजाञ्ची, कोई दीवान, कोई नायब और कोई सिपाहीओंके सरदार हैं—उसी तरह तुम्हारे पदका भी तो एक न एक नाम अवश्य ही होगा?

गवाह। (कुछ सोचकर) मेरे पदका नाम है,—बाबूके सुपरिन्टेन्ड

इतना कहकर गोपाल आपही आप फूल उठे। हंसते हंसते कहने लगे,—"दारोगाजी आप जिरहमें मुझे उलझाना चाहते हैं, सो हो नहीं सकता। देखनेमें मैं खूब बालिश, लेकिन जब गवाही देने जाता हू, तो हाकिमलोग भी डर जाते हैं।"

बोलते बोलते गोपालके दोनो गालसे खूब हंसी निकलने लगी।

दारोगा। अच्छा, तुम चोरीके बारेमें क्या जानते हो?

गवाह। सब कुछ जानता हूं।

दारोगा। सब क्या जानते हो, कहो न?

गवाह। सब जानता हूं। उसमें क्या कहना होगा! आप पूछिये न। विना पूछे मैं कैसे कुछ कहूं?

दारोगा। चोरको तुम पहचानते हो?

गवाह। क्या चोरके और मेरे मकानकी एकही दीवार है, या चोर मेरा साला सम्बन्धी है, जो चोरको मैं पहचान रखूंगा? चोरही चोरको पहचानता है। क्या मैं चोर हूं जो चोरको पहचानूंगा?

पास ही रमाप्रसाद बैठा था। दारोगाने उसकी ओर उंगुली देखाकर पूछा;—यह कौन है?

गवाह। यह मनुष्य है।

रमाप्रसादकी सूरत शकल अच्छी तरह देखकर गवाहने फिर कहा,—"हां, यह मनुष्य ही तो है। इसके दो हाथ, दो पैर, दो नेत्र,—यह सब तो ठीक ठीक ही हैं।—यह मनुष्य नहीं तो और क्या है? (हंसकर) आप चाहे जितना पूछिये, जिरहमें आप मुझे कभी तोड न सकेंगे।"

दारोगा। यह सब जाने दो,—तुमसे यह पूछते हैं, कि इन्होंने मोहर चुराई है?

गवाह। मोहर चुराना किसे कहते हैं? चोरीके वक्त "चोर, चोर," कहकर शोर गुल तो हुआ नहीं, जिससे समझा जाय, कि मोहर चोरी हो रही है। किन्तु इस आदमीने मेरे तथा और और लोगोंके सामने एक मुठी मोहर उठा

लिया था। आप धर्मावतार हाकिम हैं,—उठा लेना अगर चोरी है, तो हमने मोहर चुराई है। आप जैसा विचार कीजिये। (हसकर) जिरहमें मुझे नहीं तोड सकते। मैंने लाखो जगह गवाही दी है।

दारोगा। तुम्हारी उमर कितनी है?

गवाह। मेरे जिवाहकी बातचीत होती है क्या?

- दारोगा। सवालका ठीक ठीक जबाब दो।

गवाह। जन्मपत्री तो मैं लाया नहीं, जो आपको उमर बता दूं? किसकी कितनी उमर है, कोई भी ठीक नहीं बता सकता। घण्टा, मिनट, पल अनुपलका फर्क पडेहीगा। किन्तु अन्दाजसे कह सकता हूं और आप भी अन्दाजसे मेरी उमर जान सकते हैं,—सभी अन्दाजी है। सनदां इस प्रश्नके पूछनेकी आवश्यकता ही क्या है? (हसकर) आप जिरहमें मुझे नहीं तोड सकते—मां कालीका वर है।

दारोगा। तुम मुशहरा कितना पाते हो?

गवाह। मेरे मुशहरेका क्या? एक एकदिन खजानेकी कुञ्जी ही मेरे हाथमें रहती है। मैं अन्दर जाता हूं और अकेले पांच हजार रुपयेके गहनेका बक्स उठा लाता हूं। मेरा मुशहरा क्या। सबकी औरतें मुझसे बातचीत करती हैं,—जब जिसे जिस चीजकी जरूरत पडती है,—मैं खरीदकर ला देता हूं। विना मेरे उनका हाट बाजार हो नहीं सकता। मेरा मुशहरा क्या? मालिक मुझे इतना मानतेहैं, कि बिना मेरी रायके कोई काम ही नहीं करते। मेरा मुशहरा-क्या? मैं जो करता हूं, वही होता है। मालिकके ऐसा

ध्यावें, तौभी जिरहमें मुझे नहीं हरा सकते। अच्छा सुनिये,
कछ विवाहकी बात,—

वीरभद्र। रहिये पाण्डेयजी रहिये।

गदाह। और ठहरने कहां पाते हैं? यह जिस तरह
वाहियात बात पूछ रहे हैं, उससे इच्छा होती है, कि अ
शादीकी बात कह डालूं। कहे डालता हूं—देखिये। पि
यह कहेंगे, कि पाण्डेयजी जिरहमें नहीं ठहर सके, सो होग
नहीं।

दारोगा। (कुछ हंसकर) नहीं, पाण्डेयजी। आपक
कहना नहीं पड़ेगा,—मुझे ऐसी शक्ति नहीं है, कि आपक
जिरहमें पकड़ सकूं।

गदाह। तब आप हंसते क्यों हैं?

अबतक लोग चुपचाप हंस रहे थे। "हंसते क्यों हैं"
इतना सुनते ही सब कोई ठठाकर हंस पड़े। पाण्डेयजीक
प्रतिद्वन्द्वी गदाधर हज्जाम था। वह हंसते हंसते लोट गया
धुमड़ते लुमड़ते पाण्डेयजीकी ओर आने लगा। यह देख
पाण्डेयजी अनन्योपाय हो विकट मधुर स्वरसे "बापरे बाप
चिल्लाते और यह कहते हुए, "नील कोठीमें जोतो मदूल क
कोड़े पड़ते हैं," भाग गये।

सैंतीसवां परिच्छेद ।

हंसी बन्द हुई। शान्ति स्थापित हुई। फिर गाम्भीर्य्यकी घोर घटा देख पड़ने लगी। फिर कार्य्य आरम्भ हुआ। जिसमें और कोई न सुनने पावे इसलिये दारोगाने धीरे धीरे वीरभद्रसे कहा,—ज्यादा गवाहोंकी जरूरत नहीं है। गवाह ज्यादा होनेसे प्रायः मुकद्दमा खराब हो जाता है। तीन अच्छे अच्छे गवाहोंको छांटकर अलग कर लीजिये। उन लोगोंका बयान यदि लड़्डूके इजहारसे मिल जाय, तो आप निश्चय जानियेगा, कि मुकद्दमेमें आपको जीत होगी। तीन अच्छे गवाह ही काफी हैं।

वीरभद्र। इसके लिये चिन्ता क्या है। नीलकोठीके अधिकांश आदमी उपयुक्त हैं।

पारापारी तीन गवाह आये और उनका इजहार लिया गया। प्रत्येक गवाहने बयान किया,—"रमाप्रसादने दाहिने हाथसे थालमेंसे एक मोहर उठा ली। फिर उसे धोतीके कोनेमें बांधकर आगे धोतीमें खोंस लिया।"

दारोगा बहुत खुश हुए। उन्होंने कहा,—बस, तीन गवाह ही बहुत हैं। और जरूरत नहीं है। पूरा प्रमाण मिला है।

वीरभद्र। और दो एक गवाह गुजरना क्या अच्छा न होगा?

दारोगा। नहीं,—थोड़े ही गवाह अच्छे होते हैं। किन्तु एक दूसरे किस्मका गवाह हो, तो कोई खराब बात नहीं है।

वीरभद्र और दारोगाने फुसफुसाकर कुछ परामर्श किया। फिर तुरन्त ही वीरभद्र उठ गये। दण्डभरके बाद लौट आये। थोड़ी देरके बाद और एक गवाह आया। उसने कहा,—"रमाप्रसादको हम पहचानते हैं। हम हलवाई हैं। बताशा पेड़ा और कलाकन्द बेचते हैं। रमाप्रसादने एकबार हमारी दूकानसे कलाकन्द चुराकर खाया था।"

दारोगा चौंक उठे—"ऐं! तुम क्या कहते हो! तुम्हारी दूकानमें चोरी हुई और तुमने थानेमें खबर न दी?"

हलवाई। हुजूर! दो कलाकन्दके लिये थानेमें क्या खबर देता?

दारोगा। एक दो कलाकन्द चुराना और मनभर चुराना दोनो बराबर ही हैं। दोनो चोरी ही है। यह तुमने बड़ा खराब काम किया, कि थानेमें चोरीकी खबर न दी। तुमने पक्षान्तरसे चोरको प्रश्रय दिया है। जो आदमी चोरको प्रश्रय देता है, अदालतसे वह दण्ड पाता है।

हलवाई। हुजूर! हम गरीब आदमी हैं,—क्या कहते कहते क्या कह जाता। हमें क्या कहना होगा, सो आप अच्छी तरह बता दीजिये।

दारोगा। ऐसा कहो, कि कलाकन्द खाकर दाम नहीं दिया।

हलवाई। हम चोर रमाप्रसादने हमारी दूकानसे कला-कन्द लेकर खाया। दाम मांगनेपर भाग गया। आज

इसने दूकानपर आकर कहा,—"तुम क्रोध मत करो,—शीघ्र ही तुम्हारा पैसा दे देंगे। फिर बात ही बातमें हमसे पूछा,—"कलकत्तेसे नीलकोठीमें मोखरके तोड़े आये हैं क्या?" हमने कहा,—"आज हाथीपर कई तोड़े आये हैं। वे मोहर चौके तोड़े हैं, कि नहीं, सो नहीं जानते।" इसकी बातके सुनते ही रमाप्रसाद उठा। हमने कहा,—"कलाकन्दका दाम क्यों नहीं देता?" इसपर रमाप्रसादने कहा, कि मैं अभी आता हूं। एक आदमीसे कुछ रुपये मिलना है। आज हीका करार है। रुपया पाने हीसे आज तुम्हारा दाम देकर जाऊंगा। रमाप्रसादकी बातसे हमे सन्देह हुआ। हम उसके पीछे पीछे प्राय सौ कदमपर चुपचाप चले। वह खड़ुकके मकानकी ओर नहीं गया, नीलकोठीकी ओर चला। धीरे धीरे नीलकोठीके अन्दर जा पहुंचा। हमने सोचा, कि यह लड़का कैसा भूठा है। निःसन्देह आज इसके जीमें बुराई है।

दारोगा। (चुपचाप नीरभद्रसे) ऐसा पोचक प्रमाण बुरा नहीं है, किन्तु और कुछ सम्हलकर कहनेकी जरूरत है नीलमाल अदालतमें नहीं चलता। जहांतक बना हमने ठीक करके लिख लिया है। अदालतमें क्या कहना होगा, सो हम फिर सिखा देंगे। (कुछ चुप रहकर) अच्छा, यहां इस हलवाईके सिवाय और कोई भला आदमी नहीं है क्या? यह हलवाई कुछ कच्चा मालूम होता है। पक्का आदमी चाहिये,—पक्का!

तीसवां परिच्छेद।



रमाप्रसाद अभीतक चुप है। एक पुतलीकी तरह कुरसी-पर बैठा है। उसके पलक गिरते हैं क्या? क्या वह कोई बात सुनता है? क्या सुनने पाता है? भाजरा देखता है क्या? समझता है क्या? कि उसकी आंखोंसे देख नहीं पड़ता, कानोंसे सुन नहीं पड़ता और मुंहसे बोली नहीं निकलती? क्या वह गूंगा है? उसके सिरपरसे इतना प्रलय तूफान चला गया, तथापि वह इतना धीर स्थिर क्यों है? ध्यानमय योगीकी भांति निश्चल निर्विकार क्यों है?

गवाहोंका इजहार खतम होनेपर दारोगाने तीव्रदृष्टिसे रमाप्रसादकी ओर देखकर कहा,—"अगर तुम्हें कुछ कहना हो, तो अभी कहो। चुप रहनेसे नहीं बनेगा। फिर ऐसे तुम्हारी कामर्में चुप रहना भी; अच्छा नहीं है। चुप रहनेसे ही हानि है। तुम्हारे ऊपर चोरीका गुरुतर अभियोग है। मुद्दईके इजहारऔर गवाहोंके बयानसे तुम चोर साबित होते हो। यदि तुमने सचमुच ही चोरी कीहै, तो साफ साफ कह दो। सच कहनेमें तुम्हारी ही भलाई है। सजा कम हो सकती है,— बेलाग छूट भी सकते हो। अगर तुम डिप्टी बाबूसे रो रो कहोगे,—"मैं अभी लड़का हूं। मोहरका लालच रोक नहीं सकता, इसीसे एक मोहर चुरा ली।" तो डिप्टी साहब

दया करके तुम्हें छोड़ भी सकते हैं। अगर बहुत होगा, तो दो रुपया जुर्माना करेंगे। कुछ डर नहीं है। तुम सच बात कहो। वह दो रुपया हम अपने पाकटसे देनेपर राजी हैं। डर क्या है? तुम तो निरे लड़के नहीं हो,—सच कहनेसे पुण्य होता है, झूठ बोलना महापाप है;—यह सब तो तुम जानते हो। सच कहनेसे भगवान प्रसन्न होते हैं,—डिप्टी साहबकी छोड़नेकी इच्छा न रहनेपर भी परमेश्वर प्रसन्न होकर तुम्हें रिहाई दे सकते हैं। इसीसे कहते हैं, तुम कभी सत्यपथको मत छोड़ना। हमें विश्वास करो। हम तुम्हारे परम सुहृद हैं। हमें दूसरा मत समझना। हम जो कुछ कहते हैं, तुम्हारी भलाई होके लिये कहते हैं। अतएव कहो,—"हमने मोहर चुराई है।"

बालक तौभी चुप हो रहा।

दारोगा। देखो, तुम निरे लड़के हो। सच कहकर अपनी जान बचाओ। हमारा उपदेश सुनो। झूठ बोलकर क्यों आफतमें फसोगे?' ऐसे प्रमाणपर तुम्हारे छूटनेका कोई उपाय नहीं दीखता। सच बात कहो, हाकिमको दया होगी,—वह तुरत ही तुम्हें छोड़ देंगे।

बालक तौभी कुछ नहीं बोला।

दारोगा। अच्छा, यदि बोलनेमें तुम्हें शर्म लगती हो, और सब आदमियोंके सामने "मैं चोर हूं" यदि इस बातके कहनेमें लज्जा लगती हो, तो दावात कलम कागज देते हैं,—तुमने जिस तरह चोरी की थी, उसे लिखकर दस्तखत कर दो।

तीसवा परिच्छेद ।

रमाप्रसाद अभीतक चुप है। एक पुतलीकी तरह कुरसी-पर बैठा है। उसके पलक गिरते हैं क्या? क्या वह कोई बात सुनता है? क्या सुनने पाता है?, माजरा देखता है क्या? समझता है क्या? कि उसकी आँखोंसे देख नहीं पड़ता, कानोंसे सुन नहीं पड़ता और मुंहसे बोली नहीं निकलती? क्या वह गूंगा है? उसके सिरपरसे इतना प्रलय तूफान चला गया, तथापि वह इतना धीर स्थिर क्यों है? ध्यानमग्न योगीकी भाँति निश्चल निर्विकार क्यों है?

गवाहोंका इजहार खतम होनेपर दारोगाने तीक्ष्णदृष्टिसे रमाप्रसादकी ओर देखकर कहा,—"अगर तुम्हें कुछ कहना हो, तो अभी कहो। चुप रहनेसे नहीं बनेगा। फिर ऐसे तुम्हारी काममें चुप रहना भी अच्छा नहीं है। चुप रहनेसे ही हानि है। तुम्हारे ऊपर चोरीका गुरुतर अभियोग है। मुद्दईके इजहार और गवाहोंके बयानसे तुम चोर साबित होते हो। यदि तुमने सचमुच ही चोरी कीहै, तो साफ साफ कह दो। सच कहनेमें तुम्हारी ही भलाई है। सजा कम हो सकती है,— बेलाग छूट भी सकते हो। अगर तुम डिप्टी बाबूसे रो रो कहोगे,—"मैं अभी लड़का हूं। मोहरका लालच रोक नहीं सकता, इसीसे एक मोहर चुरा ली।" तो डिप्टी साहब

बार बार बालकसे इस तरह उपेक्षित होनेपर दारोगाजीका क्रोधानल भड़क उठा।—"हरामजादा! पाजी! बदमाश! तू जानता नहीं, कि हमारा नाम रामसिंह दारोगा है!—हमारे डरसे बाघ बकरी दोनों एक ही घाटपर पानी पीते हैं!—अगर तुझे काटकर दो खण्ड कर डालें, तो तेरा बचानेवाला यहां कोई नहीं है। अगर फिर चालाकी करेगा,—और बोलेगा नहीं, तो एक ही थप्पड़में तेरी जान ले डालेंगे। यदि यम पुरी देखनेकी इच्छा तुझे नहीं है, तो अबभी कहते हैं,—बोल।"

बालक चुप है।

यह देखकर क्रोधान्ध दारोगाने थप्पड़ मारनेके लिये हाथ उठाया।

व्यापार विपरीत देखकर वीरमदने दारोगाका हाथ पकड़ कर धीरे धीरे कहा,—"आप शान्त होइये। हमारी बात सुनिये। चोरीके बाद ऐसी परीक्षा खूब कुछ हुई थी। उस समय भी यह कुछ न बोला था। थप्पड़के सिवाय हमने और कई तरहकी कड़ाई की थी, तौभी यह न बोला था। अन्तमें मूर्च्छित हो गया था। उस समय किसी किसीने यह ख्याल किया था, कि इसके प्राण निकल गये। तौभी यह निष्ठुर बालक बोला नहीं। इसे थप्पड़ मारिये, इसके दाँत तोड़ डालिये, फांसीपर लटका दीजिये,—पर यह बोलेगा नहीं,—यह ऐसा वैसा चोर नहीं है। इसीसे कहते हैं, कि छोड़िये।"

रमाप्रसादने दावात, कलम कागजको छुआ भी नहीं। वह सब ज्योंके त्यों ही धरे रहे।

दारोगा। तुम बड़े गंवार मालूम होते हो! तुम आप ही अपनेको चोर बनाकर गिरफ्तार कराते हो। तुम क्या चोर हो?—इस प्रश्नका उत्तर हां या नहीं, सब सहजमें ही दिया करते हैं। जब तुम कोई जवाब नहीं दे सकते, तो अदालत निश्चय ही तुम्हें चोर कहकर पकड़ लेगी। अतएव ऐसी मूर्खताका काम *कभी मत करो। अगर तुमने चोरी नहीं की, तो साफ साफ क्यों नहीं कहते, कि हमने चोरी नहीं की। अच्छा कहो, शीघ्र बोलो;—हमने चोरी नहीं की।"

रमाप्रसाद तौभी चुप ही रहा।

दारोगा। देखो, हमने अनेक दुष्ट बदमाशोंको देखा है; किन्तु तुम जैसा गंवार कभी नहीं देखा। यदि चोरीकी है, तो कहो,—"चोरी की है,—और यदि चोरी नहीं की, तो कहो —"चोरी नहीं की।—इस तरह चुप रहनेसे नहीं चलेगा।— यह तमाशा या मसखरी नहीं है। तुम दोषी हो, कि निर्दोष इन दोनो प्रश्नोंमें एकका उत्तर देना ही होगा। अगर जवाब न दोगे, तो एक थप्पड़ लगाते ही आंखोंके सामने सरसों फूल उठेगी। बोलो, कि कहता हूं—

इतना कहकर दारोगाने रमाप्रसादके मुंहकी ओर देखा, तो रमाप्रसादको वैसा ही पाया। धमकीको विफल जाते देखकर दारोगाने क्रोधसे कहा—"अरे। इधौंदोसे थे धा— इस छोकड़ेके दांत तोड़कर रख दे।"

इधौंदी आ गई, पर बालक उसी तरह चुप है।

बार बार बालकसे इस तरह उपेक्षित होनेपर दारोगाजीका क्रोधानल भड़क उठा।—"हरामजादा! पाजी! बदमाश तू जानता नहीं, कि हमारा नाम रामसिंह दारोगा है।—हमारे डरसे बाघ बकरी दोनों एक ही घाटपर पानी पीते हैं—अगर तुझे काटकर दो खण्ड कर डालें, तो तेरा बचानेवाला यहाँ कोई नहीं है। अगर फिर चालाकी करेगा,—और बोलेगा नहीं, तो एक ही थप्पड़में तेरी जान ले लेंगे। यदि यम पुरी देखनेकी इच्छा तुझे नहीं है, तो अभी कहते हैं,—बोल।"

बालक चुप है।

यह देखकर क्रोधान्ध दारोगाने थप्पड़ मारनेके लिये हाथ उठाया।

व्यापार विपरीत देखकर वीरभद्रने दारोगाका हाथ पकड़-कर धीरे धीरे कहा,—"आप शान्त होइये। हमारी बात सुनिये। चोरीके बाद ऐसी परीक्षा कुछ कुछ हुई थी। उस समय भी यह कुछ न बोला था। थप्पड़के सिवाय हमने और कई तरहकी कड़ाई की थी, तौभी यह न बोला था। अन्तमें मूर्छित हो गया था। उस समय किसी किसीने यह अनुमान किया था, कि इसके प्राण निकल गये। तौभी यह विकारग्रस्त बालक बोला नहीं। उसे थप्पड़ मारिये, उसके दाँत तोड़ डालिये, फाँसीपर लटका दीजिये,—पर वह बोलेगा नहीं,—वह ऐसा वैसा चोर नहीं है। इसीसे कहते हैं, कि आप शान्त होइये।"

दारोगा। आपकी बात हम उठा नहीं सकते, किन्तु आप एक ही थप्पड़में [illegible]को सुनलें।

वीरभद्र। आपके एक धप्पड़ लगानेसे वह बोलता या न बोलता, पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ता, यह निश्चय था। पहले एकबार इसकी मूर्च्छा तोड़नेमें हम बहुत कष्ट उठा चुके हैं। अन्तमें खिला पिलाकर इसे बलवान बनाया है। अगर हम इसकी इतनी सेवा शुश्रूषा न करते, तो आप महालहको देख भी न सकते। अबतक तो यह मर गया होता। जब महालहके मरनेके लक्षण न देख पड़े, तो सेवा करके उसे जिला रखना ही उचित है। जीवित न रहेगा, तो दण्ड किसे दिया जायगा? दण्ड होने हीसे तो फल लाभ होगा। इस कठिन जाड़ेमें महालहको कहीं कष्ट न हो और वह बीमार न हो जाय, इसलिये हमने अपना कपड़ा उसे दे रखा है। महालह और दामाद दोनोंकी प्राणरक्षा एक तरह करना पड़ता है। सुतरां इस समय ऐसे महालह को और कष्ट देना उचित नहीं है। आप प्रमाण पाते हैं,—महालहको मोहर सहित गिरफ्तार करके ले जाइये,—अदालतमें हाजिर कर दीजिये।

दारोगा। अच्छा, वही सही। अरे! हथकड़ी और बेड़ी ले तो आ। बड़ा ही कठिन महालह है। अच्छी तरह हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेड़ी पहनाकर दो आदमी दोनो हाथ पकड़कर ले चलो। आगे पीछे आठ आठ सिपाही रहेंगे।

वीरभद्र। न, न, न,—ऐसा मत कीजिये। इसे पैदल मत ले जाइये। ठोकर लगने हीसे मर जायगा। सब तरहसे महालहकी प्राणरक्षा करना उचित है। बहुत तकलीफ

उठानेपर इसको देखनेमें तकलीफ आई है। अतएव इसे पालकी-पर ले जाइये और आगे पीछे पहरा रखिये।

दारोगा। हम कुछ नहीं समझते,—आपका यह कैसा मुहालह है?

बीरभद्र। हम भी अभी अच्छी तरह नहीं समझते यह कैसा मुहालह है। मुहालहको प्रायश्चा तो चाहिये, इसीसे पालकीका बन्दोबस्त करते हैं। पैरमें बेड़ी डालनेकी जरूरत नहीं है,—हथकड़ी ही काफी है।

दारोगा। अच्छा, यही सही।

नीलकोठीवाले पालकीके कहार आये।

हाथमें हथकड़ी पहन, बीरभद्रका लाल धुशाला ओढ़कर, आगे पीछे सिपाहियोंसे सुरक्षित हो, पालकीपर सवार होकर मुहालह चला। हाथमें कङ्गन बांधकर मानो वर विवाह करने जाता है। मशालोंकी रोशनीसे चारो तरफ उजेला हो गया दारोगाजी मोहर ले और घोड़ेपर चढ़कर आगे आगे चले। चलनेके वक्त बीरभद्रने "जय महल, इसीस कीजिये," कहकर दारोगा साहबके पाकटमें एक कागज डाल दिया। स्वल्पदर्शी दारोगाने अनुभवसे समझा,—यह नोट है। पाकटमें हाथ डोलकर नोटको दाब करके देखा,—नोटपर हाथ फेरा। नोट पचास रुपयेका है, कि सौ रुपयेका,—यही विचारते विचारते दारोगाजी चले। सबके सामने महल इसीसको खोलकर देखनेका साहस उन्हें न पड़ा। केवल यही चिन्ता लगी रही,—नोट पचास रुपयेका है, कि सौ रुपयेका?

वीरभद्र। आपके एक थप्पड़ लगानेसे वह बोलता या न बोलता, पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ता, यह निश्चय था। पहले एकबार इसकी मूर्च्छा तोड़नेमें हम बहुत कष्ट उठा चुके हैं। अन्तमें खिला पिलाकर इसे बलवान बनाया है। अगर हम इसकी इतनी सेवा शुश्रूषा न करते, तो आप सुहालहको देख भी न सकते। अबतक तो यह मर गया होता। जब सुहालहके मरनेके लक्षण न देख पड़ें, तो ऐसा करके उसे जिला रखना ही उचित है। जीवित न रहेगा, तो दण्ड किसे दिया जायगा? दण्ड होने हीसे तो फल लाभ होगा। इस कठिन जाड़ेमें सुहालहको कहीं कष्ट न हो और वह बीमार न हो जाय, इसलिये हमने अपना कपड़ा उ दे रखा है। सुहालह और दामाद दोनोंकी प्राणरक्षा ए तरह करना पड़ता है। सुतरां इस समय ऐसे सुहाल को और कष्ट देना उचित नहीं है। आप प्रमाण पाते हैं,— सुहालहको मोहर सहित गिरफ्तार करके ले जाइये,—अदा लतमें हाजिर कर दीजिये।

दारोगा। अच्छा, यही सही। अरे! हथकड़ी औ बेड़ी ले तो आ। बड़ा ही कठिन सुहालह है। अच्छे तरह हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेड़ी पहनाकर दो आदमी दोनों हाथ पकड़कर ले चलो। आगे पीछे आठ आठ सिपाही रहेंगे।

वीरभद्र। न, न, न,—ऐसा मत कीजिये। इसे पैदल मत ले जाइये। ठोकर लगते हीसे मर जायगा। सब तरहसे सुहालहकी प्राणरक्षा करना उचित है। बहुत तकलीफ

'अरे बाप!'

मरते काम उमी ओर लगे। चार मिनटतक किसीने शब्द भी नहीं सुना। फिर दारोगाके मनको उद्वेजित करके, सिपाही और कहारोंके मनको आतङ्कित करके—यह सुनो, यह सुनो,—भीषणसे भीषणतर शब्द,—यह सुनो, कहांसे तो आ रहा है,—

'अरे बाप!'

वह विकट 'अरे बाप!' 'अरे बाप!' की आवाज प्राण-पणसे छूरीकी भांति सबके अन्तस्थलको बिद्ध करने लगी।

कहारोंने पैर अब आगे नहीं बढ़ाये,—वे लोग चौंककर खड़े हो गये। दारोगाने पूछा,—"तुमलोग रुक क्यों गये? यहां घोर जङ्गल है,—बाघ सिंह चोर डकैतका डर है,—इतनी खड़े क्यों हुए?"

यह बात कहते कहते फिर वही भैरवरव सबके कानोंमें पड़ा,—

'अरे बाप!'

प्रधान सिपाहीने हाथ जोड़कर धीरे धीरे कहा,—"हुजूर! सुनिये,—हम लोग क्या करें? पास ही श्मशान है,—हम श्मशानसे हम लोग न जा सकेंगे।"

फिर मेघगर्जनकी भांति शब्द हुआ,—

'अरे बाप!'

प्रधान सिपाहीने कहा,—"सुनिये,—श्मशानकी तरफसे यह आवाज आती है।"

इकतीसवां परिच्छेद ।



नीलकोठीसे थाना प्रायः दो कोस होगा। अमावस्याकी रात घोर अन्धकारमयी है। आकाशपट घोर मेघमालासे सुसज्जित है। टप् टप जल बरस रहा है। पथ पिच्छलतर हो गया है। चोरबर पालकीपर चले जाते हैं। आनन्दसे, कि निरानन्दसे, को कैसे कहे ?

एक कोस राह कट गई। रात भयङ्कर है। घनघोर घटामय अलक्ष्य अन्धकारमें सब कोई सो रहे हैं। वृक्षगण भी मानो शिर झुकाकर सो रहे हैं। माताकी गोदमें बच्चेकी तरह पक्षीगण तिमिर रूपकी गोदमें सुखसे गाढ़ी नींद ले रहे हैं। झिल्लियोंने भी मौन धारण कर लिया है। क्या वह सब भी थककर सो गई हैं? इतने जाड़ेमें सियार भी तो नहीं बोलते? उल्लूकी बोली क्यों नहीं सुन पड़ती? नहीं, नहीं, सुनो, दूर—बहुत ही दूरपर घुग्घू विकटध्वनि कर रहा है। उस विकट विभीषण रवका कुछ भी ख्याल न करके चोरबरको लिये दारोगा बाबू जा रहे हैं।

घना अन्धकार और भी घना हो गया। ओह! यह क्या सुन पड़ता है,—भीषण निनाद! पृथ्वीका सर्वदिक् भेद करके, घोर अन्धकारराशिको कम्पा करके, न जाने, कहांसे एक शब्द आ रहा है,—

इकतीसवां परिच्छेद ।



नीलकोठीसे थाना प्रायः दो कोस होगा। अमावस्याकी रात घोर अन्धकारमयी है। आकाशपट घोर मेघमालासे सुसज्जित है। टप् टप जल बरस रहा है। पथ पिच्छलतर हो गया है। घोरवर पालकीपर चले जाते हैं। आनन्दसे, कि निरानन्दसे, सो कैसे कहें?

एक कोस राह कट गई। रात भयङ्कर है। घनघोर घटामय अत्यन्त अन्धकारमें सब कोई सो रहे हैं। वृक्षगण भी मानो सिर झुकाकर सो रहे हैं। माताकी गोदमें बच्चेकी तरह पक्षीगण निविड़ वृक्षकी गोदमें सुखसे गाढ़ी नींद ले रहे हैं। झिल्लियोंने भी मौन धारण कर लिया है। वन-पशु अब भी थककर सो गई हैं? इतनी जाड़ेमें सियार भी तो नहीं बोलते? घुगघूकी बोली क्यों नहीं सुन पड़ती? नहीं, नहीं, सुनो, दूर—बहुत ही दूरपर घुगघू विकटध्वनि कर रहा है। उस विकट विभीषण रवका कुछ भी ख्याल न करके घोरवरको लिये दारोगा बाबू जा रहे हैं।

घना अन्धकार और भी घना हो गया। ओह! यह क्या सुन पड़ता है,—भीषण निनाद! पृथ्वीका सर्वदिक् भेद करके, घोर अन्धकारतरङ्गको क्षुब्ध करके, न जानें, कहांसे यह शब्द आ रहा है,—

'अरे बाप !'

सबके कान उसी ओर लगे। चार मिनटतक किसीने शब्द भी नहीं सुना। फिर दारोगाके मनको उत्तेजित करके, सिपाही और कहारोंके मनको आतङ्कित करके—वह सुनो, वह सुनो,—भीषणसे भीषणतर शब्द,—वह सुनो, कहाँसे हो आ रहा है,—

'अरे बाप !'

वह विकट 'अरे बाप !' 'अरे बाप !' की भयानक ध्वनि छुरीकी भाँति सबके अन्तस्थलको विद्ध करने लगी।

कहारोंके पैर अब आगे नहीं बढ़े,—वे लोग चौंककर खड़े हो गये। दारोगाने पूछा,—"तुमलोग खड़े क्यों हो गये? चारों ओर जङ्गल है,—बाघ सिंह और डकैतोंका डर है,—हठात् खड़े क्यों हुए?"

यह बात बाहरी बाहर। फिर वही भैरवरव सबके कानोंमें पड़ा,—

'अरे बाप !'

प्रधान सिपाहीने हाथ जोड़कर धीरे धीरे कहा,—"हुजूर! सुनिये—हम लोग क्या करें? पास ही श्मशान है,—इस श्मशानमें हम लोग न जा सकेंगे।"

फिर मेघगर्जनकी भाँति शब्द हुआ,—

'अरे बाप !'

प्रधान सिपाहीने कहा,—"सुनिये,—श्मशानकी तरफसे यह आवाज आती है।"

हारेगा। श्मशान पूर्वकी तरफ है। हमें मालूम होता है, कि आवाज पश्चिमसे आती है।

दूसरा सिपाही। नहीं, आवाज उत्तरसे आती है।

पहला कहार। नहीं, आवाज दक्षिणसे आती है।

सबोंने स्थिर करके एकवाक्यसे कहा,—"आवाज चाहे जिधरसे आती हो, आज श्मशान होकर किसी तरह नहीं जायंगे।"

इसबार थोड़ा शब्द सुन पड़ा,—

"अरे बापरे बाप।"

पहला सिपाही। हुजूर! कुछ भी समझ नहीं पड़ता। इसबार ऐसा मालूम होता है, मानो शब्द दक्षिणसे आता है।

उस समय सबको ऐसा मालूम होने लगा, मानो चारों ओर "बापरे बाप"की आवाज सुन पड़ रही है। "बापरे बाप", की आवाज मानो आकाशसे नीचे उतरती आती है।

सबको उत्साह देनेके लिये दारोगाने कहा,—डर क्या है? यहांसे थाना पौन कोससे ज्यादे नहीं है। शायद वहां कोई आदमी शूलयन्त्रणासे छटपटाता हुआ 'बापरे बाप!' चिल्लाता हो, फिर चिन्ता क्यों? फिर हम लोग इतने बलवान आदमी अस्त्र शस्त्र और मशाल लिये चले जा रहे हैं। अगर डाकूदल सतिया भी आवे, तो कुछ डर नहीं है।

पहला सिपाही। नहीं हुजूर। यह शब्द आदमीका नहीं है,—आप अच्छी तरह सुनकर देखिये न? कोई आदमी मरनेपर भूत हुआ है। वही पेड़पर बैठकर ऐसा भयानक शब्द करता है। यह सुनिये, सुनिये,—

'अरे बाप!'

शब्द मानो आकाशसे आ रहा है।

दारोगा। डरो मत, डरो मत।—इतनी रातमें इस वनमें बैठ रहनेसे तो नहीं चलेगा,—चलो।

सिपाही। नहीं हुजूर! श्मशान होकर हमलोग न जा सकेंगे।

दारोगा। यदि श्मशान होकर न जा सकोगे, तो उस टेढ़े रास्तेसे चलो। बेफायदा मील भरका फेर पड़ेगा, तुम्हें ही कष्ट होगा।

सिपाही। हमलोगोंको चाहे तकलीफ हो,—आध कोसकी जगह चाहे एक कोसका फेर पड़े, पर श्मशान होकर तो हमलोग न जायगे।

दारोगा। अच्छा, तब टेढ़े रास्ते होसे चलो—कुछ डर नहीं है, चलो।

आखीर सबकोई आध कोससे भी अधिक फेर खाकर कटीली राहसे हो जाने लगे। डरसे हो अथवा कटीली राहके कारण ही हो, शाहकाजा जलद न जा सके।

बीच बीचमें एकाएक आवाज आती है,—"

"अरे बाप।"

आवाज सुनतेही सब आदमी चौंक उठते हैं। जितना वेलोग अग्रसर होने लगे, उतनाही निकट वह "अरे बाप।" की आवाज साथ साथ जाने लगी;—उतनाही सबको अन्तरात्मा सूखने लगी।

प्रायः ढाई पहर रात बीत गई। दारोगा दलबल सहित बहुत कष्टसे जङ्गलकी राह खतमकर पक्की सड़कसे जाने लगे।

उन्होंने कहा,—"क्या अब भी डर है?" इस सडकसे आध कोस या ढाई पाव और आगे होसे थाना मिलेगा।

इसी समय एक निरालम्ब मर्म्मस्पर्शभेदी शब्द आया,—

"बापरे बाप।"

प्रधान सिपाही। देखिये हुजूर!—सुनिये। शब्द मानो धीरे धीरे नजदीक चला आता है। मालूम होता है, कि यह शब्द पचीस हाथकी दूरीपर हो रहा है। और हमलोग चल नहीं सकते। हमलोगोंकी देह अवश हो गई है।

दारोगा। डर क्या है, चलो!—और थोडी दूर जानेसे थानेके फाटकपरकी रोशनी देख पडेगी।

दारोगाके कहनेसे यहलोग फिर चलने लगे।

कुछ दूरपर एक अशोक वृक्षके पासही ताडका एक पेड था। प्रधान सिपाहीने उंगली दिखाकर दारोगासे कहा,—"हुजुर! यह देखिये,—कौन तो खडा है! ऐसा मालूम होता है, कि उसका सिर आसमानमें जा लगा है और हाथ हम लोगोंकी ओर आ रहा है।"

सबकोई उसी तरफ देखने लगे। कहार डरसे घबराकर "अरे बाप रे, अरे बाप रे!" कहते हुए पालकीके साथ गिर पडे। उसी समय फिर शब्द हुआ,—

"अरे बापरे बाप!"

उनलोगोंको यह मालूम होने लगा, कि इसी ताडवृक्षरूपी भूतसे यह शब्द आ रहा है। दारोगा साहब समझ गये, यह ताडका पेड है, भूत नहीं है, उन्होंने कहारोंको धमकाया, चाबुक मारनेपर भी उद्यत हुए और कहा,—"देख

यह ताड़का पेड़ है। और कुछ नहीं है। अगर फिर ऐसी बम्माशी करेगा, तो इसको तोड़कर चूर चूर कर देंगे।"

मूसके डरसे मारका डर प्राय अधिक होता है। कहार लोग पालकी उठाकर फिर चलने लगे। वह "बापरे बाप," का शब्द धीरे धीरे निकटवर्ती होने लगा। ऐसा जान पड़ने लगा, कि थोड़ी दूर कदम बढ़तेही यह "बापरे बाप!" का शब्द राक्षसकी तरह उन लोगोंको निगल जायगा।

धीरे धीरे पुलिसके फाटकपरकी रोशनी देख पड़ने लगी पर "बाप रे बाप!" की आवाज और भी बढ़ने लगी। सबमें विषाद छा गया।

दारोगा बाबू सोचने लगे,—"यह क्या! क्या यह "बापरे बाप!" की आवाज थानेके अन्दरसे नहीं आती? ओह! ऐसा विकट शब्द तो हमने कभी सुना नहीं!"

दारोगाने घोड़ेको तेज चलाया। कहार भी तेजीसे चलने लगे। सिपाही लोग भी दौड़ने लगे। ज्यादा पहुंचे सिपाहियोंकी भाई थाने शब्द आने लगा,—

"अरे बाप रे बाप!"

थानेमें पहुंचकर जो कुछ देखा, उससे सबको आश्चर्य हुआ। देखा, एक दोषाकार छायारूप, भीसकी भांति पड़दाल पुरुषको कठिन रस्सीमें खूब मजबूतीसे बांधे मायकार उसे लटका रखा है। वह वीरपुरुष केवल छोटी उंगलीपर खड़ा रहा है। पैर घोड़ेकी नावपरसे बंधे हैं। आधा हाथ पीछे-गांठ कमरमें बांध दिया गया है। एक आदमी टूलपर चढ़कर बीच बीचमें उसकी पीठपर बेंत मारता है। वह भीमपुरुष

मन्धारसे लोग यसे रानतक इसी तरह भूल रहा है। उसकी दोनों लाल लाल आँखें मानो आप ही आप निकली आती हैं। दीर्घ निश्वास जोरसे चल रहा है। वक्ष स्फीत हो रहा है। और बीच बीचमें वह बोलता है,—

"अरे बापरे बाप।"

सब कोई निमेषशून्य लोचनसे उस आदमीको देखने लगे। रमाप्रसाद भी पालकीसे उतरकर उसे देखने लगा। दारोगाजी मानो मन्त्रमुग्ध होकर खडे हुए। उस समय वह भीम पुरुष मधुर तथा उच्चस्वरसे बोल उठा,—

भाई! एक एक बार काली काली कहो। भाई!- एक एक बार प्रहरी बोलो। भाई! और कुछ मत कहो,—मन ही मन काली काली कहो।"

दारोगाजीने हुकम दिया, कि रस्सी काटकर इसे नीचे उतारो। उन्होंने यह भी कहा,—"आज रात ज्यादा बीत गई है। हम बहुत थक गये हैं—दोनों असामियोंको यथा स्थानमें यत्नपूर्व्वक रक्षा करो। अभी हम अपने कमरेमें जाकर सोवेंगे।"

बत्तीसवा परिच्छेद।

कात्यायनीको सबने छोड दिया था, छोडा था नहीं केवल रघुदयालने। पालो कुई मैना भी उड गई, पर रघुदयाल नहीं भागा। भागना तो दूर रहे, कात्यायनीका दुःख जितना बढ़ने

लगा, अन्नकष्ट जितना अधिक होने लगा, कात्यायनीकी सन्तानोंपर रघुदयालका उतना ही अनुराग एवं आकर्षण बढ़ने लगा रघुदयाल आधापेट खाकर ही रहता, पर रमाप्रसाद, वधु एवं माता कात्यायनीको पेटभर खानेके लिये अनुरोध करता। लच्छी तो उसका प्राण ही थी। लच्छी कभी रघुदयालके कन्धेपर कभी गोदमें और कभी शिरपर सुशोभित होती है। रघुदयाल कभी ऐरावत बनता है, लच्छी उसपर सवार होकर आंगनभरमें घूमती है। आज रघुदयालको सबेरे ही कुछ काम आपड़ा,—लच्छीके लिये दूध खोजना,—चाहे जिस उपायसे हो, रघुदयाल सबेरे कात्यायनीके हाथमें आधसेर दूध रखकर, फिर मकानसे निकलता। इसबार वह चावल, दाल, नमक और तेलकी फिकरमें जाता है।

रघुदयालकी तेज चलनेकी शक्ति अपूर्व थी। बहुत शिक्षा, बहुत अभ्यास और बहुत यत्नसे यह शक्ति सञ्चित हुई थी। वह बिना कष्ट ही आसानीसे दश बारह मिनटमें एक कोस राह चल सकता था। अगर हाथमें लम्बी लाठी रहती, तो आठ ही मिनटमें वह एक कोस चला जाता था। इस तरह एक दममें सोलह कोस राह चलनेपर भी रघुदयालको विशेष कष्ट न होता था,—हांफतातक न था। इस समयके अधिकांश आदमी,—वकील, मदरसावाला, डिपटी, किरानी, सम्पादक,—इस बातका अविश्वास कर सकते हैं किन्तु सचमुच ही उस समयके कोई कोई आदमी इतना तेज चल सकते थे। उस समय शिक्षा थी, देहमें ताकत थी, उपयुक्त आहार था, फुर्ती थी, उत्साह था, व्यायामशक्ता था,—इसीसे लोग चल भी सकते थे। किन्तु

इस समय एक तरह लोगोंकी चलनेकी शक्ति जाती रही। रेलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, ट्रामगाड़ी, बैलगाड़ी पैरगाड़ी, मोटर गाड़ी, पालकी, डोली,—जिधर चाहे फैरिये, उधर ही यह सब सवारियाँ सजी तय्यार रहती और मानो मुसाफिरोंसे कहती हैं,—"आओ, आओ, हमारे पास आओ, हमारे कन्धेपर सवार होओ—हम तुम्हें आराममें ले जायगी।" जो दस रुपया कमाते हैं, वह भी पाच पैसा देकर ट्रामपर सवार होते हैं बिल सरकार तकादा करने जाता है, प्रायः ट्रामपर चढ़कर। मछलीवाली सियालदहसे तुलाबाजार जाती है,—घोड़ागाड़ी पर चढ़कर। डलघर मोदी,—दर्मेतल्लेको चार पैसेवाली गाड़ीपर चढ़कर अलीपुर जाता है। रामलखन मिश्रने एक दिन कोलूटोलेसे बागबाजार जानेके लिये पाच पैसा ट्राम भाड़ा मांगा था। निम्नश्रेणीके लोगोंकी तो दशा ऐसी है। उच्च श्रेणीके लोगोंकी अवस्था कितनी शोचनीय हो गई है, सो बुद्धिमान लोग विचार कर देख लें। कड़ी धूप पड़नेपर इस समय घोड़ागाड़ीकी छतपर खसका परदा डाला जाता है। ऐसी दशामें पैरमें दर्द क्यों न होगा? चलनेकी शक्ति जाती क्यों न रहेगी? गाठोंको वातरोग क्यों न पकड़ लेगा? मन्दाग्नि, अजीर्ण, अम्लरोग क्यों न पैदा होंगे? डाइबिटीज ही क्यों न होगा? और अकालमृत्यु ही क्यों न आवेगी?

पचास वर्ष पहले लोग ऐसे पङ्गु न हुए थे। उस समय यदि किसीको कहीं जाना पड़ता था, तो वह पैदल ही जाता था। दसबारह भले आदमी—एक साथ मिलकर, माथेमें घर चाकर एक मोटिया और बंहगीवालेको लेकर किसी

उत्सव या पर्व्वके उपलक्षमें घर जाते थे,—नित्य सात आठ कोस राह चलते थे, पर चलनेकी तकलीफ एकदम कुछ भी मालूम नहीं होती थी। राहमें आपसमें बातचीत, हंसी दिल्लगी करते और सरस सङ्गीत अलापते, नाना नगर ग्राम देखते, नद नदी तथा सरोवरकी शोभा निरखते, अनेक अपरिचित आदमियोंसे बातचीत करते, शस्यशालिनी वसुन्धराका सौन्दर्य अनुभव करते करते चले जाते थे। कहीं पहाड़, कहीं झरना, कहीं बड़े बड़े वृक्ष, कहीं मृगोंका उछलना कूदना, कहीं मोरका नाच,—सभी पथिकोंकी दृष्टि तले पड़ते थे और क्षुधा कैसी अच्छी लगती थी। और ऐसे स्वच्छ सुरुचिके समयमें, इस यदि वीभत्स न हो, तो कहते हैं,—कोष्ठ साफ और मन प्राय सन्तुष्ट रहते हैं। उस समय चीजें सस्ती मिलती थीं। दश बजे चट्टीपर पहुंचकर यही भावमें होता, कि क्या खाय। दूध, दही, घी वगैरह सभी मिलते थे। तभी पैसेका सेरभर दूध मिलता था। अच्छा घी रुपयेका पाव सेरसे कम न आता था। दही दूध और घीके साथ शकेतक खिचड़ी खा लेनेपर भी कुछ कष्ट न होता था। सांझको वक्त खट्टी डकार भी न आती थी। पेटमें खोंचा भी न मारता था। आदमी पीछे, दो तीन पैसा खर्च करने हीसे ऐसा अच्छा भोजन मिलता था। पैदल चलना, निर्म्मल वायुसेवन, निर्म्मल सरोवर या नदीका जल पीना,—यही क्षुधाके कारण,—निरोगताका हेतु है। टमाटम भरपेट खाकर एक कोस राह चलनेपर सब भस्म हो जाता था,—यार भूख क्योंकी त्योंही बनी रहती थी।

पर अब वह समय—वह दिन नहीं है। इस समय

पैदल चलना अपमानसूचक है। अपमान दूर जाय,—इस समय पथ चलनेका अवसर नहीं है। पहले तो चलनेकी शक्ति नहीं,—थोड़ा चलने हीसे हांफना पड़ता है,—पैर दर्द करने लगते हैं,—घुटनेमें पीड़ा होने लगती है। दूसरे मकड़ेके जाल जैसा रेलपथ चारो ओर फैला हुआ है, पैदल चला जाय, तो कहां? फिर रेलगाड़ीसे उतरते ही देखिये, तो घोड़गाड़ी, बैलगाड़ी, इक्का, पालकी आदि मौजूद हैं। यदि नदीके किनारे रेलष्टेशन हुआ, तो नभोमण्डलके तारोंकी भांति नदीपर नावोंको सुशोभित पाइयेगा। माझी लोग मुसाफिरोंको पुकारते हैं,—"हमारी नावपर आइये," "हमारी नावपर आइये", कोई माझी यात्रीको गोदमें उठाकर नावपर लिये जाता है, कोई माझी मुसाफिरकी गठरी शिरपर रखकर दौड़ा जाता है और मुसाफिर गठरी खो जानेके डरसे उसके पीछे हांफता हांफता दौड़ा जा रहा है, किसी नावका माझी यात्रीका दाहिना हाथ पकड़े है और एक दूसरी नावका माझी उसका बायां हाथ धरे है, दोनो अपनी अपनी ओर खींचते हैं। यात्री "छोड़ दे, छोड़ दे," कहकर चिल्ला रहा है। इतनेमें तीसरा माझी आया और यात्रीकी कमर पकड़कर खींचा और कहने लगा,—"हमारी नाव सबसे अच्छी है। हमारी नावपर यह कड़ार जा चुके हैं। बाबू हम आपको पहुंचाते हैं।" यात्री तीन तरफसे खींचे जानेपर घबरा उठा और त्राहि मधुसूदन!" कहने लगा। फलतः मनुष्यको कोई पैदल चलने नहीं देगा, मानो चलना निषिद्ध है। अथवा चलनेसे मानो

छ मासकी जेल होगी,—इस तरहकी कोई राजाज्ञा प्रचारित हुई है।

किन्तु रथ्यायानके समय चलनेके सिवाय और कोई उपाय न था। बड़े आदमी पालकीपर आते जाते थे, बाकी आदम पैदल ही चलते थे।

नौकाकी सवारी बड़े सुखकी सवारी है। विशेष करके धनीलोग सपरिवार नौकापर चढ़कर ही काशीजी जाते थे। नावपर चढ़कर भ्रमण करनेसे स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहता है। भूख भी खूब लगती है। घोड़ेकी सवारी भी उस समय थी। लोग रात सवारी भी करते थे। घोड़ेकी सवारीमें जैसा आनन्द है वैसा ही उपकार भी है।

चाहे जिस तरफसे देखिये, उस समय विलासिताके उस करणके अभावसे लोगोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता था, बलवीर्य भी खूब था, कष्टसहिष्णुता अधिक थी, साथही साथ मनकी स्फुर्ती भी समधिक थी।

इस समय अङ्गरेजी राजत्वका मध्यान्ह,—पूर्ण सभ्यताका समय है!—चारो ओर जयघण्टा घहरा रहा है—इस समय रेलगाड़ी, घोड़ागाड़ी वगैरहके बिना किसी तरह चल नहीं सकता। हम लोग एक तरह मानो कलके आदमी ही रहे हैं। कलमें रहते हैं, कलसे उठते और कलहीसे बैठते हैं,—मानो अपना अस्तित्व है ही नहीं। जल कलका, रोशनी कलकी, पाखाना—कलका, पायखाना—कलका;—कलकत्ता का प्रत्येक घर मानो कलका ही बना हुआ है और कलहीसे चालित होता है। सवेरे चारपाईसे उठतेही दरिद्रेशाक्ति

थे। जो कुछ पुरस्कार पाते, उससे कात्यायनीके परिवारका भरण पोषण करते थे। गांवके बीस लठ्याल रघुदयालको गुरुकी भांति पूजते और उनका पदरज लेते थे। रघुदयालका आकार प्रकार, युद्ध कौशल और विक्रम देखकर यदि कोई बड़े आदमी कहते,—"रघु! तुम हमारे यहां रहो, खाना पीना कपड़ा और पन्द्रह रुपया महीना देंगे।" रघु कहते,—"हुजूर! माफ कीजिये! हमारे एक बूढ़ी मा है। उसे अकेले छोड़कर हम कहीं रह नहीं सकते!"

लच्छो रङ्गीन कपड़ा बहुत पसन्द करती थी। रघुदयाल यदि कहीं लाल कपड़ा पुरस्कारमें पाजाते, तो लाकर लच्छोको पहनाते पहनाते कहते,—"अच्छा, बताओ तो यह कैसा कपड़ा है?"

लच्छो। अच्छा है,—रंगा हुआ है,—बहुत अच्छा कपड़ा है। तुमने कहा पाया?

रघु। हम तुम्हारे वास्ते खरीद लाये हैं।

लच्छो। नहीं,—तुम मांग लाये हो। तुम्हारे पास पैसा कहां है? मा कहती है, कि रघुदयाल पैसा कहा पावेगा? मांगा हुआ कपड़ा मैं न पहनूंगी,—माने मनाकर दिया है।

रघुदयाल चुप रहता, कुछ उत्तर न देता था।

उस समय डकैतोंका प्रादुर्भाव था। पर रघुदयालके डरके मारे उस प्रदेशमें डकैती न होती थी। युवावस्थामें रघुदयालने डकैतोंके प्राय पचास दलोंको डकैती करते पकड़ा था। कहीं डकैती होती, तो रघुदयाल कूदते फांदते वहां जा पहुंचते और डकैतोंसे गर्ज कर कहते,—"फेंको लाठी तलवार।" अगर

ते न सुनते, तो रघुदयाल उन्हींकी लाठीसे उनके पैर तोड़ देते थे। रघुदयालके हुङ्कारसे कितने ही डकैतोंकी लाठियां आपहो आप हाथसे छूट पडती थीं।

इस तरह रघुदयालका नाम फैल गया। डकैत लोग उसकी शरणमें आ गिरे। बन्दोबस्त यह हुआ कि उसके गांवसे बारह कोसके अन्दर कोई डकैती न करे।

पन्दरह वर्षतक खाना पीना कपडा और दस रुपया महीना लेकर रघुदयालने शङ्करीप्रसादके यहां ऐसे सिंह विक्रमसे कालातिपात किया। शङ्करीप्रसादकी मृत्यु होनेपर सुख सूर्य अस्त हुए, विषय वैभव विनष्ट हुआ —कात्यायनीका सब कुछ स्वाहा होगया पर रघुदयाल उसी तरह नौकर रहे,— बिना वेतन, बिना भोजनाच्छादन उसी तरह नौकर रहे, सिर्फ यही नहीं,खुद जो कुछ कमाते उसे कात्यायनीको देकर उसी तरह नौकर रहे।

चौतीसवां परिच्छेद।

पाठकको याद होगा, कि इसके पहले कात्यायनीके घरमें डाका पड़ा था। डकैत लोग सब कुछ लूट ले गये थे, कुछ भी न छोड़ा था।

डकैतोंने कात्यायनी वगैरह किसीको कष्ट न दिया था, न मारा पीटा था और न वा शङ्करीके गृहमें ही प्रवेश किया था। अगर प्रवेश करते, तो लक्ष्मीपूजाकी सामग्री, धान और

मोहर भी न बचती। मालूम होता है, कि डकैत कुछ भद्र और सभ्य थे।

महावीर, महापराक्रमशाली रघुदयालके रहते कात्यायनीके घरमें डाका कैसे पड़ा? रघुदयाल उस दिन घरपर न थे,—धन कमानेके लिये एक ग्यारह कोस दूर निकल गये थे। यथानियम तीसरे पहर वह घर लौटनेके लिये उद्यत हुए। उस गांवके जमीन्दारके एक ही लड़का है। उसे सांपने काट लिया है। चारो ओर हाहाकार मच गया है। अनेक ओझा गुणी आये हैं, पर किसीका किया कुछ भी नहीं होता। लड़केके प्राण निकला चाहते हैं,मुंहसे फेना निकल रहा है।

रघुदयालने सुना, कि जमीन्दारके लड़केको सांपने डस लिया है। अब रघुदयाल मकान न जा सके। वह लौटे और जमीन्दारके मकानपर गये। देखा, कि सदर घरमें कोई नहीं है,—केवल एक आदमी बैठा है। पर अन्दरमहलमें लोगोंकी अपार भीड़ लगी है और कोलाहल तथा रोनेके शब्दसे गृह परिपूर्ण है। रघुदयालने हाथ जोड़कर कहा,—"महाशय! आपसे एक बात कहना है।"

जो आदमी बैठा है, वह जमीन्दारी सरिश्तेका खजाञ्ची और एक प्रधान कर्मचारी है, वह जमीन्दारका निकट सम्बन्धी भी है। रघुदयालकी बात सुनकर उसने विरक्त हो कर कहा,—"भाई आज बड़ी भारी विपद आ पड़ी है। तुम चले जाओ, क्या यह बात सुननेका समय है?"

रघुदयाल। विपदकी बात हम जानते हैं। जिस लड़केको सांपने काट खाया है, उसे एकबार हम देखना चाहते हैं।

खजाञ्ची पहलेसे ही क्रुद्ध बैठे थे,—उन्होंने कहा,—"तुम्हारी बुद्धि कैसी है। मालिक, मालकिन और अन्यान्य स्त्रियां रो पीट रही हैं,—रोगीका मृत्यु समय आ पहुंचा है। तुम लोग क्या देखने जाओगे? चले जाओ यहांसे,—बदमाश!"

रघुदयाल। (हाथ जोड़कर) हुजूर! क्रोध मत कीजिये। हम बुरी नियतसे नहीं आये,—हम सांपके विष उतारनेकी दो एक औषधि जानते हैं।

खजाञ्ची। यह कैसा पागल है! इस देशके जितने प्रधान प्रधान गुणी और सांपका मन्त्र जाननेवाले हैं, सभी आये, पर किसीका किया कुछ भी नहीं हुआ,—और तुम कहते हो, दो एक औषधि जानते हैं। यह दो एक औषधिका काम नहीं है। मुझे दिक मत करो,—अपने घर जाओ। भीतर जाकर और गोलमाल बढ़ानेकी जरूरत नहीं है।

रघुदयाल। हुजूर! माफ कीजिये,—क्रोध मत कीजिये,—हमे अन्दर मत जाने दीजिये,—जरा आप यह बता सकते हैं, सांप कहां है? आनेके वक्त राहमें सुना है, कि सांप पकड़ कर रख लिया गया है। सांपको एकबार हम देखना चाहते हैं।

खजाञ्ची। तुमने तो नाकोदम कर डाला। जोंककी तरह चिपट गये। उस प्रकाण्ड गोहमा सांपको देखकर तुम क्या करोगे? उसके पास जाना ही कौन है?

रघुदयाल। सांपके पास जानेमें डर कुछ भी नहीं है।

खजाञ्ची। वह देखो,—दो खम्भोंके मध्यस्थलपर,—फूल

छप्परके नीचे एक बड़ा भारी घड़ा रखा हुआ है। उसीमें साप है। सांप जैसा लम्बा है वैसा ही मोटा भी है। मेरे हाथसे दो वाक्यों होगा। प्रधान झाड़नेवालेने एकबार घड़े परका पत्थर उठा लिया था। साप फनसे ढकनेको हटाकर दो हाथ ऊंचा उठ गया था। वह सांप नहीं, कालसांप है! सर्व्वनाश मत करो,—उसके पास मत जाओ।

रघुदयाल। हुजूर! कुछ भी डर नहीं है।—आप चुप चाप बैठे बैठे सिर्फ देखिये।

खगाधी। अरे बापरे! तुम घड़ेका ढकना खोलोगे क्या? ढकना मत खोलो! अगर साप किसी तरह घड़ेसे निकल जायगा, तो गांवके सब आदमियोंको डस लेगा।

रघुदयाल। महाशय! आप शोर मत कीजिये,—चुप-चाप बैठे बैठे देखिये, कि हम क्या करते हैं। कुछ डर नहीं है।

रघुदयाल धीरे धीरे घड़ेकी ओर जितना ही जाते थे, उतना ही सांपकी फुफकार सुनते थे। निकट पहुंच और गम्भीर गर्ज्जन सुनकर उन्होंने कहा,—"सांप, सांप, सांप! बेटा, बेटा! तुमने इतना क्रोध क्यों किया है? तुम्हें छोड़ देंगे। जिसे तुमने काट खाया है उसे बचाओ।"

रघुदयालने जमीनपरसे कुछ धूल उठा ली। दाहिने हाथमें धूल रही, बायें हाथसे पत्थर हटाकर ढकना खोला। सांपने धीरे धीरे सिर उठाया। सटप्य नेत्रसे मानो रघुदयालकी ओर देखता रहा। रघुदयालने कहा,—"क्यों बेटा? तुम्हें डर क्या है?" इतना कहकर उन्होंने हाथकी धूल जमीन

पर फेंक दी। केवल थोड़ीसी धूल फेंककर सांपके शिरपर डाल दी। फिर रघुदयालने कहा,—"बेटा। डर नहीं है। हम तुम्हें छोड़ देंगे। अब तुम हमारे साथ आओ और जिसे काट लिया है उसे अच्छा करो।"

अब रघुदयालने धीरे धीरे दाहिने हाथसे सांपका गला पकड़ लिया। सांप तेजहीन, निर्जीव हो गया,—आप ही आप धीरे धीरे उसका शिर लटक गया। रघुदयालने दाहिने हाथपर सांपको लेटा लिया। सांपकी पूंछ रघुदयालका गला लपेटकर पीठपर वेणीकी भांति लटकने लगी। सांप सो गया। रघुदयालने कहा,—"बेटा। सो जा।"

इसी अवस्थामें दाहिना हाथ पसारकर सांपको लिये आनन्दसे फूले जल्दी जल्दी खजाञ्चीके पास जाकर रघुदयाल कहने लगे,—"महाशय। कुछ डर नहीं है। रोगीको जायगा। सांप अच्छी जातिका है। रोगीको कुछ भी डर नहीं है। अनेक प्रकारके गोखमा होते हैं। अगर यह नाजमी होता, तो किसी तरह हमारी बात न मानता और रोगी भी अच्छा न होता।"

खजाञ्ची—"सर्वनाश हुआ सर्वनाश हुआ" कहकर भागनेका उपक्रम करने लगे। इसी वक्त बाबूके मकानसे एक दरबानने रोते रोते बाहर आकर कहा—"खजाञ्चीजी। छोटे बाबूका रङ्ग अच्छा नहीं दीखता—आप शीघ्र आइये,—मालिक बुला रहे हैं।

इतना कहनेके बाद दरबानकी नजर रघुदयालपर पड़ी। दरबानने उन्हें एकबार देखा, दोबार देखा,—तोभी उसे

प्रतीति न हुई,—तीन बार देखा। अन्तमें कहा,—"कौन? गुरुजी! हां गुरुजी ही तो हैं।"

दरवानने गुरुजीके चरणपर मस्तक रखकर पकड़ लिया और कहा,—"गुरुजी! रक्षा कीजिये—बड़ी विपद है।

गुरुजी! इतने दुबले क्यों हैं? हमतो पहचान ही न सके।"

रघुने आशीर्वाद देकर कहा,—"वीरू! चिरजीवी हो! हमें पहचान लिया तो?"

दरवानका नाम वीरबाहु है। वह जमीन्दारका शरीररक्षक है। वीरबाहुके शिक्षक रघुदयाल हैं। उसका नाम जैसे वीरबाहु है, दोनो बाहु भी वैसे ही आजानुलम्बित हैं। वह पहले डकैतोंके दलमें था। सरदार हो गया था। रघुदयालके उपदेशसे डकैती छोड़कर गृहस्थके यहका दरवान बन गया है। वीरूने रोते रोते रघुसे कहा, "जब आप आ गये हैं, तब कुछ चिन्ता नहीं है, छोटे बाबूकी जान बच जायगी। आप शीघ्र हमारे साथ आइये।"

खजाञ्ची यह माजरा देखकर शान्त हो गये। आगे आगे वीरबाहु बीचमें रघुदयाल और पीछे बीस हाथके अन्तरपर खजाञ्ची, इस तरह तीनो आदमी अन्दर चले।

पैंतीसवाँ परिच्छेद।



गोह्मन साँपके काटनेपर क्या आदमी बचता है? डाक्टर हेमन्तकुमार बी० ए० एम० बी० बोल उठे,—"नहीं,—बचता नहीं। साँप काटनेके बाद अगर खूनमें विष चला जाये, तो आदमी किसी तरह नहीं बच सकता। जगतमें ऐसी कोई भी शक्ति नहीं है, जिससे विषकी गति कुछ भी रुक सके।"

डाक्टर पुङ्गव भैरव बाबू एम० डी०ने इस बातका अनुमोदन करके कहा,—"ठीक है। इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी और अमेरिकाके बड़े बड़े शास्त्रधर्मविशिष्ट डाक्टरगण अबतक इस रोगकी औषधि नहीं निकाल सके हैं। हमने भी साँपके काटे हुए किसी आदमीको बचते नहीं देखा।"

बाबू विक्रमकेशरी—वैज्ञानिक महाशय बोले कहा,—"विज्ञानका वह असीम ज्ञान होनेपर भी, विज्ञानके बलसे एक लहमेंमें सौ योजन दूरका समाचार आ सकनेपर भी,—विज्ञान यहाँ पराजित है। विज्ञानका फन्दा लगाकर चन्द्रमाको पकड़ सकते हैं,—अधिक क्या,—विज्ञानबलसे सारी पृथ्वीको ध्वंस कर सकते हैं, पर विज्ञान शक्तिके विरुद्ध अज्ञान है।"

हलधर होमियोपाथने कहा,—सब बातें ठीक हैं। मैं काल रात्रि नहीं डरता, शीतलासे निडर रहता हूं, सिउमरिक पत्नियों भी मैं अभय दे देता हूं, पर जब सुना, कि साँपने काटा है, तब समझ जाता हूं, कि रोगी कभी बचेगा नहीं।"

स्वदेशहितैषी, सदता श्रीमान महेन्द्रनाथ भार्टिमाने कहा,—"यदि हम उस वक्त जीते रहते, अन्ततः हम यदि उस समय माताके गर्भसे बाहर निकलने पाते,—जिस समय डाक्टर फेरेरने इस भारतीय दीन प्रजा पुञ्जका रक्तरूप एक लाख रुपया गवरमेण्टसे लेकर सांपके विषकी चिकित्साकी वृथा परीक्षा आरम्भ की थी, तो हम उस वक्त ऐसे प्रबलवेगसे विराट मिछ्राल, विषम आन्दोलन मचा देते, दारुण देवदारु तुल्य दीर्घ दीर्घ इतने अधिक आवेदन करते, हिमालयके तुङ्ग शृङ्गपर खड़े होकर ऐसी अभ्रभेदी विकट वक्तृता झाड़ते, कि इस प्रबलप्रताप ब्रटिश सिंहको भयसे कांपते कांपते हमारी शरण लेना पड़ती।"

फलत, इस समय यही सुननेमें आता है, कि सभ्यसंसार और शिक्षित संसारमें सांपके विषकी औषधि नहीं है। सुतरां वकील, हाकिम, स्कूलमास्टर, स्टेशनमास्टर, पोष्टमास्टर तक कहते हैं, कि गोखुअन सांपके काटलेनेपर आदमी फिर नहीं बचता।

सभ्यसंसारमें, शिक्षित नगरोंमें चाहे सांपके विषकी औषधि न हो, पर असभ्य संसारमें, अशिक्षित गांवमें किसी किसी इतर व्यक्तिके पास सांपके विषकी ऐसी अच्छी अच्छी दवाइयां थीं। अब भी शायद कुछ कुछ है। सभ्यताकी इतनी तोव्र, विशेषत अग्निरश्मिमें भी शायद आज भी वे सब महौषधियां भस्मीभूत नहीं हुई।

रघुदयालके वक्तमें सभ्यता कुछ कम थी। इस दशिया ऐशर्य घरका ऐशासे तब कामने हाथ ही लगा था।

उस वक्त बहुत आदमी जंगलो काटनेका काम करते थे। सुतरां उस समय सभ्यता श्वेत पद्मकी कूड़ी भर देख पड़ी थी। उस समय रघुदयालके पास सांपके विषको दवा थी।

ग्रन्थकार भी कुछ असभ्य हैं। उन्होंने विश्वासघात आदमियोंमें नज़त सर्प चिकित्साकी बात कही है, विषधर सांपके काटेहुए आदमीको भला चङ्गा होकर अधार यात्रा निर्वाह करते देखा है।

हमारे देशमें, विशेष करके हुगली, वर्द्धमान, बाकुड़ा जिलोंमें पहले सांपका खेल होता था। अब भी कहीं कहीं होता है। पहले होता था बड़े समारोहसे और अनेक छोटे छोटे गांवोंमें, अब होता है चुपचाप एकान्तमें और बहुत कम गांवोंमें। सांपके खेलके देवता महादेव मनसा इत्यादि हैं। बहुत दूर दूरसे सांपका विष उतारनेवाले ओझा इकट्ठे होते थे। ये लोग अपने अपने साथ अनेक प्रकारके विषधर सांप लाते थे। बड़े बड़े धुरन्धर उस्ताद आते थे। असंख्य चेलोंकी गिनती कौन? शिवमन्दिरके सामने बांस या काठके ऊंचे ऊंचे मञ्च बनाते थे। ऐसे बहुतसे बड़े बड़े मञ्च बड़ा सुशोभित होते थे। सब मञ्च आपसमें मिले रहते थे, इच्छा होनेपर एक मञ्चसे दूसरेपर और दूसरेसे तीसरेपर जा सकते थे। उस्ताद लोग चेलोंके साथ सांपकी पिटारी लेकर मञ्चपर आते और सांपका विषम खेल आरम्भ करते थे।

उस वक्त उस्ताद लोग उन्मत्तप्राय रहते थे। पहले उस्तादोंमें वादानुवाद चला,—"हम साथ कोई नया और निराला सांप लाया हैं, कि नहीं?" यदि किसी उस्तादने कहा, कि

"हो आये हैं," तब उससे पूछा गया,—"इस सांपके विषकी औषधि भी आविष्कार कर सके हो, कि नहीं?" यदि उस्तादने कहा, कि "हां निकाला है," तो उसी समय चारों ओर जयध्वनि होने लगी। पहले वह सांप सबको दिखाया गया। अन्यान्य उस्तादोंने वादानुवाद आरम्भ किया,—सर्प नई जातिका है या पुरानी जातिका? जब वादानुवादमें यह ठीक हुआ, कि यह सांप नया है, तो उस उस्तादके आनन्दकी सीमा नहीं रहती।

पहले यह काम समाप्त हो जानेपर अन्य क्रमसे सांप दिखाये जाने लगे। किसी उस्तादने अपने चेलेका सर्वांग सांपसे भूषित किया,—सांपकी पगड़ी पहनाई,—कुण्डलाकार सिरपर लपेटकर फन बीचमें रखा। कोई सर्प गलेका हार बना, कोई वलय हुआ और कोई मेखलाकी भांति शोभित हुआ,—इसी तरह जिस उस्तादसे जितना हो सका, अपने चेलेको साध्यानुसार उतना सज दिया। दर्शकोंमें यदि किसीने कहा,—"यह सांप दुर्बल, निर्जीव है, इसके विषके दांत तोड़ दिये गये हैं। सांपोंको छः महीने या वर्षभरसे खानेको नहीं मिला है, इससे ये सब मुर्दा सरीखे हो रहे हैं, इसीसे उस्ताद लोग उन्हें जिस तरह चाहते हैं झुकाते हैं और अपनी इच्छानुसार उन्हें व्यवहार करते हैं। यह सुनकर उस्ताद कहते हैं,—"आपने क्या कहा? सांप तेजहीन और विषदन्तविहीन है? यह देखिये, परीक्षा लीजिये।"

उस दिन अपनी राक्षसी भाषामें कोई अमोघ मन्त्र पढ़ा। शिष्यके मस्तकपरका सांप क्रमशः स्फीत होने लगा। फन

और भी बढ़ा, आखें धक् धक् चलने लगीं। फिर एक मन्त्र पढ़कर उस्तादने सांपको देहपर हाथ फेरा,—सांप फों फों करके गर्जने लगा। तब उस्तादने कहा,—"महाशय सांप नीचे आता है, अपना विक्रम दिखावेगा, आप लोग सावधान हो जाइये।"

सांप फन फैलाकर गम्भीर गर्जन करता हुआ मसलकी नीचेकी ओर चला। लोग मारे डरके भागने लगे। यह देखकर उस्तादने कहा,—"भागिये मत, सांप किसीको काटेगा नहीं। बकरी मंगाइये,—देखियेगा, कि सांपके काटनेपर बकरी आधे दण्डमें मर जाती है, कि नहीं। तब समझियेगा, कि सांपके विषवाले दांत हैं, कि नहीं?"

बकरी आई, सांपने उसे धर खाया। देखते देखते उसकी देहके कोड़े टप् टप् टपकने लगे। बकरी में में करती हुई गिर पड़ी। लोग ताण्डव करने लगे।

गुरुकी आज्ञानुसार शिष्यने सांपके समीप आकर उसपर कुछ धूल डाल दी। सांप फिर निस्तेज निष्प्रभ और सङ्कुचित हुआ। फिर चेलेने उसे सांपने शिरको पकड़ी बना ली।

नाना रङ्ग, नाना अवयव, नाना सुखके सर्प खेलमें दिखाये जाते थे। कोई कृष्णवर्ण, हरिद्रावर्ण, मिश्रवर्ण—वर्णका तार मध्य किसना था। वर्णन करनेकी शक्ति नहीं, देखते ही बनता है। कोई कोई गोहमन सांप बड़े लम्बे हैं,—आठ हाथसे कम नहीं, कोई वामनाकार हैं,—रूप जैसा फन है, किन्तु उसका हाथ डेढ़ हाथसे ज्यादा नहीं है।

ऐसे धनमें मग्न होता है। कैसा भीषण और

अलौकिक व्यापार है। इसके बाद सांपका काटना प्रारम्भ होता है। इसमें जानकी बारी आ जाती है। कोई उस्ताद दर्शकमण्डलीको सम्बोधन करते कहता है,—देखो, यह विषैला महाकालसर्प हमारी जीभमें काटेगा, किन्तु मर गे नहीं,—मन्त्र और औषधिके जोरसे बच जायगे।" उस्तादने जीभ बाहर निकाली। तेजसे सांपने जोरसे डस लिया। आघात मार चेलोंने उस्तादको दवा दी, मन्त्र उच्चारण किया, तोभी उस्ताद निर्जीव होकर पड रहे। मस्तके ऊपर सोनेकी चेष्टा की, पर चेलोंने सोने न दिया, उठाकर बैठा दिया। दो घण्टा औषध देने और मन्त्र उच्चारण करनेपर उस्ताद धीरे धीरे जागने लगे। सूखे पेडकी तरह धीरे धीरे सजीव हो उठे। उस्तादके प्राण बचे, वह हंसे और बोले,—हमारी यह औषधि धन्वन्तरि-सुधा है।" अगर कोई कह बैठता, "सांपके दांत टूटे हुए हैं," तो फिर बकरीपर परीक्षा होती।

इस तरह सांपका खेल खतम हो जानेपर उस्ताद लोग दर्शकोंको सांपके विषकी औषधि बांटते और कहते थे,—"मन्त्र सीखनेकी सामर्थ्य किसीको नहीं है। अयोग्यपात्रको मन्त्र बताना भी गुरुने मना कर दिया है। देखना, सांपके विषकी दवा देकर किसीसे पैसा मत लेना। जो पैसा लेता है, उसके पासकी शोभा नहीं रहती और औषधि अपना गुण भी नहीं दिखाती। अतएव सावधान। पैसा मत लेना।"

सांपका खेल अभीतक किसी किसी गांवमें होता है, पर

वैसा महोत्सव नहीं होता और गुणी उस्ताद भी नहीं आते, उस तरहकी औषधि नहीं मिलती और वैसी मन्त्रशक्ति भी नहीं देख पड़ती।

सांपके उस्तादोंको सांपके विषकी दवाओंके लुप्त होनेका कारण है,—समाजकी उपेक्षा। जितना ही अङ्गरेजी शिक्षाका आडम्बर बढ़ने लगा, शिक्षित लोग सांपके उस्तादोंको उतना ही घृणाकी नजरसे देखने लगे। उस्तादोंकी देहमें को़ट किया हुआ कपड़ा नहीं, पैरमें जूता नहीं, पाकटमें घड़ी नहीं, शिरमें एलबर्ट फैशन केश नहीं, फिर उस्ताद लोग घृणाकी दृष्टिसे क्यों न देखे जायंगे? उस्ताद लोग जोड़ीपर चढ़कर दवा करने नहीं जाते,—रोगीको देखकर प्रेसक्रिपशन नहीं देते, विजिट नहीं लेते, फिर उस्ताद लोग घृणाकी दृष्टिसे क्यों न देखे जायंगे? घुटनेके ऊपर मैली धोती, कमर कसी हुई बाल बिखरे हुए, नाखून बढ़े हुए, तलवे फटे, उ गली मव चलना चलना, रङ्ग काला,—हे अङ्गरेजी विद्या विशेषर! ऐसे उस्तादोंसे बातचीत करनेमें तुम्हें कष्ट न होगा? जिसे छूकर हाथ धोनेमें तुम्हें एक टिकिया साबुन खर्च करना पड़ेगी, उसे क्या तुम सहज ड्रोइङ्गरूममें स्थान देना चाहते हो? शिक्षाके प्रतापसे उस्तादोंको देखकर ही तुम्हारे मनमें होगा—साला कुछ जानता बूझता है नहीं—ठग, चोर एवं नरघाती।—दो एक भली बूटी दे और दो चार मन्त्र उच्चारण करके धोखेबाजीसे लोगोंसे पैसा लेना ही इसका रोजगार है। विशेष * जब युरोपके सारे वैज्ञानिक वीरगण अबतक सांपके विषकी कोई दवा नहीं ठीक कर सके हैं, तब यह फटा टूटा कपड़ा पहने,

विरचर, असभ्य, बर्बर जीव सांपके विषकी सुचिकित्सा जानेगा, यह क्या कभी सम्भव हो सकता है?

ऐसे देशमें सभ्यताकी रोशनी जितना ही प्रवेश करने लगी, रोशनी डरे हुए घुग्घूकी भांति सांपके उस्ताद लोग उतना ही छिपने और अस्तव्यस्त होने लगे।

प्राचीन ऋषि प्रणीत, ग्रन्थोंमें भी सर्प चिकित्साका विस्तृत वर्णन है। चरक पढ़िये, देखियेगा, कि अति विशद भावसे सर्पचिकित्सा प्रकरणमें लिखे हुए रोगोंकी नाना अवस्थामें नाना प्रकारकी चिकित्साका उल्लेख है। कहीं कहीं ग्रन्थ कारने दर्पपूर्वक कहा है, कि रोगीको अमुक अवस्थामें अमुक औषधि प्रयुक्त होनेसे वह अवश्य अच्छा हो जायगा। हिन्दू-चिकित्स शास्त्रमें एक तरह चरक मस्तकका मुकुटस्वरूप है। अनेक आदमी इसे सर्वश्रेष्ठ गुरुकी भांति मानते हैं। आज चरकका आधिका अनुवाद पढ़कर युरोप और अमेरिका विमो हित हैं वही महाप्राज्ञ चरक लोगोंको भुलानेके लिये झूठ ही सर्पविषका चिकित्सा विषयक प्रबन्ध इतने विशद और विस्तृत भावसे लिखेंगे—क्या यह विश्वासयोग्य बात है? बुद्धि मानवी धारणामें आता है? तब दुःख यही है, चरककी चिकित्सा इस समय उठ गई है, यह कहना अत्युक्ति न होगी। परीक्षा करके फल देखनेवाले अभीतक पैदा नहीं हुए। चरक ने जिन जड़ी बूटियोंका उल्लेख किया है, उनमें अधिकांशको तो लोग पहचानते ही नहीं। बिना गुरुके बताये पहचान लेनेका उपाय भी नहीं है,—किन्तु गुरु नहीं हैं।

इसी तरहके नाना कारणोंसे इस समय इस देशकी अमूल

सर्प चिकित्सा लोप हो गई है। सांपके विषकी सुचिकि
गयी रही, यह समझकर आज हम भी निश्चिन्त हैं। कार
अङ्गरेजोंने कह दिया है,—सांपके विषकी औषधि नहीं है।

इसीसे रघुदयाल जैसे चिकित्सक भी अब नहीं देख पड़ते
पाठक! एकबार एक अङ्गरेज मजिष्टरकी कन्याको सांपने
काट लिया। रघुदयालने सुचिकित्साद्वारा उसे अच्छा किया।
विलायतके किसी वैज्ञानिक पत्रमें उस समय इस अपूर्व सर्प
चिकित्साकी बात,—मृतप्राय रोगीको जीवन प्राप्तिकी बात,—
लिखी गई थी। उस समयके अङ्गरेज वैज्ञानिक चिकित्सक
दलमें इस बारेमें कुछ आन्दोलन मचा था, पर वह आन्दोलन
स्थायी न हुआ। जैसा उदय,—वैसा ही विलय।

छत्तीसवा परिच्छेद।

रघुदयाल हाथपर सांपको बैठाये हुए वीरबाहुके साथ
जमीन्दारके अन्दर महलमें गये। जाते ही एक हांडीमें
सांपको यत्नपूर्वक रख दिया। हांडीको ढांककर अस्फुटस्व
रसे कई मन्त्र उच्चारण किये।

जमीन्दारके लड़केकी उमर पन्द्रह वर्षसे ज्यादा न होगी।
उस गौरकान्ति देह सांपके विषसे जर्जरित होकर मानो
विवर्ण हो गई है। रोगी चेतनाहीन है। जीभ कुछ बाहर

बांध दिया। पीठको भी इसी तरह छुरेसे थोडासा चीर डाला फिर उसमें कुछ रस डाला, उसका मुंह किसी औषधिसे बन्द करके उसपर कपडा लपेट दिया और स्तासे बांध रखा।

सांपने बालकके पैरके बायें अङ्गूठेमें काट लिया था। अब रघुदयाल उस स्थानको परीक्षा करने लगे। जरासको रघुदयालने छुरेसे खण्ड खण्ड कर डाला। एक मंत्र उच्चारण करके जखमके मुंहपर एक सफेद पत्थर चपका दिया। फिर एक पत्तेका रस लेकर नाक और कानमें डाल दिया। जखमसे आठ अङ्गुल ऊपरके भागको रघुदयालने छुरेसे चीरा। कुछ ज्यादा फाडा और उसमें मुंह लगाकर खून चूसने लगे। चूस कर काला काला खून मुंहसे फेकने लगे। कुछ देरतक इसी तरह खून निकालकर अन्तमें जखमके मुंहपर फिर एक उजला पत्थर चपका दिया।

अब रघुदयालने मालिकसे कहा,—"उत्तम दही, पानी भात, अमारी, दो डाब और मछलीके भोलका—जल्द बन्दोबस्त कीजिये।"

"तथास्तु"—कहकर मालिक चल खडे हुए। गृहिणी और उनकी सासने उनका अनुगमन किया। इधर रघुदयाल एक अपूर्व स्वरमें अबोध भाषामें एकान्त मनसे मंत्र पढ़ने लगे।

मंत्रकी भाषा संस्कृत है, कि हिन्दी, बङ्गला है, कि टिबल,—सो कुछ समझ नहीं पडता। भाषा गद्य है, कि पद्य,—यह भी समझमें नहीं आता। कभी सुर खूब ऊंचा उठता है और कभी खूब नीचे उतर आता है। रघुदयाल कभी हंसते हैं, कभी रोते हैं, कभी विरक्तिभाव प्रकट करते हैं, कभी मधु

कभी मांस मशीन गाते हैं। कभी "मार मार" कहते हैं, कभी विकट चक्रीय भाषा उच्चारण करते हैं। इन सारी बातोंको सुनकर कानमें उंगली देना पड़ती है। किन्तु उस समय रघु-दयाल मानो उन्मत्त थे,—उनको [illegible] ज्ञान शून्य थे। बांसकी एक कैंची लेकर कभी अपने चतुरपर मारते हैं, कभी घमोरपर पटकते हैं, कभी कभी धीरे धीरे रोगीके चतुरपर मारते हैं और कभी कभी छाड़ीसे छकोपर। रघुदयाल इस तरह प्राय साढ़े तीन घण्टेतक गान पढ़ते रहे।

बकते बकते उनका गला बैठ गया। भाभीने रघुदयालको छोड़कर आपको बाहर निकाला। आपको सामने बैठाकर सब हो मन मन पढ़ने लगे। निश्चय नहीं धीरे धीरे सजीव हो गया, सजीव होकर [illegible] आपका भाग्य रखा हो गया। अब आपका स्वाभाविक धीर [illegible] आरम्भ हुआ। रघुदयाल आनन्दसे फूलकर उठ खड़े हुए, प्रसन्नचित्त [illegible] बना यथाक्रम आपने [illegible] कहा—"मा। अब डर नहीं है। आपके गाड़ीको [illegible] आयेगा, पर ओपका दाँत [illegible] पड़ेगा, मारना नहीं पाना।

रघुदयालने रोगको फौरन [illegible] लिये [illegible] नहीं है। [illegible] पर [illegible] और [illegible] रहे हैं। [illegible] दोनों आप गिर पड़े। [illegible] जिन बातोंको रघु-दयालपर चपकाया था अब उस और [illegible] [illegible] हो [illegible] कोर [illegible] पड़ा। [illegible] आड़ जाना। [illegible] आपसर [illegible]

बाध दिया। पीठको भी इसी तरह छुरेसे थोड़ासा चीर डाला फिर उसमें कुछ रस डाला, उसका मुंह किसी औषधिसे बन्द करके उसपर कपड़ा लपेट दिया और रस्सेसे बांध रखा।

सापने याराकके पैरके बाये अङ्गूठेमें काट लिया था। अब रघुदयाल उस स्थानकी परीक्षा करने लगे। जख़मको रघुदयालने छुरेसे खण्ड खण्ड कर डाला। एक मन्त्र उच्चारण करके जख़मके मुंहपर एक सफेद पत्थर चपका दिया। फिर एक पत्तेका रस लेकर नाक और कानमें डाल दिया। जख़मसे आठ अङ्गुल ऊपरके भागको रघुदयालने छुरेसे चीरा। कुछ ज़्यादा फाड़ा और उसमें मुंह लगाकर ख़ून चूसने लगे। चूस कर काला काला ख़ून मुंहसे फेंकने लगे। कुछ देरतक इसी तरह ख़ून निकालकर अन्तमें जख़मके मुंहपर फिर एक उजला पत्थर चपका दिया।

अब रघुदयालने मालिकसे कहा,—"उत्तम दही, मांडी भात, अजवाइन, दो डाब और मछलीके भोजनका—जल्द बन्दोबस्त कीजिये।"

"तथास्तु"—कहकर मालिक चल खड़े हुए। गृहियों और उनकी सामने उनका अनुगमन किया। इधर रघुदयाल एक अपूर्व स्वरमें अबोध भाषामें एकान्त मनसे मन्त्र पढ़ने लगे।

मन्त्रकी भाषा संस्कृत है, कि हिन्दी, बङ्गला है, कि तिलङ्ग,—सो कुछ समझ नहीं पड़ता। भाषा गद्य है, कि पद्य,—यह भी समझमें नहीं आता। कभी सुर ख़ूब ऊंचा उठता है और कभी स्वर नीचे उतर आता है। रघुदयाल कभी हंसते हैं,

है और कभी खोलता है। आंख खोलकर उसने रघुदयालको देखा। अधिक देरतक नजर न डाल सका। रघुदयालको देखकर उसने आंखें मूंद लीं, फिर विश्राम करने लगा।

थोड़ी देरके बाद फिर उसने आंख खोलकर रघुदयालको देखा और धीरेसे पूछा,—"तुम कौन हो?" फिर माताको देखकर कहा,—"तुम यहां क्यों? मैं कहां हूं?"

लड़केने फिर आंखें मूंद लीं।

रघुदयाल लड़केको देहपर हाथ फेरने और मन ही मन मन्त्र उच्चारण करने लगा। बालकने फिर जागकर कहा,—"मा! बड़ी भूख लगी है। यह कौन आदमी है, मा?"

घबड़ाकर बालकके पिता,—पितामही दोनों निकट आये? रघुदयालने कहा,—"अब कुछ चिन्ता नहीं है। अभी आपका लड़का उठकर बैठेगा। आप उसके सिरहाने कच्चा नारियल, दही, अनारी और पानीभात रख दीजिये। उठकर बैठते ही खावेगा।"

कच्चा नारियल आ जानेपर रघुदयालने उसका मुंह काटकर उसमें अनारका रस छोड़ दिया। मिलाकर थोड़ा थोड़ा लड़केको पिलाने लगा। बालकने जागकर कहा—"मा! बड़ी पेशाब लगी।"

रघुदयालने टट्टी दी। लड़केने दो दफे पेशाब किया। पेशाब करनेके बाद वह तकियापर उठकर बैठा और बोला,—"बड़ी भूख लगी है। जल्दी कुछ खानेको दो।"

रघुदयालने फिर नारियलका जल पीनेको दिया। इस बार मिश्री थोड़ी गिलासमें दिया। बालक घूंट घूंट करके पी गया।

रघुदयाल फिर ताली बजा बजाकर नाचने लगे। रोगी चित्त पड़ा हुआ था। जीभ कब मुंहमें घुस गई, सो किसीने न देखा। देखते देखते रोगी करवट फेरकर सोया।

लड़केको करवट बदलते देखकर निकट बैठे हुए पिता मातामें आनन्दकी सीमा न रही। माताकी आंखोंसे आंसुकी धारा चलने लगी। रघुदयालने कहा,—"मा। रोती क्यों हो। और एक घण्टेमें आपका लड़का उठ खड़ा होगा।"

माता स्त्रीजातिके सुलभ लज्जाको छोड़कर रघुदयालसे कहा,—"अब हमसे रहा नहीं जाता। अगर तुम कहो, तो हम एक बार लड़केको गोद लें।"

रघुदयालने कहा,—"मा। थोड़ा और धैर्य धारिये। गोद लेनेका समय आ रहा है।"

रघुदयालने एक पत्तेका रस निचोड़ करके पथलीमें रखा और कहा,—"शीघ्र थोड़ासा टटका दूध गर्म करके ले आइये।"

तुरत ही गाय दुही गई। दूध गर्म किया गया। रघुदयालने आध सेरके अन्दाज दूध लिया। उस पत्तेके रसको दूधमें मिलाकर एक छोटे सितुसे रोगीको पिलाने लगे।

दूध इस बार बाहर नहीं गिरा,—भीतर गया। रघुदयालने कह,—देखिये, मा। आपका लड़का दूध पी रहा है, आइये और नजदीक आकर देखिये,—पर बोलियेगा नहीं, रोइयेगा भी नहीं।"

माता पुत्रके निकट आकर बैठ गई और निमेषशून्य नेत्रसे पुत्रके मुखकी ओर ताकने लगी।

रोगीने फिर करवट बदली।— लड़का कभी आंख मूंदता

चय कोई चिन्ता नहीं है। यह जड़ी च्चापको दिये जाते हैं। इसे कण्ठमें बाधकर च्चपने ही पास रखिये। कभी कभी इस जड़ीको लड़केको सुंघाते रहियेगा।'

अब रघुदयालने ब्राह्मण जमीन्दारका मस्तक ले तथा हाथ जोड़कर कहा,—महाशय। काम खतम हो गया। अब हम जाते हैं। अभी हमे बहुत दूर जाना है।"

"यह कैसी बात है?" इतना कहकर ब्राह्मण जमीन्दारने आंखोंमें आंसू भरे रघुदयालको दोनों हाथोंसे जकड़कर पकड़ा और कहा—"तुम जाओगे कहां? इतनी रात बीत चुकी है, तुमने अबतक जल भी ग्रहण नहीं किया—तुम जाओगे कहां? हमारी मांने तुम्हारे लिये अपने हाथसे भोजन बनाया है, तुम भोजन करो और यहीं रहो। तुम हमारे लड़केके जीवनदाता हो—तुम्हें हम छोड़ नहीं सकते। यह देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये थालीमें रखकर पांच सौ मोहरें लिये आती है, यह देखो, हमारी स्त्री जिस हीरे-की अंगूठीको अपनी उंगलीमें पहनती थी वह हजार रुपयेसे भी ज्यादा दामकी हीरेकी अंगूठी मोहरोंकी थालीके ऊपर शोभायमान है। और यह देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये अच्छा भरकर अनन्त दश बारह नग सोनेका गहना लिये आती है,—इसीसे कहते हैं, कि तुम जाओगे कहां? तुम्हारे लिये प्राण दे देनेपर भी हम उऋण नहीं हो सकते—सामान्य अर्थ तो कुछ है ही नहीं।"

रघुदयालने हंसकर उत्तर दिया,—"महाशय। क्षमा कीजिये,—सांपकी चिकित्सा करके पैसा नहीं लिया जाता,—

साप उसी तरह फन फैलाये खड़ा है। रघुदयालने गलेमें कपड़ा डालकर उसे प्रणाम किया और सामने दूध रखकर कहा,—देवता। तुम्हारेवास्ते यह दूध लाये हैं, ग्रहण करो।"

सापने दूध नहीं पिया। रघुदयालने कहा,—"किसीके सामने साप दूध न पियेगा। सांपके सामने कपड़ेका परदा टाग दो—जिससे सांपका दूध पीना कोई देख न सके।"

परदा पड़ गया। रघुदयालने कहा,—"सापने थोड़ा ही दूध पिया है। और नहीं पियेगा।'

रघुदयालने प्रीतिपूर्वक सापको पकड़कर हाड़ीमें रख लिया और कहा,—"बालकके भोजनके लिये अलग बन्दोबस्त करो। हम कुछ दूर हटकर खड़े होते हैं। दहीका आधा हिस्सा लेकर माठा तय्यार करो—दही और माठा दोनो खिलाना होगा।"

बालकने बैठकर पनीभात, दहीमाठा और आमतीमें नमक मिलाकर खाया। क्षुधा इतनी प्रबल थी, कि सब अरुचीकर सामग्रीको बालकने अमृतकी तरह खाया। बालककी इच्छा कुछ और मीठा भात खानेकी थी। रघुदयालने मनाकर दिया। उन्होंने कहा,— रातमें और नहीं,—सबेरे मा शंकरी और मा मनसाकी पूजा देकर तब भात और मछलीका रसा खाना। माकी पूजा देकर लाइका प्रसाद साथ खाओ।"

अलग बिछौनेपर बालक जाकर बैठा।

उस समय तीन पहर रात बीत चुकी थी। रघुदयालने कहा,—"बाहरवाले खण्डमें बहुत आदमी आपके लड़केको देखनेके लिये छटपटा रहे हैं। अब उन्हें यहां आनेकी आज्ञा दो-

अब कोई चिन्ता नहीं है। यह जडी आपको दिये जाते हैं। इसे कपडेमें बांधकर अपने ही पास रखिये। कभी कभी इस जडीको लडकेको सुघाते रहियेगा।"

अब रघुदयालने ब्राह्मण जमीन्दारका पदरज ले तथा हाथ जोडकर कहा,—महाशय! काम खतम हो गया। अब हम जाते हैं। अभी हमे बहुत दूर जाना है।"

"यह कैसी बात है?" इतना कहकर ब्राह्मण जमीन्दारने आखोंमें आंसू भरे रघुदयालको दोनों हाथोंसे जकडकर पकडा और कहा—"तुम जाओगे कहा? इतनी रात बीत चुकी है, तुमने अबतक जल भी ग्रहण नहीं किया—तुम जाओगे कहा? हमारी माने तुम्हारे लिये अपने हाथसे भोजन बनाया है, तुम भोजन करो और यहीं रहो। तुम हमारे लडकेके जीवनदाता हो—तुम्हें हम छोड नहीं सकते। यह देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये थालीमें रखकर पान ले मोहर लिये आती है, यह देखो, हमारी स्त्री जिस हीरे-की अगूठीको अपनी उगलीमें पहनती थी वह हजार रुपयेसे भी ज्यादा दामके हीरेकी अगूठी मोहरोंकी थालीके ऊपर शोभायमान है। और यह देखो हमारी स्त्री तुम्हारे लिये आंचल भरकर अन्नत तथा बाजू बन्द सोनेका गहना लिये आती है—इसीसे कहते हैं, कि तुम जाओगे कहां? तुम्हारे लिये प्राण दे देनेपर भी हम उऋण नहीं हो सकते—सामान्य अर्थ तो कुछ है ही नहीं।"

रघुदयालने हंसकर उत्तर दिया,—"महाशय! क्षमा कीजिये,—आपका चिकित्सा करके पैसा नहीं लिया जाता,—

हम एक कानी कौड़ी भी न लेंगे। गुरुने मना कर दिया है। हम हाथ जोड़कर कहते हैं, हमारा इतना ही उपकार कीजिये, कि हमें लोभ मत दिखाइये। हम मोटिया मजूर ठहरे, हमें यही पारितोषिक, यही वर दीजिये, कि हम लोभ रोक सकें। यह होने हीसे आप कृतकृत्य हो जायंगे।"

जमीन्दारके नेत्रसे आंसूकी धारा बह निकली। उन्होंने रोते रोते कहा,—"यह कैसी बात है! यह कैसी अद्भुत बात है। यह कैसी असम्भावनीय बात है! हमने तो मनमें यह सङ्कल्प कर लिया था, कि तुम्हें इसी गांवमें बसावेंगे,—पांच सौकी आमदनीका एक मौजा तुम्हारे नाम लिख देंगे। हमने तो ऐसा ही स्थिर किया था, किन्तु यह केवल कल्पना ही ठहरी। अथवा हम स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं!"

रघुदयालने कहा,—"इस दासको क्षमा कीजिये। नाराज मत होइयेगा।"

ब्राह्मण जमीन्दारने उत्तर दिया,—"अच्छा ये सब बातें पीछे होंगी। सारा दिन तुमने मजदूरकी भांति काम किया है और अबतक पेटमें कुछ पड़ा नहीं,—इस समय कुछ जलपान करो, फिर भरपेट भोजन करना। सबेरे हम तुम्हारे बारेमें विवेचना करेंगे।"

उस समय रघुदयालने सांपकी हांडीको दाहिने हाथमें उठा लिया। बायें हाथमें अपनी लम्बी लाठी पकड़ी। और कहा,—सांपके काटे हुए आदमीके यहां जल ग्रहण करना भी हम लोगोंको मना है। सर्प चिकित्साविद्या बड़ी कठिन

है। दान लेनेसे बुराई होती है, विद्याका लोप हो जाता है। आप हमें क्षमा कीजिये।"

यह बात कहकर उत्तरकी अपेक्षा बिना किये ही रघुदयाल लाठी लेकर लम्बे लम्बे डेगसे घरके बाहर हो गये। रघुदयाल विद्युत वेगसे चले। और कोई उन्हें न देख सका।

ब्राह्मण जमीन्दार, पत्नी एवं जननीने "यथौ न तस्थौ",—कठपुतलीकी भांति, किंकर्त्तव्यविमूढ़की भांति चुपचाप हो रहे, अन्तमें कुछ प्रकृतस्थ होकर रोते रोते ब्राह्मण जमीन्दारने दरवान वीरबाहुसे कहा,—"वीरबाहु! देखो तो रघुदयाल किस राहसे गया।"

वीरबाहुने हाथ जोड़कर कहा,—"हुजूर! हम कहां देखें? रघुदयाल अबतक दो कोस चले गये होंगे।"

यही एक दिन रघुदयाल कात्यायनीके घरकी रक्षा न कर सके। दस्युदलपतिगण—बहुत दिनसे सुयोग और सुविधा खोज रहे थे। आज रघुदयाल अमुक काममें मर्म चिकित्साके काममें अटक गये हैं' यह सुनकर वे लोग कात्यायनीके घरका सब कुछ लूट ले गये।



सैंतीसवां परिच्छेद।

किसने कात्यायनीके घरमें डाका डलवाया, यह जाननेकी आवश्यकता अभी नहीं है। किस दुराचारीके यत्न एवं षड्यन्त्रसे अपमरी कात्यायनीके परिवारपर यह डाकाहमी

खड्गाघात हुआ, अभी इसके जाननेसे कुछ फल नहीं। किस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये, किस कुफलके पानेके वास्ते कात्यायनीका सब कुछ हरा लिया गया, यह सुनने हीसे अब क्या होता है?

डाका पड़नेके बाद सचमुच ही कात्यायनीको कष्ट सहना पड़ा। अभीतक धान चीज बेचकर कष्टसे कात्यायनीका निर्व्वाह होता था। डाकेमें सब कुछ लुट गया,—अब बेचें भी क्या?

डाका पड़नेके कुछ ही दिन बाद गोआलिनने दूध देना बन्द कर दिया। मोदीने सौधा रोक दिया। धोबीने कपड़ा धोना छोड़ दिया। इसी समयसे सबेरे ही रघुदयाल एवं रमाप्रसाद फलोंके वास्ते दूर खरीदने या मागने बाहर निकल जाते थे।

एक बात आश्चर्यजनक मालूम होती है।- कात्यायनी कहती हैं,—"प्राय. सौ जवानोंने अनेक प्रकारके हथियार लेकर हमारा घर लूट लिया। डकैतोंने हम लोगोंको मारा पीटा नहीं, गाली नहीं दी और मा ठाकुरानीकी कोठरीमें भी लूट नहीं मचाई। लक्ष्मीपूजाकी मोहर और धनको नहीं लिया।" बात यही है—रघुदयाल अकेला,—सहाय और सम्पत्तिहीन है,—और कोई बाहुबल अर्थबल कुछ भी नहीं है। रघुदयालकी उमर भी बहुत हो गई है। इन सौ जवानोंने क्या अबतक रघुदयालके डर होसे कात्यायनीके घरमें डाका नहीं डाला था? इस प्रवीण वयसमें अगर रघुदयालको पाच या दस आदमी पकड़ ले, तो रघुदयालकी सामर्थ कहा

गहे? भीमतारोंके मुकाबले रघुदयाल क्या कर सकते हैं? तब डाकू लोग इतने दिनोंतक रघुदयालकी गैरहाजरीका मौका क्यों खोज रहे थे?

अनेक समय आदमी नामके प्रतापसे भी जयलाभ करता है। इस रघुदयालकी उमर चाहे ज्यादा हो, किन्तु नामकी महिमा थी, पसार था, दश आदमी एक जगह बैठे हैं, यदि एक अङ्गरेज या अफगान घूसा उठावें, तो दशों आदमी भाग खड़े होंगे। दश आदमियोंका बल एकत्र करनेपर अवश्य ही एक अङ्गरेज या अफगानके बलसे ज्यादा होगा, तब आदमी लोग भागते क्यों हैं? इसका कारण है,—अङ्गरेज या अफगानकी नाम महिमा और पसार।

उसी तरह नामकी महिमा और पसारके गुणसे रघुदयाल धर्म्मविजयी हो उठे थे। इसके सिवाय उमर कुछ ज्यादा होनेपर भी रघुदयालका बलविक्रम उतना नहीं घटा था। शरीरमें अभीतक विलक्षण बल था। बलके अलावा लाठी और खेलनेके कौशलमें भी उनका समकक्ष उस देशमें और कोई न था। जोरसे एकगुना होता है, पर कौशलसे दशगुना होता है। रघुदयालके गौरव हुङ्कारसे डाकू लोग थरथर कांपते थे। इसीसे आजकल रघुदयालको प्राय लाठी नहीं उठाना पड़ती थी।

और भी एक कारण है। इस प्रदेशके जितने लठबाज, डाकू या जवान हैं—प्राय सभी रघुदयालके शिष्य प्रशिष्य हैं। इस प्रदेशमें जो कोई लाठी पकड़ना जानता, वही रघुदयालको गुरुजी कहकर पुकारता और कितने ही तो प्रणाम करके

पहरा देते थे। सुतरां जिस घरके रक्षक रघुदयाल हैं, डाका न पड़े?

जिन जमीन्दारने रघुदयालके यहां डाका डाला था, उसके अधीनस्थ लट्ठबाज कहते थे,—"हुजूर। जिस घरकी रक्षा रघुदयालके हाथमें है, हमारे डाकू भी उसमें पहुंचकर कुछ भी नहीं कर सकते। रघुदयाल यदि धनुर्बाण धरे और तीर चलाने तो उसके सामने कौन ठहर सकता है? वह विषकी बुझी तीर जिसकी देहमें लगेगी वही मर जायगा। हम लोग कात्यायनीका घर लूटने जा कर प्राण न दे सकेंगे। तब जिस दिन रघुदयाल घरमें नहीं रहेगा, उस दिन अनायास ही घरको लूट सकेंगे।"

जमीन्दारने देखा, कि हमारे लट्ठबाजोंके हृदयमें रघुदयालका आतङ्क बैठा है। उन्होंने खुलमखुल्ला किसीसे कुछ न कहकर पञ्जाब प्रदेशसे आठ भयानक डील डौलवाले मनाम लट्ठबाजोंको बुलाया और देशस्थ लट्ठबाजोंको यह आज्ञा दी,—"तुम लोग देखते रहो, कि रघुदयाल किस दिन घरमें नहीं रहता,—उसी दिन डाका डालना होगा।"

जिस दिन रघुदयाल अन्य गांवमें सर्पचिकित्सा कर रहे थे, उसी दिन कात्यायनीके घरमें डाका पड़ा। डाकुओंने रघुदयालकी खातिर और मा शङ्करीके भाग्यबलसे शङ्करी गृहमें न तो प्रवेश किया और न लूट पाट ही मचाया।

उसी जमीन्दारने रघुदयालको वहकादर अपना दरबान बनानेकी चेष्टा की थी आठ रुपया महीना देनेको तयार थे,

पर रघुदयालकी उनकी बात न सुनी। झुक तानेके तौर पर कहा,—"हम रुपयेके भिखारी नहीं हैं।"

इतना बड़ा अपार प्रतिपत्ति सम्पन्न दिग्विजयी पुरुष जब उनके हाथ न आया, तब वह रघुदयालपर कुछ क्रुद्ध हुए। विशेषतः कात्यायनीके घरसे उन्हें निकाले, कात्यायनीका घर सहज ही दखल न होगा। जमीन्दार चिन्ता करने और उन्हें कात्यायनीके घरसे निकालनेके लिये अनेक उपाय सोचने लगे।

जमीन्दार भी सोचते हैं,—रघुदयाल जब नहीं जाय, तो एक आदमी भेजकर उसे खण्ड खण्ड करवा डालना क्या ठीक नहीं है? पर काटेगा कौन? प्रस्ताव किससे करें? अच्छा कौशलसे विष दे देनेमें क्या दोष है? हमारे इस कामका पता तो किसीको लगेगा नहीं, अथच रघुदयालको सहज उपायसे मार डालना या भगा देना पड़ेगा।

"एक चालाकी खेलना होगी। महेश तेली कलकत्तेमें रोजगार करता है। व्यापार करके बड़ा आदमी हो गया है। यहां हमारी जमीन्दारीमें रहनेपर भी हमें उतना मानता नहीं। उसे कलसे आना होगा। डाकुओंसे उसका घर लुटवा देनेपर अन्ततः बीस हजार रुपया नगद और कुछ जेवर भी हाथ लगेगा।

"बीस हजार रुपया मिले या न मिले, हम डकैती करनेका कलङ्क रघुदयालके मत्थे मढ़कर उसे गिरफ्तार करा देंगे। पुलिस हमारे हाथमें है। डकैती हो जानेके दो एक दिन बाद दारोगाको बुला और एकान्तमें परामर्श करके उनसे

चुपचाप समझा देंग,—"यह काम रघदयालका है। यदि आप सहायता दें, तो अभी डकैतीका किनारा कर दें। पर रघुदयालको पकड़ना सहज नहीं है। लाठी गहनेपर रघदयाल पांच सौ आदमियोंको भगा सकता है। इसलिये उसे बहुत सावधानी और कौशलसे साथ पकड़ना होगा।" यदि माल सहित गिरफ्तार कराया जाय, तो और भी अच्छा है। इसकी चेष्टा करना होगा।"

ऐसा स्थिर करके जमीन्दारने महेश तेलीके यहां डकैती कराई। कई हजार रुपयेका असबाब और कई हजार नकद लुटवाकर अपने घरमें रखा।

डकैतीके दो एक दिन बाद जमीन्दार अपनी कचहरीमें बैठकर हाय हाय करने लगे,—"देश अराजक हो उठा? देशमें रहना भार हो गया। चारो ओर डाकुओंका डर है। यदि इस डाकेका किनारा न कर सके,—डाकुओंको यदि गिरफ्तार न करा सके, तो देशमें रहना मुश्किल हो जायगा।"

देखते देखते दारोगा साहब जमीन्दारके मकानपर आ पहुंचे। दोनो आदमियोंने एक कोठरीमें एकान्त बैठकर क्या परामर्श किया, वह किसीको मालूम न हुआ। अन्तमें दारोगासाहबके मुंहसे यह बात सुन पड़ी,—"बड़े साहब बहुत नाराज हैं। यदि इस बार मालसहित डकैतोंको गिरफ्तार न कर सके, तो हमारी नौकरी चली जायगी।" जमीन्दरने कहा,—"कुछ डर नहीं है।"

उस प्रथम दिन,—उस अशुभ दिनकी बात एक बार याद कीजिये, रघुदयाल लक्ष्मीके लिये दूध खोजनेको बाहर निकले

हैं। अपने गांवमें दूध न मिलनेपर दूसरे गांवमें गये हैं। इधर दूधके अभावसे लज्जोका जान सूख रहा है। कात्यायनी सोच रही है,—"रघुदयाल कहां चला गया, अभीतक लौटा नहीं? जो रघुदयाल एक दिन दो दण्ड बीतते बीतते दूध लाकर लज्जोको देता था, आज एक पहर समय बीत गया पर रघुदयाल अबतक आया क्यों नहीं? प्राय डेढ़ पहर दिन चढ़ आया, तौभी रघुदयाल आया क्यों नहीं?"

किन्तु रघुदयाल और वह रघुदयाल नहीं है। रघुदयाल हत, बहु निपीड़ित, जर्जरित और संज्ञा रहित है।

रघुदयाल दूरवाले किसी गावमें जाकर एक गोआलेके यहां दूध मांग रहे हैं,—कहते हैं, अभी तुम आधसेर दूध दो, पैसा उस बेला या कल दे जायगा।"

गोआला कह रहा है,—"तुम्हारा विश्वास क्या? तुम कौन हो? तुम्हें कभी देखा नहीं, तुम्हें पहचानते भी नहीं—दूध उधार कैसे दें?"

रघुदयाल कहते हैं,—"अच्छा!, एक काम करो। यदि तुम्हें विश्वास न हो, तो तुम्हारी गायकी कटिया काट देते हैं, दो बोझ घास गढ़ देते हैं। तुम इस बरतन भरकर दूध हमें दो।"

इतना कहकर रघुदयालने गोआलेको बर्तन दिखाया और कहा,—"एक लड़की है। अगर वह दूध न पायेगी, तो मर जायगी। इसीसे दूधके लिये इतना व्याकुल हैं। तुम्हारे घरमें भी तो लड़के लड़कियां हैं,—भला कहो तो भूख लगने पर वह सब कितना रोते हैं?

गोआलिने दिखलि नदी की। उसने कहा, कि वर्त्तन निकालो, दूध देते हैं।

रघुदयालने वर्त्तन निकाला,—उसमें सेरभर दूध आता है। गोआला दूध ढालने लगा। जब वर्त्तन आधा भरगया, तब रघुदयालने कहा,—"बस और नहीं।"

गोआलेने कहा,—लो, वर्त्तन भरे देते हैं।

गोआला दूध ढाल रहा है। रघुदयाल म्लानयनसे देख रहे हैं। इसी बीचमें न जाने कहांसे हठात् किभूत किमाकार, पर्वतप्रमाण देह विशिष्ट, अतुल बलशाली दश बारह नर-राक्षसोंने आकर रघुदयालको पकड़ लिया और तुरत ही पकड़कर बांध भी डाला। बांधकर रघुदयालको पीठपर लात, घूंसा और लाठी मारने लगे।

अब दो जवानोंने आकर रघुदयालके दोनों हाथ पकड़ लिये। दो आदमियोंने मजबूतीसे कमरको पकड़ा। एक आदमीने गला धरा और दो मनुष्योंने दोनों पैरोंको पकड़कर बांध दिया। रघुदयालके दाहिने हाथमें दूधका वर्त्तन वर्त्तमान था। एक आदमीने जब उस हाथको पकड़ा तब रघुदयालने कहा,—"यह क्या करते हो? वर्त्तन गिर पड़ेगा दूध बरबाद हो जायगा।"

इतना कहते ही वर्त्तन छुटकर फ़र्श दूर जा रहा। रघुदयालने देखा, कि नरराक्षसने एक अन्य मिलकर इसे पकड़ा है,—फिर नहीं छोड़े। उन दश बारह पठानोंने रघुदयालको इस तरह पीटा, कि वह बेहोश हो गये।

रघुदयाल जिस समय बेहोश पड़े थे, उसी समय दारोगा, आठ कांस्टेबल और पचास चौकीदार लेकर वहां पहुंचे।

उन्होंने सबके सामने बेहोश रघुदयालकी कमरसे जेवर और रुपये भरी एक थैली निकाली। उन्होंने थैलीका मुंह खोल कर कहा,—"चोरीका माल मिला है। डाकेका माल पकड़ा गया है। कुछ माल मिला है, बाकी माल मिलनेमें भी शायद अब कोई सन्देह नहीं है।"

फिर रघुदयालके मुंहमें जल दिया गया। रघुदयालको होश हुआ। चारों ओर हल्ला हो गया, कि डाकुओंका सरदार गिरफ्तार पकड़ा गया है। रघुदयालके हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेड़ी डालकर उसे बैल गाड़ीपर थानेमें ले गये।

माँ वहीं यह घटना उपस्थित हुई। एक बजे रघुदयाल थानेमें पहुंचाये गये। एक बजेसे सान्झतक दारोगा ने गाली मार देने और अनुचरोंका नाम बतानेके लिये मगज खाली किया। रघुदयालने कहा,—"हम कुछ भी नहीं जानते। हम निर्दोष हैं। हमने इस जिन्दगीमें प्राय डकैतीके पचास दलको गिरफ्तार कर दिया है। हम खुद डकैती करेंगे यह आपको विश्वास होता है? किसी दुष्ट मनुष्यने षड़यन्त्र रचकर हमारी ऐसी दुर्दशा की है। हम निर्दोष हैं,—हमें छोड़ दीजिये। हम इसके बारेमें कुछ भी नहीं जानते।"

रघुदयालकी बातका विश्वास दारोगाने कुछ भी नहीं किया दारोगा साहबने कहा,—"यह डाकुओंका सरदार बड़ा धर्मात्मा है। इसका एक उंगलीमें रस्सी बांधकर लटका दो। इसीसे यह सब बात कबूल करता है, कि नहीं। पश्चात भागमें आगका छींटा दो और रह रहकर बेंत चलाओ। देखो तो यह सब बात कहता है, कि नहीं?

गोआलेने दिरुक्ति नहीं की। उसने कहा, कि बर्तन निकालो, दूध देते हैं।

रघुदयालने बर्तन निकाला—उसमें सेरभर दूध आता है। गोआला दूध ढालने लगा। जब बर्तन आधा भरगया, तब रघुदयालने कहा,—"बस और नहीं।"

गोआलेने कहा,—लो, बर्तन भरे देते हैं।

गोआला दूध ढाल रहा है। रघुदयाल मन्थरायनसे देख रहे हैं। इसी बीचमें न जाने कहांसे हठात् किम्भूत किमाकार, पर्वतप्रमाण देह विशिष्ट, अतुल बलशाली दश बारह नर-राक्षसोंने आकर रघुदयालको पकड़ लिया और तुरत ही जकड़कर बांध भी डाला। बांधकर रघुदयालकी पीठपर लात, घूंसा और लाठी मारने लगे।

जब दो जवानोंने आकर रघुदयालके दोनों हाथ पकड़ लिये। दो आदमियोंने मजबूतीसे कमरको पकड़ा। एक आदमीने गला धरा और दो मनुष्योंने दोनों पैरोंको पकड़कर बांध दिया। रघुदयालके दाहिने हाथमें दूधका बर्तन वर्तमान था। एक आदमीने जब उस हाथको पकड़ा तब रघुदयालने कहा,—"यह क्या करते हो? बर्तन गिर पड़ेगा दूध बरबाद हो जायगा।"

इतना कहते ही बर्तन लुढ़ककर कुछ दूर जा रहा। रघुदयालने देखा, कि गएरचने एक हाथ मिलाकर इन्हें पकड़ा है,—फिर नहीं बोले। तब दश बारह पवाज डाकुओंने रघुदयालको इस तरह पीटा, कि वह बेहोश हो गये।

रघुदयाल जिस वक्त बेहोश पड़े थे, उसी समय दारोगा आठ कांस्टेबल और पचास चौकीदार लेकर वहां पहुंचे।

उसी रातमें दारोगा साहब रमाप्रसादको लिये थानेमें आये आते ही रघुदयालकी रस्सी काटनेकी आज्ञा दी।

रघुदयाल रमाप्रसादके साथ रखे गये। एकसे दो हुए। मालूम पड़ा। किन्तु कौन किस लिये थानेमें आया है, क्यों दोकी ऐसी दशा हुई है, इस सम्बन्ध कोई भी समझ न सका। एक रघुदयालके इशारेसे मना करनेके कारण रमाप्रसादको भी कुछ पूछनेकी हिम्मत न पड़ी।

पिछली रात है। चार बज चुका है। जाड़का वक्त है। जाड़े का दिन है, इसीसे अबतक खूब अन्धकार छाया है। "असामियोंको उपयुक्त स्थानमें रखो,"—इतना कहकर दारोगा साहब शयनागारमें चले गये।

आज्ञानुसार कानिस्टबल और चौकीदारोंने रघुदयाल और रमाप्रसादको हथकड़ी और बेड़ी पहनाकर एक ही कोठरीमें रख दिया। आठ चौकीदार और आठ बलवान पठान उन लोगोंकी चौकसीके लिये मुकर्रर हुए।

रातभर कोई भी न सोया। ऐसा अच्छा बन्दोबस्त करके कानिस्टबल तथा थानेके अन्यान्य कर्मचारीगणने सुखसे गाढ़ी नींद ली।

इतने कष्टके बाद क्या रघुदयाल सोये?—क्या रमाप्रसादको नींद पड़ी?

आदेश—कार्य्यमें परिणत हुआ। रघुदयाल झूलने लगे। झूलते झूलते बीच बीचमें दोल खाने लगे।

जिस समय रघुदयालकी ऐसी अवस्था थी, उसी समय नील कोठीके नायब दीवान वीरभद्रकी चिट्ठी दारोगाको मिली। उसमें लिखा था कि नीलकोठीमें मोहर चोरी गई,—आप शीघ्र आइये। वीरभद्रका खत पाकर दारोगा साहब घोड़ेपर सवार हुए और नीलकोठीकी ओर तीरकी भांति चले। चलनेके वक्त रघुदयालके बारेमें कुछ कहना भूल गये। इस अवस्थामें रघुदयाल कबतक रखे जायगे, यह बात उन्होंने किसीसे न कही और किसीने उनसे पूछा भी नहीं। इसीसे दारोगा साहबके लौट आनेतक रघुदयालको इसी अवस्थामें रहना पड़ा।

इस अवस्थामें प्राय दो अढ़ाई घण्टे रघुदयाल चुपचाप रहे। चुपचाप कष्ट सह लिया। जब असह्य हो उठा, तब रघुदयाल धीरे धीरे "बाप रे बाप" कहने लगे। जैसे जैसे देर होती थी वैसे ही वैसे "बाप रे बाप" शब्द बढ़ने लगा। जब रातके दो बजे, तब उस गगनभेदी "बाप रे बाप" शब्दसे दशों दिशायें पूर्ण हो गई। सुननेमें आया है, कि यह भीषण शब्द दो कोसतक सुन पड़ता था। लोग कहते हैं, कि तीन पहर रात बीतनेपर भी इस "बापरे बाप" शब्दके कारण चतुष्पार्श्वस्थ लोगोंकी नींद टूट गई थी। उस गम्भीर गगनभेदी चित्कारको सुनकर स्त्रीपुरुष, बालक बालिका आतङ्कसे कांप उठे थे। बूढ़ोंने सोचा था—"शायद महाप्रलय उपस्थित हुआ है।"

प्राण बच सकते हैं? सोये नहीं केवल रघुदयाल और रमा प्रसाद। ठीक नहीं कह सकते,—शायद एक प्रहरी भी नहीं सोया।

बालक रमाप्रसाद नींदका बहाना किये सोया है सही, पर बीच बीचमें सिर उठाकर एक बार रघुदयालको देख लेता है। रघुदयाल बांधे हुए दोनों हाथोंको उठाकर कहते हैं,—"न, इस तरह मत उठो—देखो मत। चुप चाप पड़े रहो।" यह देखकर रमाप्रसाद पड़ा रहता है।

रमाप्रसाद और रघुदयाल दोनों ही उत्कण्ठित हैं। रमा प्रसाद सोचता है,—"रघुदयाल इस तरह क्यों कैद किये गये हैं?" और रघुदयाल सोचते हैं,—"रमाप्रसाद क्यों इस तरह छावनीमें लाया गया है?" रमाप्रसाद विचारता है,—"रघुदयाल जैसा साधु आदमी इस संसारमें विरला है। वे भोम लेते चलते हैं सही, पर चोरी डकैती कभी नहीं करते, वरञ्च चोर डाकु ओंको पकड़ना ही उनका काम है। जो रघुदयाल भिखम ङ्गेको देखकर आप नहीं खाते, भिखमङ्गेको खिला देते हैं उन्हीं रघुदयालने आज ऐसा कौन कुकर्म किया, कि गिरफ्तार होकर एक डंगलीमें रक्खे बांधकर कठौते पकड़ लिये गये? क्या किसीके साथ उन्होंने लड़ाई झगड़ा किया? पर रघु- दयालकी बराबर [illegible] नहीं हैं। बिना मामाकी अनुमतिके वे कभी ग्रास भी नहीं उठाते। यो कैसे, हुआ?—कुछ समझ नहीं पड़ता? चारो ओर सिपाहियोंका ही पहरा है।"

[illegible]याल सोच रहे हैं—यह दुर्गतीन किस अपराधसे छावनीमें लाया? [illegible] है पर यों भी तो

अड़तीसवाँ परिच्छेद।



दुःखसागरमें भी समय समयपर सुखकी तरङ्ग उठती है मेघभरे आकाशमें भी कभी कभी चन्द्रमा झांक देते हैं। रघुदयाल एवं बालक रमाप्रसाद शृङ्खलाबद्ध अवरुद्ध, प्रहारित, प्रपीड़ित, मर्म्माहत, सूरुआमें सोये हैं,—आज दोनो एक ही कोठरीमें हैं,—सुतरां आल्हादित, पुलकित एवं स्फीत हैं। रघुदयालको कारागारमें देखकर बालक रमाप्रसादने मानो निधि पाई। रघुदयालने भी रमाप्रसादको पाकर मानो प्राण पाया,—उनकी व्यथा मानो दूर हो गई।

दारोगा साहबका हाजत प्राय पन्द्रह हाथ लम्बा होगा चौड़ा साढ़े चार हाथसे ज्यादा नहीं है। रघुदयाल कोठरीके एक पार्श्वमें उपविष्ट अथवा अर्द्धशायित हैं। इनके बाद दो पहरेवाले बैठे हैं। उनके बाद रमाप्रसाद बैठा है। कोठरीमें दो खिड़कियां हैं। दरवाजा लोहेका बना है। उसमें ताला लगा है। प्रत्येक खिड़कीके पास दो और दरवाजेके निकट चार प्रहरी खड़े हैं। हाजतमें पहरेका ऐसा बन्दोबस्त था।

बन्दोबस्त मनेके समय पक्का रहता है सही किन्तु उसके अनुसार हमेशा काम नहीं होता। पहरेवालोंके जागते रहनेकी बात थी, किन्तु वे सब सोये हैं। जाड़ेकी रातमें वे लोग प्राय तीन घण्टेतक जागते रहे। बाकी रातमें बिना सोये क्या

प्राय बच सकते हैं? सोये नहीं केवल रघुदयाल और रमा प्रसाद। ठीक नहीं कह सकते,—शायद एक प्रहरी भी नहीं सोया।

बालक रमाप्रसाद नींदका बहाना किये सोया है सही, पर बीच बीचमें सिर उठाकर एक बार रघुदयालको देख लेता है। रघुदयाल बाधे हुए दोनो हाथोंको उठाकर कहते हैं,—"न, इस तरह मत उठो—देखो मन। चुप चाप पड़े रहो।" यह देखकर रमाप्रसाद पड़ा रहता है।

रमाप्रसाद और रघुदयाल दोनो ही उत्कण्ठित हैं। रमा प्रसाद सोचता है,—"रघुदयाल इस तरह क्यों कैद किये गये हैं?" और रघुदयाल सोचते हैं,—"रमाप्रसाद क्यों इस तरह हवालातमे रखा गया है?" रमाप्रसाद विचारता है,—"रघुदयाल जैसा साधु आदमी इस संसारमें विरला है। व भोम जैसे बली हैं सही, पर चोरी डकैती का तो नहीं करते, वरन्‌ चोर डाकु ओंको पकड़ना ही उनका काम है। जो रघुदयाल भिखम ङ्गेको देखकर आप नहीं खाते, भिखमङ्गेको खिला देते हैं, उन्ही रघुदयालने आज ऐसा कौन कुकर्म किया, कि गिरफ्तार होकर एक उ गमीमें रखी बाधकर कहीसे ढदना किये गये? क्या किसीसे साथ उन्होने लड़ाई झगड़ा किया? पर रघु दयालतो यराह सिय नहा हैं। बिना मालाका अनुमतिके व कभी शस्त्र भी नही उठाते। तो ऐसा हुआ?—कुछ समझ नहीं पड़ता? चारो ओर सिमीयिका ही सीराम्ती है।"

रघुदयाल सोच रहे हैं—यह दारोगा किस अपराधमे झगड़े लाया? अगर समान होनेपर कोई तो तो

जामिन होजाता? मालूम होता है, अपराध गुरुतर है खून तो नहीं कर डाला? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है। हमारी समझमेंतो कुछ भी नहीं आता!—माजरा क्या है?

रमाप्रसाद सोचने लगा,—"रघुदयालको पकड़ा कैसे? ये तो सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं। अन्यान्य रूपमें झूठा अभियोग खड़ाकरके उन्हें पकड़ना बहुत ही कठिन काम है। तब क्या ये सचमुच ही दोषी हैं?—इसीसे गिरफ्तार हो गये हैं? जिनके लाठी लेनेपर पांच सौ आदमी डरके मारे भाग खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाई देंगे ऐसा तो विश्वास नहीं होता! तब अवश्य ही रघुदयालने कोई कसूर किया होगा!"

दोनो ही चिन्तासागरमें निमग्न हैं। दोनो ही किनारा पकड़नेमें असमर्थ है। दोनो ही की छाती फट रही है, पर मुंह किसीका भी नहीं खुलता। इसीसे रमाप्रसाद उठ उठकर रघुदयालकी ओर ताकता था। किन्तु चतुर रघुदयाल उसे उस तरह उठनेके लिये मना करते थे। इस तरह प्रायः बीस मिनट बीत गये।

उनचालीसवां परिच्छेद।

जो दो पहरेवाले हवालतके भीतर बैठे थे, उन लोगोंने लड़कपनमें रघुदयालसे लाठी खेलना सीखा था। रघुदयाल इस समय उन्हें पहचाने अथवा न पहचाने पर वे लोग उन्हें

अच्छी तरह पहचानते हैं। रघुदयालके हजारों चेले हैं। कितने चेले तो ऐसे हैं, जो पहले और किसी उस्तादसे लाठी खेलना सीखकर रघुदयालके पास आये और उससे दोचार दिन लाठी खेलनेकी विद्या सीखकर पक्के हो गये। रघुदयालका नाम इसी तरह मशहूर हो गया था। जब बाहरवाले प्रहरी घोर नींदमें अचेत हो गये,—किसीकी नाक ज़ोरसे बोलने लगी, तब भीतरवाला प्रहरी "कौन है," "क्या है," कहकर ज़ोर ज़ोरसे चिल्ला उठा। इसपर भी किसीकी नींद न टूटी, नाकका बोलना न रुका।

बालक रमाप्रसाद घबराकर बोल उठा,—"कहाँ, हम लोगोंने तो कुछ किया नहीं।"

रघुदयाल एक दृष्टिसे प्रहरीके मुखकी ओर ताकने लगा। उसने हाथ जोड़कर धीरे धीरे कहा,—"गुरुजी! हमें पहचानते हैं?"

रघुदयालने धीरेसे ही कहा,—"बोलो मत। यह छोटी पतली लाठी पड़ी है, उसे लेकर खिड़कीको लगा दीजिये, फिर ठक् ठक् आवाज़ करो। अन्तमें हमसे बातचीत कीजिये।" प्रहरीने रघुदयालकी आज्ञानुसार काम किया, तोभी बाहरवाला कोई प्रहरी न जागा।

प्रहरी फिर रघुदयालके पास जाकर बैठ गया और बोला,— "हमें पहचान लिया तो?"

रघुदयाल। नहीं।

प्रहरी। कैसे पहचान सकोगे। आज प्राय बारह चौदह वर्ष हुए, आपसे हमने लाठी खेलनेकी विद्या सीखी थी।

शामिल होजाता? मालूम होता है, अपराध गुरुतर है खून तो नहीं कर डाला? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है? हमारी समझमें तो कुछ भी नहीं आता!—माजरा क्या है?

रमाप्रसाद सोचने लगा,—"रघुदयालको पकड़ा कैसे? वे तो सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं। अन्यान्य रूपसे झूठा अभियोग खड़ाकरके उन्हें पकड़ना बहुत ही कठिन काम है! तब क्या वे सचमुच ही दोषी हैं?—इसीसे गिरफ्तार हो गये हैं? जिनके लाठी लेनेपर पाच सौ आदमी डरके मारे भाग खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाई देंगे, ऐसा तो विश्वास नहीं होता! तब अवश्य ही रघुदयालने कोई कसूर किया होगा!"

दोनो ही चिन्तासागरमें निमग्न हैं। दोनो ही किनारा पकड़नेमे असमर्थ हैं। दोनो ही की छाती फट रही है, पर मुँह किसीका भी नहीं खुलता। इसीसे रमाप्रसाद उठ उठकर रघुदयालकी ओर ताकता था। किन्तु चतुर रघुदयाल उसे उस तरह उमगनेके लिये मना करते थे। इस तरह प्रायः बीस मिनट बीत गये।

उनचालीसवां परिच्छेद।

जो दो पहरेवाले हवालतके भीतर बैठे थे, उन लोगोंने लड़कपनमें रघुदयालसे लाठी खेलना सीखा था। रघुदयाल इस समय उन्हें पहचाने अथवा न पहचाने, पर वे लोग उन्हें

अच्छी तरह पहचानते हैं। रघुदयालके हजारों चेले हैं। कितने चेले तो ऐसे हैं, जो पहले और किसी उस्तादसे लाठी खेलना सीखकर रघुदयालके पास आये और उससे दोचार दिन लाठी खेलनेकी विद्या सीखकर पक्के हो गये। रघुदयालका नाम इसी तरह मशहूर हो गया था। जब बाहरवाले प्रहरी घोर नींदमें अचेत हो गये,—किसीकी नाक जोरसे बोलने लगी, तब भीतरवाला प्रहरी "कौन है," "क्या है," कहकर खूब जोरसे चिल्ला उठा। इतनेपर भी किसीकी नींद न टूटी, नाकका बोलना न रुका।

बालक हमाप्रसाद घबराकर बोल उठा,—"कहाँ, हम लोगोंने तो कुछ किया नहीं।"

रघुदयाल एक दृष्टिसे प्रहरीने सरतकी ओर ताकने लगा। उसने हाथ जोड़कर धीरे धीरे कहा,—"गुरुजी। हमें पह चानते हैं?"

रघुदयालने धीरेसे ही कहा,—"बोलो मत। यह छोटी पतली लाठी पड़ी है, उसे लेकर खिड़कीसे लगा दीजिये, फिर ठक ठक् आवाज करो। अन्तमें हमसे बातचीत कीजिये।" प्रहरीने रघुदयालकी आज्ञानुसार काम किया, तोभी बाहरका कोई प्रहरी न जागा।

प्रहरी फिर रघुदयालके पास जाकर बैठ गया और बोला,— "हमें पहचान लिया तो?"

रघुदयाल। नहीं।

प्रहरी। कैसे पहचान सकेंगे। आज प्राय बारह चौदह वर्ष हुए, आपसे हमने लाठी खेलनेकी विद्या सीखी थी।

धामिन होजाता? मालूम होता है, अपराध गुरुतर है खून तो नहीं कर डाला? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है! हमारी समझमेंतो कुछ भी नहीं आता।—मानरा क्या है?

रमाप्रसाद सोचने लगा,—"रघुदयालको पकड़ा कैसे? वे तो सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं। अन्यान्य रूपसे भूठा अभियोग खड़ाकरके उन्हें पकड़ना बहुत ही कठिन काम है! तब क्या वे सचमुच ही दोषी हैं?—इसीसे गिरफ्तार हो गये हैं? जिनके लाठी लेनेपर पांच सौ आदमी डरके मारे भाग खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाई देंगे ऐसा तो विश्वास नहीं होता। तब अवश्य ही रघुदयालने कोई कसूर किया होगा!"

दोनो ही चिन्तासागरमें निमग्न हैं। दोनो ही किनारा पकड़नेमें असमर्थ हैं। दोनो ही की छाती फट रही है, पर मुंह किसीका भी नहीं खुलता। इसीसे रमाप्रसाद उठ उठकर रघुदयालकी ओर ताकता था। किन्तु चतुर रघुदयाल उसे उस तरह उठनेके लिये मना करते थे। इस तरह प्रायः बीस मिनट बीत गये।



उनचालीसवां परिच्छेद।

जो दो पहरेवाले हवालातके भीतर बैठे थे, उन लोगोंने लड़कपनमें रघुदयालसे लाठी खेलना सीखा था। रघुदयाल इस समय उन्हें पहचानें अथवा न पहचानें, पर ये लोग उन्हें

आपने डाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्म्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाना भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व्व महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी। उपाय ठीक करने होके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने होके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बगलमें जो लड़का बन्धा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—"किस कारणसे यह लड़का थाना हाजतमें आया है ?"

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे थानेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—"यह थाना अनेक समय यमका दक्षिण-द्वारस्वरूप बन जाता है। यहां दो एक दिन रहनेपर आप लोगोंके प्राण जानेकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।' उस दिन आपने दूध मीठा खिलाकर हमें विदा किया था। गुरुजी! आपका ऋण चुकनेका नहीं।

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है?

प्रहरी। यहां लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहां है?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेंगे? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान बर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो?

प्रहरी। गुरुजी! क्षमा कीजियेगा। आपने क्या मुझे पहचान लिया?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तो भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना परिचय दिया। गुरुजी बोले;—"प्राण शीतल हुए।" फिर उन्होंने कहा,—"आपकी ऐसी अवस्था क्यों है? आप सच्छिशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं?

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेसे पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चोरीका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ है।

आपने हाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाना भी दुर्लभ है। यह क्या? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व्व महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे काम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है?

प्रहरी। उपाय ठीक करने होके लिये हम और हमारे मित्र लगा रहे हैं। आपकी रक्षा करने होके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बगलमें जो लड़का पड़ा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—"किस कारणमें यह लड़का आज हाजतमें आया है?"

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे आनेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—"यह थाना अनेक समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहां दो एक दिन रहनेपर आप और बालकके प्राण जानेकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।' उस दिन आपने दूध मीठा खिला कर हमें विदा किया था। गुरुजी! आपका ऋण चुकानेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है?

प्रहरी। यहां लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहां है?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेंगे? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान वर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो?

प्रहरी। गुरुजी। क्षमा कीजियेगा। आपने क्या मुझे पहचान लिया?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पदरज दिया। गुरुजी बोले,— प्राण शीतल हुए।" फिर उन्होंने कहा,—"आपकी ऐसी अवस्था क्यों है? आप सम्भ्रान्तशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं?

प्रहरी। गुरुजी! अपनी कहानी कहनेके पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चोरीका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्म्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाना भी दुर्लभ है। यह क्या? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे काम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है?

प्रहरी। उपाय ठीक करने होके लिये हम और हमारे मित्र लाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने होके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बगलमें जो लड़का पड़ा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—"किस कारणसे यह लड़का यहां हालतमें आया है?"

रघुदयाल। वह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे आनेपर वह आया है।

प्रहरीने कहा,—"यह थाना ग्योक्क समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहां दो एक दिन रहनेपर आप और बालकके प्राण जानेकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।" उस दिन आपने दूध मीठा खिला-कर हमें बिदा किया था। गुरुजी। आपका ऋण चुकनेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है?

प्रहरी। यहां लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहां है?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेंगे? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान बर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो?

प्रहरी। गुरुजी। क्षमा कीजियेगा। आपने क्या मुझे पहचान लिया?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तो भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेकी कहा। गणेशने गुरुजीको आपना मस्तक दिया। गुरुजी बोले,—"प्राण शीतल हुए।" फिर उन्होंने कहा,—"आपकी ऐसी अवस्था क्यों है? आप सम्पत्तिशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं?"

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेके पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चोरोंका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाना भी दुर्लभ है। यह क्या? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है?

प्रहरी। उपाय ठीक करने होके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने होके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बालमें जो लडका पडा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—"किस कारणमें यह लडका आज हाजतमें आया है?"

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे आनेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—"यह थाना अनेक समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहां दो एक दिन रहनेपर आप और बालकके प्राण जानेकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।" उस दिन आपने दूध मीठा खिलाकर हमें बिदा किया था। गुरुजी। आपका ऋण्य चुकानेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है?

प्रहरी। यहां लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहां है?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेंगे? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान बर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो?

प्रहरी। गुरुजी। क्षमा कीजियेगा। आपने क्या मुझे पहचान लिया?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो?

गणेश चौकीदारके जोड़ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना प्रणाम दिया। गुरुजी बोले,—"प्राण शीतल हुए।" फिर उन्होंने कहा,—"आपकी ऐसी अवस्था क्यों है? आप सद्विद्याशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं?

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेके पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चोरीका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप वालिके गोय हैं नहीं, पर आप जैसा धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाना भी दुर्लभ है। यह क्या? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व महाभारत है!—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है?

प्रहरी। उपाय ठीक करने होके लिये हम और हमारे मित्र लाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने होके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बगलमें जो लड़का पड़ा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—"किस कसूरमें यह लड़का आज हालतमें आया है?"

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे आनेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा—"यह थाना अनेक समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहां दो एक दिन रहनेपर आप और बालकके प्राण जानेका आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।" उस दिन आपने दूध मीठा खिला कर हमें बिदा किया था। गुरुजी। आपका ऋण चुकानेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है?

प्रहरी। यहां लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहां है?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेंगे? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान वर्द्धमान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो?

प्रहरी। गुरुजी। क्षमा कीजियेगा। आपने क्या मुझे पहचान लिया?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तो भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना परिचय दिया। गुरुजी बोले,—"प्राण शीतल हुए। फिर उन्होंने कहा,—"आपकी ऐसी अवस्था क्यों है? आप सम्वृद्धिशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्म्ममें प्रवृत्त क्यों हैं?"

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेके पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चोरीका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ है।